कृपया यह ग्रन्थ नीचे निर्देशित तिथि के पूर्व अथवा उक्त तिथि तक वापस कर दें। विलम्ब से लौटाने पर प्रतिदिन दस पैसे विलम्ब शुल्क देना होगा।

हम्मीररासो

काशी नागरीप्रचारिणी सभा

नागरीप्रचारिणी-ग्रंथमाला ११

हम्मीररासो

[कवि जोधराज कृत]

संपादक

श्यामसुंदर दास बी० ए०

तृतीय संस्करण, १०००
सं० २००५

प्रकाशक—
नागरीप्रचारिणी सभा
काशी

मूल्य
दो रुपये चार आने

मुद्रक—
सूर्य प्रेस
बनारस

तृतीय संस्करण का वक्तव्य

सभा द्वारा जोधराजकृत 'हम्मीररासो' का प्रथम संस्करण संवत् १९६५ में प्रकाशित हुआ था। उसमें मूल के अतिरिक्त पादटिप्पणी में कुछ पाठांतर भी दिए गए थे। ग्रंथ किस हस्तलेख के आधार पर संपादित किया गया और पाठांतर देने में किस दूसरे हस्तलेख से सहायता ली गई इसका उल्लेख ग्रंथ के संपादक स्वर्गीय बाबू श्यामसुंदरदास जी ने अपनी भूमिका में नहीं किया है। वहाँ इतना ही संकेत है कि कुँअर कृष्णसिंह जी वर्मा से यह काव्य प्राप्त हुआ था। 'खोज' में हम्मीररासो का कोई हस्तलेख आज तक नहीं मिला। सभा के आर्यभाषा-पुस्तकालय में अलबत्त एक आधुनिक हस्तलेख है जो सं० १८६४ की 'असल प्रति' की अनुलिपि है और संवत् १९६१ में प्रस्तुत हुआ है। सभा से हम्मीररासो का प्रथम संस्करण इस अनुलिपि के चार वर्ष बाद प्रकाशित हुआ। अतः उसके संपादन के लिये ही कदाचित् यह अनुलिपि कराई गई होगी और इसका उपयोग भी किया गया होगा। फिर भी इस अनुलिपि में अनेक पाठांतर मिलते हैं और एकाध स्थल पर कुछ पंक्तियाँ भी अधिक हैं। इसमें दो पृष्ठ (१७५-१७६) नहीं है, पूरी अनुलिपि १७६ पृष्ठों में समाप्त हुई है।

प्रथम संस्करण में एकरूपता नहीं थी। कुछ ऐसे कठिन शब्द भी थे जिनका अर्थ देना आवश्यक जान पड़ा। अतः इस संस्करण (तृतीय आवृत्ति) में यह पूर्ति कर दी गई है। यह कार्य बहुत मनोयोगपूर्वक संपन्न किया है 'नागरीप्रचारिणी पत्रिका' के सहायक संपादक श्री शिवनाथ, एम्० ए० ने जो नई पीढ़ी के अच्छे आलोचक हैं। जोधराज ने यह ग्रंथ सं० १७८५ में प्रस्तुत किया था। यह हिंदी-साहित्य का रीतिकाल या शृंगारकाल था। 'रासो' ग्रंथों की परंपरा अपभ्रंशकाल की है। जैन अपभ्रंश में 'रास' नाम के अनेक

ग्रंथ मिलते हैं। रासो, रास या रासा संस्कृत के 'रासक' शब्द से बने हैं जिसका अर्थ 'काव्य' होता है। अपभ्रंश में 'रासक' लिखने की प्रथा बहुत थी। भारतीय विद्याभवन बंबई से अद्दहमान (अब्दुर्रहमान) का जो 'संदेशरासक' प्रकाशित हुआ है उससे प्रमाणित है कि देशभाषा अपभ्रंश की प्राचीन परंपरा वैसी ही भेद-भावशून्य थी जैसी हिंदी की आधुनिक काल के पूर्व तक रही है। अपने को 'मिच्छ' (म्लेच्छ) देश (वर्तमान सीमाप्रांत) का निवासी बतलाते हुए कवि ने बड़ी विनय से ग्रंथ का आरंभ किया है।

हिंदी में 'रासो' शब्द चल पड़ा है, पर खड़ी बोली हिंदी के गद्य में उसका रूप 'रासा' ही होना चाहिए। अभी तक यह शब्द अनुमित संस्कृत शब्दों के साथ जोड़ा जाता रहा है! आश्चर्य की बात ८ कि 'पृथ्वीराजरासा' के हस्तलेखों की पुष्पिकाओं में प्रयुक्त होने पर भी 'रासक' शब्द की ओर विद्वानों का ध्यान नहीं गया। प्रस्तुत ग्रंथ का गतानुगतिक नाम 'हम्मीररासो' ही है। मूल पाठों की एकरूपता के लिये पुराने हस्तलेखों के व्यवहार-बाहुल्य के आधार पर 'वर्तनी' रखी गई है। पाठ-संपादन में पूर्वोक्त अनुलिपि का ही सहारा रहा है। पर अनुलिपिकर्ता ने उतनी सावधानी से कार्य नहीं किया जितनी ऐसे ग्रंथ के लिये अपेक्षित थी। प्राचीन हस्तलेखों में 'वर्तनी' अनेक प्रकार की मिलती है। इसके कारण देशभेद, कालभेद, भाषाभेद आदि हैं। राजपूताने और अवध प्रांत के हस्तलेखों में, सोलहवीं शताब्दी और अठारहवीं शताब्दी के हस्तलेखों में तथा बुंदेली और भोजपुरी जनपदों में मिले हस्तलेखों में 'वर्तनी' का अंतर बहुत है। कवि अपने समय तक विकसित रूपों के साथ ही काव्य-परंपरा में व्यवहृत रूपों को भी बनाए रहते हैं। इसलिये जब तक कवि के हाथ को ही लिखा कोई हस्तलेख न मिले तब तक किसी प्रामाणिक हस्तलेख का ही आधार मानकर 'वर्तनी' रखी जा सकती है और उस समय के प्रचलन आदि के अनुमान पर ही पाठों का संपादन किया जा सकता है। प्राचीन हस्तलेखों में 'न'

और 'म' के पूर्व का आकार प्रायः सानुनासिक ही रखा गया है, जैसे थाँम, बाँन आदि मे । क्रियापदों, कृदंतों, विभक्ति-चिह्नों में ओकारांत, औकारांत दोनों का घालमेल है। इसका कारण यह है कि काव्यभाषा 'ब्रज' का उच्चारण ऐसे मध्यस्थल का उच्चारण है जिसके पश्चिम ओ की प्रवृत्ति है और जिसके पूर्व औ की। विचार करने पर दिखाई देता है कि इसका प्रभाव भिन्न भिन्न शब्दों पर पृथक् पृथक् पड़ा है। क्रियापदों में तो औकार की ओर झुकाव है पर संज्ञा-शब्दों में आकार की ओर। अनुलिपि से संगति बैठाते हुए इसी नियम का पालन किया गया है।

'रासा' ग्रंथों में राजस्थानी के प्रभाव के कारण 'व'-बहुला और 'ण'-बहुला प्रवृत्ति है। इनमें से 'व' की प्रवृत्ति ब्रज के अनुकूल नहीं है इससे उसमें यथास्थान 'ब' का ही व्यवहार किया गया है, पर 'ण' रहने दिया गया है—पारंपरिक रूपों के ग्रहण का विचार करके। विभिन्न प्रदेशों, समयों, कवियों, उपभाषाओं के प्राचीन ग्रंथों के संपादन में कैसी 'वर्तनी' रखी जाय इसका विस्तृत विवेचन अपेक्षित है और इसपर स्वतंत्र निबंध क्या पुस्तिका लिखने की आवश्यकता है। खोज-विभाग के प्राचीन हस्तलेखों का आलोड़न और विवरणों के अनुशीलन से पता चलता है कि पूरबी, पछाहीं आदि कई शैलियाँ हैं। इसका अनुसंधान अपेक्षित है। अतः प्रस्तुत संस्करण में एकरूपता लाने के लिये जिस वर्तनी का व्यवहार किया गया है उसका विस्तार करने की यहाँ कोई विशेष आवश्यकता नहीं। यह संस्करण संपादन की थोड़ी सामग्री के होते हुए भी जहाँ तक हो सका है उपयोगी बना दिया गया है। द्वितीय आवृत्ति बहुत दिनों पूर्व समाप्त हो गई थी। इस आवृत्ति के प्रकाशित होने में कुछ देर सुसंपादन के कारण ही हुई है। आशा है कि यह संस्करण विशेष लाभदायक प्रतीत होगा।

वासंतिक नवरात्र }
सं० २००५ वि० }

विश्वनाथप्रसाद मिश्र
(साहित्य-मंत्री)

भूमिका

यह ऐतिहासिक काव्य कवि जोधराज का बनाया हुआ है। नीमराणा के राजा चंद्रभान की आज्ञा से जोधराज ने इस काव्य को संवत् १७८५ में रचा। इसमें रणथंभौर के वीरशिरोमणि महाराज हम्मीरदेव का चरित्र और विशेष कर अलाउद्दीन के साथ उनके विग्रह का वर्णन है। भारतवर्ष के इतिहास में हम्मीर का नाम प्रसिद्ध है और उसके चरित्र को पढ़ और सुनकर लोग अब तक मनोमुग्ध और उत्साहित होते हैं। कवियों और लेखकों ने भी उसके चरित्र का गान करने में कोई बात उठा नहीं रखी है। अब तक कविता में इस विषय के तीन ग्रंथ प्राप्त हुए हैं। एक तो चंद्रशेखर का हम्मीर-हठ है जो छपकर प्रकाशित हो चुका है। दूसरा ग्वाल कवि का ग्रंथ है जो अब तक छपा नहीं। उसकी कविता-शैली भी ऐसी उत्तम नहीं है। तीसरा ग्रंथ यह जोधराज का है। और भी अनेक ग्रंथ इस विषय के होंगे, इसमें कोई संदेह नहीं। गद्य में भी अनेक ग्रंथ लिखे गए हैं परंतु दुःख के साथ कहना पड़ता है कि उनमें ऐतिहासिक खोज का बहुत कुछ अभाव देख पड़ता है। राजपूताने में दो हम्मीर हो गए हैं। एक उदयपुर के और दूसरे रणथंभौर के। लेखकों ने प्रायः दोनों के चरित्रों को मिलाकर एक कर डाला है और इसी भ्रम में पड़कर इतिहास के विरुद्ध बातें लिख डाली हैं। जिन हम्मीर की इतनी प्रसिद्धि है और जिनके गुण गाने से अब तक लोग उत्साहित होते हैं तथा जिन्होंने अलाउद्दीन से रार ठानी थी वे रण-थंभौर के चौहान थे; न कि उदयपुर के सिसौदिया हम्मीर। अतएव इस काव्य के विषय में कुछ लिखने के पहले अथवा इसके संबंध की ऐतिहासिक बातों का उल्लेख करने के पहले मैं जोधराज कृत इस काव्य में चौहान हम्मीर का जो कुछ चरित्र वर्णन किया गया है उसे

दे देना उचित समझता हूँ। इस सारांश के लिये, जो आगे दिया जाता है, मैं कुँवर कन्हैया जी का अनुगृहीत हूँ।

भारतवर्ष के अंतिम सम्राट् भृगु[१] कुलोत्पन्न महाराज पृथ्वीराज के वंश में चंद्रभान नाम का एक वीर पुरुष था। यद्यपि नीमराणा अब एक छोटी सी रियासत अलवर राज्य के अंतर्गत है, पर यहाँ के अधिपति चौहानों के मुकुटमणि माने जाते हैं। ये राजा अपने को महाराज पृथ्वीराज का वंशधर बताते हैं। महाराज चंद्रभान को उनके वीरत्व, दातृत्व, औदार्य्य, पराक्रम, बुद्धिमत्ता और सर्वप्रियता के कारण लोग राठ[२] का महाराज कहा करते थे, और सब लोग उसी भाँति उसका आदर भी करते थे। उक्त चंद्रभान के दरबार में आदि गौड़-कुलोत्पन्न अत्रिगोत्रीय ब्राह्मण, बालकृष्ण का पुत्र जोधराज था। इस वंश के लोग डिडवरिया राव कहे जाते थे।

एक समय चंद्रभान ने जोधराज से हम्मीररासो के सुनने की इच्छा प्रकट की और कहा कि इस काव्य में महाराज हम्मीर की वंशावली, उनका अलाउद्दीन से वैर, उनकी वीरता और उनके युद्ध-कौशल इत्यादि का यथाक्रम संक्षेप में वर्णन होना चाहिए। तब जोधराज ने इस काव्य "हम्मीर रासो" की रचना की।

सृष्टिरचना—प्रथम कल्प के आदि में संसार रूपी उपवन के जीव-निर्जीव, प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष सब पदार्थ वीर्य्यस्वरूप से उस परम प्रभु परमात्मा अनादि जगदीश्वर के स्वरूप में स्थित थे और वह प्रभु योगनिद्रा में निमग्न था। एक समय वह अपनी शक्ति का आप ज्ञान करके निद्रा से उठा और उसके इच्छा करते ही माया उत्पन्न

---

१ चहुआनों के भृगुवंशी होने का वर्णन आगे इसी पुस्तक में है।

२ पुस्तक में मूल पाठ "राठ पतिशाह" है जिसका अर्थ "राठ का बादशाह" होता है। 'राठ' उस भूभाग का नाम है जो अलवर और जयपुर राज्य के बीच में है और जहाँ नीमराणा राज्य स्थित है।

हुई। जिस समय शेषशायी भगवान् के नाभि-कमल से ब्रह्मा उत्पन्न हुए वह वाराह कल्प का आदि था।

मानवसृष्टि—जलज से उत्पन्न हुआ ब्रह्मा बहुत समय पर्य्यंत इसी विचार में मुग्ध रहा कि मैं क्या करूँ। इसी प्रकार जब बहुत समय बीत गया तब उसे आपसे आप अनुभव हुआ कि तप करके सृष्टि उत्पन्न करनी चाहिए और उसने वैसा ही किया। पहले तो उसने अप, तेज, वायु, पृथ्वी, आकाशादि पंच महातत्त्वों की रचना की, तदनंतर बीज वृक्षादि जड़ वस्तुओं की रचना करके उसने सनक, सनंदन, सनत्कुमारादि चार पुत्र रचकर मानव जाति की वृद्धि करनी चाही; किंतु जब सनकादि कुमारों ने अखंड ब्रह्मचर्य्य धारण कर सांसारिक विषय-भोगादि से अरुचि प्रगट की तब ब्रह्मा ने उसी प्रकार से अन्यान्य मुनिवरों को उत्पन्न किया। ब्रह्मा के मन से मरीचि, कानों से पुलस्त्य, नाभि से पुलह, हाथों से क्रतब्रह्म, त्वचा से नारद, छाया से कर्दम, पीठ से अद्धर्म, कंठ से धर्म्म और ओष्ठ से लोम ऋषि उत्पन्न हुए। इन्हीं ऋषियों से मनुष्यों की भिन्न भिन्न जातियों की वृद्धि हुई।

चंद्रवंश और सूर्य्यवंश—ब्रह्मा के पुत्र मरीचि के १३ स्त्रियाँ थीं जिनमें से एक का नाम कला था। कला के कश्यप और धर्म दो पुत्र हुए। अत्रि ऋषि के तीन पुत्र हुए जिनमें से बड़े का नाम सोम था और कनिष्ठ का नाम दुर्वासा। उक्त सोम का पुत्र बुध और बुध का पुत्र पुरुरवा हुआ। इस पुरुरवा के ६ पुत्र हुए जिनसे चन्द्रवंशियों के ६ कुल प्रख्यात हैं।

इसी प्रकार भृगु मुनि से चहुआन क्षत्रियों का वंश चला जिसका वर्णन इस प्रकार से है कि भृगु मुनि को पहली स्त्री से धाता और विधाता नाम के उनके दो पुत्र हुए। भृगु की दूसरी स्त्री से दैत्यगुरु का और च्यवन ऋषि का जन्म हुआ। च्यवन के ऋचीक, इनके जमदग्नि और जमदग्नि के परशुराम नामक अति बलिष्ठ पुत्र हुए जिन्होंने क्षात्र धर्म्म से च्युत विषयलोलुप सहस्रों क्षत्रिय राजाओं

को मारकर उनका वंश पर्य्यंत नाश कर डाला और उनके रुधिर से पितृ-देवताओं का तर्पण किया। इस प्रकार परशुराम के पराक्रम से प्रसन्न हुए पितृ-देवताओं ने परशुराम को शांत होकर तप करने की आज्ञा दी।

आबूराज पर्वत पर यज्ञ और चहुआनों की उत्पत्ति—इधर सृष्टि के शासनकर्ता क्षत्रियों के समूल उन्मूल हो जाने से जब परस्पर अन्याय आचरण के कारण प्रजा पीड़ित हो उठी और दैत्य और राक्षसों के उपद्रव से ऋषि लोगों के यज्ञादि कर्मों में भी विघ्न पड़ने लगा तब ऋषिगण संसार की रक्षा और उसके उचित शासन के निमित्त फिर क्षत्रियों के उत्पन्न करने की अभिलाषा से यज्ञ करना विचारकर अर्बुदगिरि अर्थात् आबू के पहाड़ पर गए। वहाँ पर सब ऋषियों ने शिव की आराधना की। तब शिव ने भी वहाँ आकर मुनिवरों की प्रार्थना स्वीकार की और वे उक्त पर्व्वत पर अचल रूप से विराजमान हुए; अस्तु तब मुनिवरों ने भी सुंदर वेदिका रचकर यज्ञ-कर्म्म आरंभ किया। इस यज्ञ में द्वैपायन, वशिष्ठ, लोम, दालिभ, जैमिनि, हर्षन, धौम्य, भृगु, घटयोनि, कौशिक, वत्स, मुद्गल, उद्दालक, मातंग, पुलह, अत्रि, गौतम, गर्ग, शांडिल्य, भरद्वाज, जावालि, मारकंडेय, जरत्कारु, जाजुल्य, पराशर, च्यवन और पिप्पलाद आदि मुनियों का समारोह हुआ था। इसके अतिरिक्त शिव और ब्रह्मा भी स्वयं वहाँ उपस्थित थे। इस प्रकार समुचित प्रकार से जिस समय यज्ञ हो रहा था और वेदिका से उत्पन्न हुई अग्निशिखाएँ आकाश को स्पर्श कर रही थीं, उसी समय उस वेदिका में से चालुक्य, प्रमार और परिहार क्षत्रिय क्रम से निकले। इन्होंने मुनिवरों की आज्ञा पा दैत्यों से युद्ध भी किया; किंतु उन्हें परास्त करने में वे समर्थ न हो सके। तब ऋषियों ने उक्त यज्ञस्थल को त्यागकर उसी पहाड़ पर नैऋत दिशा में दूसरा अग्निकुंड निर्माण किया। इस बेर के यज्ञ में ब्रह्मा ने ब्रह्मा, भृगु मुनि ने होता, वशिष्ठ ने आचार्य्य, वत्स ने ऋत्विक और परशुराम ने यजमान का कार्य्य संपादन किया।

निदान इस यज्ञ से जो अग्नि के समान तेजवाला पुरुष उत्पन्न हुआ उसका नाम चहुआन जी हुआ; क्योंकि इनके चार बाहु थे और प्रत्येक बाहु खड्ग, धनुष, शूल और चक्र इन चारों आयुधों को धारण किए हुए था। इस पुरुष ने ऋषिवरों के आशीर्वाद और निज कुलदेवी आशापूरा के प्रसाद से संपूर्ण दैत्यों का वध कर ऋषि और देवताओं को प्रसन्न किया।

कथामुख—इस प्रकार यज्ञकुंड से उत्पन्न चहुआन जी के वंश में बहुत दिनों पीछे विक्रमीय १२वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध के आरंभ में राव जैतराव चहुआन जन्मे। एक समय जैतराव जंगल में शिकार खेलने गए। वहाँ उन्होंने एक बलवान् बाराह को देखकर उसके पीछे घोड़ा डाल दिया। बहुत दूर निकल जाने पर एक गंभीर वन में बाराह तो अदृष्ट हो गया और राव जी संगी साथियों से छूटकर चकित चित्त अकेले उस वन में भटकते फिरने लगे। ऐसे समय में वहाँ उन्हें एक ऋषि का आश्रम देख पड़ा। वहाँ जाकर वे देखते क्या हैं कि परम रमणीय पर्णकुटी में कुशासन पर बैठे हुए पद्म ऋषि जी ध्यान में मग्न हैं। राव जी ने उनके निकट जाकर साष्टांग प्रणाम किया और उनके दर्शन से अपने को कृतार्थ जानकर वे उनकी स्तुति करने लगे। निदान तब ऋषि ने भी प्रसन्न होकर राव जी को आशीर्वाद दिया, और कुछ दिवस पर्य्यंत उसी स्थान पर रहकर उन्हें शिवार्चन करने का भी उपदेश दिया। राव जी ने वैसा ही करके शिव को प्रसन्न किया। तब ऋषि ने पुनः आज्ञा दी कि राव जी तुम यहाँ एक गढ़ भी निर्माण करो। अस्तु राव जी ने उसी समय अपने मित्र, मंत्री और सुहृदों को बुलाकर संवत् १११० वैशाख सुदी अक्षय तृतीया, शनिवार को पाँच घटी सूर्य्योदय में रणथंभगढ़ की नींव डाली और उसी के उपस्थ में एक रमणीक नगर भी बसाया।

ऋषि का तप भंग होना—उस पर्वतावेष्टित प्रच्छन्न एवं दृढ़ दुर्ग की रम्य भूमि को पद्म ऋषि ने राव जी से अपने रहने के लिये

माँग लिया और उसी में रहकर वे तप करने लगे। जब उनके उग्र

एवं पवित्र तप की सूचना इंद्र को मिली तब भीरुहृदय इंद्र ने अपने श्रीभ्रष्ट होने के भय से आशंकित होकर पद्म ऋषि का तप भ्रष्ट करना चाहा और इसीलिये उसने इस कर्म के लिये कुकर्मी-मकरकेतु को उपयुक्त जानकर उसे आज्ञा दी कि हे मित्र, तू अपने सच्चे सहचर बसंत के सहित जाकर रणथंभ गढ़ में तप करते हुए तेजस्वी पद्म ऋषि की श्री नष्ट कर दे। इस प्रकार इंद्र से उत्तेजित किया हुआ कामदेव अपनी सहकारी षड् ऋतुओं सहित रणथंभ गढ़ में ध्यानमग्न पद्म ऋषि को जाग्रत करने की इच्छा से ऋतुओं के उपचार का प्रयोग करने लगा, किंतु ग्रीष्म का प्रचंड मार्तंड और मलय समीर, पावस के पपीहा, शरद की स्वच्छ चाँदनी, शिशिर के दुशाला और हेमंत के पाला को पराजित करनेवाले मसाले भी जब ऋषि की समाधि भंग न कर सके, तब उस कुसुमायुध ने साक्षात् शिव को रसिक बनानेवाले वसंत का प्रयोग किया अर्थात् उस जनशून्य वन में नाना प्रकार के पुष्प प्रस्फुटित हुए और उनपर मधुप गुंजार करते हुए आनंद से मकरंद पान करने लगे, जहाँ तहाँ नाना वर्ण के पक्षी-सावक कलरव करते हुए कल्लोल करने लगे। उसी समय इंद्र द्वारा प्रेरित अप्सराओं ने आकर नृत्य और गान करते हुए उस शिखरशैली को इंद्र का अखाड़ा बना दिया, तब उपयुक्त समय जानकर कामदेव ने भी अपने शरों से मुनिवर के शरीर को बेध दिया। इस प्रकार समाधि भंग होने पर जब मुनि ने आँख उठाकर देखा तो देखते क्या हैं कि उस रणथंभ के अभेद्य दुर्ग में शांत रस को पराजित कर शृंगार रस ने पूर्णतया अपना अधिकार जमा लिया है और एक चंद्रमुखी मृगलोचनी, गयंद-गामिनी, नवयौवना सन्मुख खड़ी हुई मुनि की ओर कटाक्ष-सहित देख रही है। यह देखकर पद्म ऋषि के शरीर से शांति और तप इस प्रकार बिदा हो गए जैसे तुषारतोषित वृक्ष सुकोमल पल्लवों को त्याग देते हैं, एवं जिस प्रकार फल के लगते ही वृक्षगण सूखे पुष्प का अनादर कर देते हैं। इस प्रकार कामातुर होकर पद्म ऋषि समाधि छोड़ सुंदरी

का आलिंगन करने को उत्सुक हो उठे। उधर उस रमणी ने भी ऋषि के मनोगत भाव को जानकर उनका हाथ पकड़ लिया और तब वे दोनों आनंद से रस-क्रीड़ा करने लगे।

पद्म ऋषि का शोक और शरीरत्याग—इस प्रकार जब अधिक समय व्यतीत हो गया तब सुंदरी तो अंतर्हित होकर स्वर्ग को चली गई और पद्म ऋषि की भी मोहनिद्रा खुली। तब वे मन ही मन विचार और पश्चात्ताप करके विलाप करते हुए आप ही आप कहने लगे—हाय! मैं कैसा दुर्बुद्धि हूँ कि मैंने क्षणिक सुख के लिये अपना सर्वनाश किया और फिर भी जिसके लिये सर्वस्व का त्याग किया वह भी पास नहीं। हा! यह मैंने अब जाना कि पाप का परिणाम केवल संताप होता है और संतप्तहृदय मनुष्य जो कुछ कर डाले सब थोड़ा है। हाय, मैं तप से भी गया, भोग से भी गया, अब मैं इस शरीर को रखकर क्या करूँ? इस प्रकार शोकातुर होकर मुनि ने एक वेदिका रचकर उसमें अपने शरीर के पाँच खंड करके होम कर दिए। जिस समय पद्म ऋषि ने शरीर त्याग किया उस दिन माघ शुक्ल १२ सोमवार आर्द्रा नक्षत्र था। पद्म ऋषि के मस्तक से अलाउद्दीन बादशाह, वक्षस्थल से राव हम्मीर, भुजाओं से महिमा-शाह और मीर गभरू, चरणों से उर्वसी अर्थात् अलाउद्दीन की उस बेगम का अवतार हुआ जो कि इस आख्यान की नायिका है।

हम्मीर का जन्म—पद्म ऋषि के उपर्युक्त रीति से शरीर त्यागने के पश्चात् अर्थात् संवत् ११४१, शाका १००६ दक्षिणायन शरद ऋतु कार्तिक शुक्ला १२ रविवार को उत्तरभाद्रपद नक्षत्र में उक्त रणथंभ गढ़ के चहुआन राव जैतराव जी के हम्मीर नाम का एक पुत्र जन्मा। पुत्र का प्रफुल्लित मुख देखकर जैतराव के आनंद का ठिकाना न रहा। उन्होंने ज्योतिषियों को बुलाकर लग्न-कुंडली बनवाई। सहस्रों ब्राह्मणों, भिक्षुकों और वंदीजनों को यथायोग्य संमान सहित अन्नदान, गोदान, हेमदान, गजदान देकर सबको संतुष्ट किया गया।

जिस समय रणथंभ गढ़ में हम्मीर का जन्म हुआ उसी समय गजनी में शहाबुद्दीन के पुत्र अलाउद्दीन का तथा मीणा के घर महिमा मंगोल दोनों भाइयों का और गभरू के घर उक्त स्त्री का अवतार हुआ।

हम्मीर और अलाउद्दीनशाह का बैर—एक समय वसंत ऋतु के आरंभ में अलाउद्दीन ने सहस्रों सैनिक और अमीर उमराओं तथा बेगमों को साथ लेकर शिकार के लिये यात्रा की। उसने एक परम रमणीक वन प्रांत में शिविर लगवा दिए और वह उसी वन में इतस्ततः आखेट करके जंगली जंतुओं के प्राण संहार करने लगा। इसी प्रकार जब वसंत का अंत होकर ग्रीष्म के आतप से भूमि उत्तापित हो रही थी, अलाउद्दीन सब सर्दारों सहित शिकार खेलने चला गया। इधर बेगमें भी अपनी सखी सहेलो और अगनित खोजाओं को लेकर एक कमलवन-संपन्न निर्मल सरोवर पर जाकर जलक्रीड़ा करने लगीं। दैवयोग से उसी समय सहसा वायु का वेग बढ़ते बढ़ते इतना प्रचंड हो गया कि बड़े बड़े मेघस्पर्शी वृक्ष टूट-टूटकर गिरने लगे; धूलि के आकाश में आच्छादित हो जाने के कारण घोर अंधकार छा गया। इस आकस्मिक घटना से भयभीत होकर सब लोग तीन तेरह होकर अपने अपने प्राणों की रक्षा करने के लिये जहाँ तहाँ भागने लगे, जलक्रीड़ा करती हुई बेगमों में से "रूपविचित्रा" नामक एक बेगम जो कि स्वरूप और गुण में सब बेगमों से श्रेष्ठ थी, भटककर एक ऐसे निर्जन प्रांत में जा पहुँची जहाँ हिंसक जंतुओं के भीषण नाद के सिवाय अन्य शब्द ही न सुन पड़ता था। जिस समय रूपविचित्रा भय एवं शीत के कारण थर थर काँपती हुई प्राणरक्षा के लिये ईश्वर का स्मरण कर रही थी उसी समय महिमा मीर वहाँ आ पहुँचा। जब उसे पूछने पर ज्ञात हुआ कि उक्त स्त्री बादशाह की बेगम है, तब उसने उसे घोड़े पर बैठालकर शिविर में ले जाने का आग्रह किया। इसपर रूपविचित्रा ने मीर महिमाशाह को धन्यवाद देकर कहा कि इस समय मेरा शरीर शीत

से अधिक व्याकुल हो रहा है, इसलिये तू आलिंगन से मुझे संतुष्ट कर। इसपर महिमाशाह ने उत्तर दिया कि एक तो मैं किसी भी पराई स्त्री को अपनी भगिनीवत् मानता हूँ तिसपर आप मेरे स्वामी की स्त्री हैं इसलिये आप मेरी माता समान हैं अतएव मैं यह अकर्तव्य एवं पाप कर्म करने को कदापि सहमत नहीं हूँ। तब रूपविचित्रा ने पुनः उत्तर दिया कि क्या आप यह नहीं जानते कि अपने मुख से माँगती हुई स्त्री को रति-दान न देना भी तो एक ऐसा पाप है कि जिसका कोई प्रायश्चित्त है ही नहीं, और हे वीर युवक, तेरे रूप और गुणों की प्रशंसा पर मोहित हुआ मेरा मन तेरे लिये बहुत दिनों से व्याकुल है। भाग्यवश आज यह संयोग प्राप्त हुआ है। बेगम को ऐसी बातें सुनकर महिमाशाह का भी मन डोल उठा और तब उसने घोड़े को एक समीपवर्त्ती वृक्ष से बाँध दिया हथियार खोल-कर पास रख लिए और वहीं उस स्त्री की मनोकामना पूर्ण करने लगा। उसी समय एक गर्जता हुआ विकराल सिंह सामने आता देख पड़ा। उसे देखकर रूपविचित्रा थर थर काँपने लगी, किंतु महिमाशाह ने उसे धैर्य्य देकर कहा कि भय मत करो कोई डर नहीं, और कमान को उठाकर एक ही बाण से उसने सिंह को मार डाला।

उपर्युक्त प्राकृतिक उपद्रव के शांत होते ही सहस्रों मनुष्य बेगम की खोज में इधर-उधर फिरने लगे। उनमें से कोई कोई तो बेगम के पास तक आ पहुँचे और उसे शाही शिविर में लिवा ले गए। रूपविचित्रा को पाकर अलाउद्दीन अत्यंत प्रसन्न हुआ जब ग्रीष्म का अंत हो गया और पावस की घनघोर घटाएँ घिर घिरकर आने लगीं तब अलाउद्दीन ने लश्कर-सहित दिल्ली को कूच कर दिया।

दिल्ली के राजमहल में एक दिन आधीरात को जिस समय अलाउद्दीन रूपविचित्रा के पास बैठा था, उसी समय एक चूहा आ निकला। उसे देखते ही बादशाह का काम-ज्वर जीर्ण हो गया, किंतु उसने किसी प्रकार सम्हलकर उस चूहे को लक्ष्य करके एक ऐसा

बाण मारा कि वह वहीं मर गया। चूहे को मारकर अलाउद्दीन की प्रसन्नता का अंत न रहा, इसलिये उसने रूपविचित्रा से कहा कि मैं जानता हूँ कि स्त्रियाँ स्वभाव से ही कायर होती हैं, इसलिये मैंने यह पुरुषार्थ प्रगट किया है। यह सुनकर रूपविचित्रा ने मुस्कराकर कहा—पुरुषार्थी मनुष्य वे होते हैं जो इसी अवस्था में सिंह को सहज ही मारकर शेखी की बात नहीं करते। बेगम को ऐसी बातें सुनकर अलाउद्दीन आश्चर्य और क्रोध के समुद्र में गोते खाने लगा, किंतु उसने अपने को सम्हालकर कहा कि जो तू ऐसा पुरुष मुझे बतला दे तो मैं उससे बहुत ही प्रसन्नतापूर्वक मिलूँ अथवा उसने मेरा कैसा ही अपराध क्यों न किया हो मैं सर्वथा उसे क्षमा करूँ। तब बेगम ने अपना और मीर महिमाशाह का भूत वृत्तांत कह सुनाया और कहा कि उस वीर पुरुष के ये चिह्न हैं कि न तो वह उकड़ूँ बैठकर भोजन करता है, न शरणागत को त्यागता है, और न बिना किसी विशेष कारण के झूठ बोलता है। यह सुनते ही बादशाह का क्रोध इस प्रकार बढ़ उठा जैसे सचिक्कन पदार्थ की आहुति से अग्नि का तेज बढ़ उठता है। अलाउद्दीन ने उसी समय महिमाशाह को बुलाए जाने की आज्ञा दी। इधर रूपविचित्रा भी अपनी मूर्खता पर पछताने लगी। अंत में उसने साहसपूर्वक बादशाह से कहा कि यदि आप उस वीर पुरुष को कुछ दंड देना चाहते हों तो प्रथम मुझे ही मरवा डालिए, क्योंकि इसमें वास्तव में मेरा ही दोष है, न कि उसका। जहाँपनाह क्या यह अन्याय न होगा कि एक निरपराधी पुरुष दंड पावे और अपराधी को आप गले से लगावें? बेगम की ऐसी बातें सुनकर बादशाह ने महिमाशाह के आने पर उससे कहा कि "रे मूढ़ कुमार्गगामी अधम, अब मैं तेरा मुख नहीं देखना चाहता, बस अब यदि तुझे अपने प्राण प्यारे हैं तो इसी समय मेरे राज्य से चला जा।"

मीर महिमा और हम्मीर राव—क्रुद्ध अलाउद्दीन से तिरस्कृत होकर महिमाशाह ने घर आकर अपने सहोदर मीर गभरू से सारा

वृत्तांत कह सुनाया और उसी क्षण परिवार सहित वह दिल्ली से चल दिया। महिमाशाह जिस किसी राजा राव के पास जाता वह उसे शाह अलाउद्दीन का द्वेषी समझकर तुरंत ही अपने यहाँ से बिदा कर देता· इसी प्रकार फिरते फिरते जब वह राव हम्मीर की ड्योढ़ी पर पहुँचा और उसने अपने आने की इत्तला कराई तो राव जी ने उसे बड़े ही संमानपूर्वक डेरा दिलवाया और दूसरे दिन अपने दरबार में बुलाया। दरबार में पहुँचकर महिमाशाह ने पाँच घोड़े, एक हाथी, दो मुल्तानी कमान, एक तलवार, दो बाण, दो बहुमूल्य मोती और बहुत से ऊनी वस्त्र राव जी की नजर किए, जिनको राव जी ने सादर स्वीकार कर लिया। उसी समय मीर महिमाशाह ने अपनी बीती भी राव जी से निवेदन करके सविनय कहा—"मैं अलाउद्दीन के विरोधियों में से हूँ। यदि आपमें मेरी रक्षा करने की शक्ति हो तो शरण दीजिए अथवा मुझे भाग्य के भरोसे पर छोड़ दीजिए।" मीर के ऐसे वचन सुनकर हम्मीर ने कहा कि हे मीर मैं तुझे अभयदान देकर प्रण करता हूँ कि इस मेरे तनपिंजर में प्राण-पखेरू के रहते एक क्या सहस्रों बादशाह तेरा बाल बाँका नहीं कर सकते—यह रणथंभ का अभेद्य दुर्ग, ये अपने राजपूत वीर अथवा मैं स्वयं अपने को युद्धाग्नि में आहुति देने को प्रस्तुत हूँ परंतु तुझे न जाने दूँगा। इस प्रकार कहकर राव हम्मीर ने उसी समय मीर को पाँच लाख की जागीर का पट्टा कर दिया और तब से मीर आनंद-पूर्वक रणथंभौर के अभेद्य दुर्ग में रहने लगा।

इधर बादशाह के गुप्तचरों ने उसके संमुख यह समाचार जा सुनाया जिसके सुनते ही अलाउद्दीन पूँछ कुचले हुए काले सर्प की तरह क्रोधित हो उठा; किंतु वजीर बहराम खाँ ने आगत उपद्रव के टालने अथवा मीर महिमा के पक्षपात की इच्छा से दूत को डाँटकर कहा कि जिस मीर को सात समुद्र पार भी ठिकाना देनेवाला कोई नहीं है उसे हम्मीर क्या रखेगा। इसपर दूत ने पुनः कहा कि यदि मेरी बातों में कुछ भी असत्य हो तो मैं उचित दंड पाने के लिये

प्रस्तुत हूँ। दूत की ऐसी दृढ़ता देखकर अलाउद्दीन ने उसी समय आज्ञा दी कि हम्मीर को एक पत्र इस आशय का लिखा जाय कि वह मेरे अपराधी को स्थान न देवे क्योंकि अब तक वह मेरा मित्र है, न कि शत्रु। यदि वह अपने हठ से न हटे तो उसे उचित है कि वह सम्हल जाय, मैं क्षण मात्र में उसके समस्त दर्प और हठ को धूल में मिला दूँगा। अलाउद्दीन की आज्ञा पाते ही एक दूत को बहुत कुछ समझा बुझाकर रणथंभ की तरफ भेजा गया।

दूत ने रणथंभ जाकर बादशाह का पत्र राव हम्मीर जी को दिया और कहा कि आप बादशाह अलाउद्दीन के बल, पुरुषार्थ और पराक्रम एवं अपने भविष्य के विषय में भी खूब सोच-विचारकर उत्तर दीजिए। इस पत्र का उत्तर राव जी ने इस प्रकार से लिखा कि मैं यह भली भाँति जानता हूँ कि आप दिल्ली के बादशाह हैं; परंतु मैं जो प्रण कर चुका हूँ, उसे अपने जीवन पर्यंत छोड़ने का नहीं। इसलिये उचित यही है कि आप अब मुझसे महिमाशाह के विषय में बात भी न करें, और जो कुछ आपसे बन पड़े उसके करने में विलंब भी न कीजिए। इस पत्र को पाकर बादशाह का क्रोध और भी बढ़ उठा परंतु राजमंत्रियों के समझाने-बुझाने पर उसने एक बार फिर राव हम्मीर के पास दूत भेजकर उसके मन की थाह ली। परंतु उस वीर पुरुष ने बड़े धैर्य्य और साहस के साथ फिर भी वही उत्तर दिया। राव हम्मीर जी के हठ और साहस के सामने बादशाह की बुद्धि भी चक्कर में पड़ गई, उसे भी अपने आगे पीछे का सोच पड़ गया। उसने विचार किया कि जब राव हम्मीर में इतना साहस है तब उसका कुछ कारण भी होगा, यदि न भी हो तो प्राण की परवाह न करनेवाले के सामने बिरले ही माई के लाल खड़े हो सकते हैं। सिंह हाथी से बहुत ही छोटा है किंतु वह अपने साहस और पुरुषार्थ ही से उसे मार डालता है। इसी प्रकार सोच विचार करते हुए बादशाह ने अपने सब दरबारियों को बुलाकर हम्मीर के हठ और अपने कर्तव्य की सूचना दी। तब उसके सब सर्दारों ने तो हुजूर हाँ की 'हाँ'

में 'हाँ' मिला दी, सिर्फ एक वृद्ध पुरुष ने कहा कि उस चहुआन के फेर में न पड़िए, रणथंभ पर चढ़ाई करना सहज नहीं है। परंतु वृद्ध की इस बात पर ध्यान भी न दिया गया। अलाउद्दीन ने उसी समय आज्ञा दी कि यथासंभव शीघ्र ही फौज तय्यार की जाय। बादशाह की आज्ञा पाते ही जहाँ तहाँ पत्र भेजकर सोरठ, गिरनार और पहाड़ी देशों के अनेक राजपूत सरदार बुलाए गए। तब तक इधर शाही वैतनिक फौज भी तय्यार हो गई और फौज के लिये आवश्यक रसद बरदास भी इकट्ठी हो गई।

निदान इस प्रकार अरबी, काबुली, रूमी इत्यादि मुसलमान वीरों की सत्ताईस लाख जंगी फौज और अट्ठारह लाख परिकर कुल ४५ लाख मनुष्य, ५००० हाथी और पाँच लाख घोड़ों की भीड़ भाड़ लेकर अलाउद्दीन ने रणथंभ गढ़ पर चढ़ाई करने को चैत्र मास की द्वितीया संवत् ११३८ को कूच किया। जिस समय यह शाही दल बल राव हम्मीर जी की सरहद में पहुँचा उस समय वहाँ की प्रजा में कोलाहल मच गया। अलाउद्दीन के आज्ञानुसार सब सैनिक सिपाही प्रजा को नाना प्रकार के कष्ट देने लगे। इसलिये सब लोग भाग-भागकर रणथंभ के गढ़ में शरण के लिये पुकारने लगे। इसी प्रकार निरपराधी प्रजा का खून करते हुए जब यह दल बल "नल हारणों गढ़" के किले पर पहुँचा तब वहाँ के किलेदार ने तीन दिन पर्य्यंत शाही फौज का मुकाबिला किया। किंतु अंत में किले पर बादशाही दखल हो गया। इसलिये यहाँ का किलेदार भी रणथंभ को दौड़ गया और उसने बादशाह के अगनित दल बल का समाचार विधिवत् राव हम्मीर जी के संमुख निवेदन किया। इस समाचार के पाते हम्मीर की बंक भृकुटी और भी टेढ़ी हो गई, कमल समान नेत्र अग्नि-शिखा से लाल हो उठे, बाहु और ओठ फड़कने लगे। रावजी का ऐसा ढंग देखकर अभयसिंह प्रमार, भूरसिंह राठौर, हरिसिंह बघेला, रणदूला चहुआन और अजमतसिंह इन पाँच सर्दारों ने २०००० फौज लेकर शाही फौज को रास्ते में रोक लिया

और वे ऐसे पराक्रम से लड़े कि बादशाही सेना के पैर उखड़ गए और बड़े बड़े अमीर उमरा जहाँ तहाँ भागने लगे। उस समय अलाउद्दीन के वजीर महिरज खाँ ने कहा—"मैंने पहले ही अर्ज किया था कि एक तो राजपूत अपनी बात रखने के लिये जान देने की कभी परवाह नहीं करते, फिर भी उस पहाड़ी किले पर फतह पाना बहुत ही मुश्किल काम है"। किंतु बादशाह ने फिर भी उसकी बात यों ही टाल दी और आगे कूच करने की आज्ञा दी। इस युद्ध में अलाउद्दीन के ३०००० सिपाही, डेढ़ सौ घोड़े और कई एक अमीर उमरा काम आए किंतु राव हम्मीर के १२५ सिपाही और १० सर्दार खेत रहे और अभयसिंह प्रमार के सीस में बहुत गहरे गहरे २१ घाव लगे।

अलाउद्दीन ने रणथंभ गढ़ के पास पहुँचकर चारों तरफ से किले को घेरकर फौज का पड़ाव डाल दिया और फिर से एक दूत के हाथ पत्र भेजकर राव हम्मीर जी से कहला भेजा कि अब भी मेरे अपराधी मीर महिमाशाह को मेरे पास हाजिर करके मुझसे मिलो तो मैं तुम्हारे अपराध को क्षमा कर दूंगा। इस बार राव जी ने जो उत्तर दिया वह इस प्रकार था—"मैं जानता हूँ तू बादशाह है, परंतु मैं भी उस चहुआन कुल में से हूँ जिसने सदैव मुसलमानों के दाँत खट्टे किए हैं। ख्वाजा मीराँ पीर का एक लाख अस्सी हजार दल बल अजमेर में चहुआनों ने ही खपाया था। पुनः वीसलदेव जी ने सौनगरा का शाका किया, उसी वंश के पृथ्वीराज ने शहाबुद्दीन को सात बार पकड़कर छोड़ दिया। बस मैं उसी चहुआन कुल में हूँ और तू भी उसी पीर मर्द औलिया खानदान का मुसलमान है। देख अब किसकी टेक रहती है। हे यवनराज, तू निश्चय रख, मेरी टेक यह है कि सूर्य्य चाहे पूर्व से पश्चिम में उगने लगे, समुद्र मर्य्यादा छोड़ दे, शेष पृथ्वी को त्याग दे, अग्नि शीतल हो जाय, परंतु राव हम्मीर का अटल प्रण नहीं टल सकता। देख अलाउद्दीन, संसार में जो जन्म लेता है वह एक दिन मरता अवश्य है; अथवा जिसकी उत्पत्ति है उसका नाश होता ही है। फिर इस क्षणभंगुर शरीर के

लिये शरणागत को त्यागकर अपने कुल में मैं कलंक नहीं लगाना चाहता। तुझे कितना दर्प है जो अपने सामने दूसरे को वीर नहीं गिनता। इस पृथ्वी पर रावण, मेघनाद सरीखे अभिमानी और अतुल बलशाली वीर पानी के बबूले की तरह बिला गए। यवनराज! मनुष्य नहीं रहता, परंतु उसके कर्तव्य की कहानियाँ अवश्य रहती हैं। अतएव अब तुझे जो सूझे सो कर। मैं भी सब तरह से तैयार हूँ।"

अलाउद्दीन के दूत को इस प्रकार उत्तर देकर राव हम्मीर जी शिवालय में जाकर शिवार्चन करने लगे। धूप, दीप नैवेद्य संयुक्त विधिवत् पूजा करके जिस समय राव जी ध्यानमग्न थे उसी उसी समय शिवालय में आकाशवाणी हुई कि हे हम्मीर तुमसे और अलाउद्दीन से १२ वर्ष पर्य्यंत संग्राम होगा। तत्पश्चात् आषाढ़ सुदी ११ को तुम्हारा शाका पूर्ण होगा जिससे संसार में चिरकाल तक तुम्हारा यश बना रहेगा। शिवजी से इस प्रकार वरदान पाकर राव जी ने प्रसन्न होकर अपने समस्त शूर वीर सरदारों को युद्ध के लिये सन्नद्ध होने की आज्ञा दी। उसी समय हम्मीर के चाचा राव रणधीर ने, जो कि "छाड़गढ़" के किले के स्वामी थे, हम्मीर से कहा कि श्रीमान् क्षमा करें इस समय मेरे हाथ देखें।

इधर हम्मीर जी का पत्र पाते ही अलाउद्दीन लाल पीला सा हो उठा और उसने उसी समय रणथंभ के किले पर चारों ओर से गोले और बाणों की वर्षा करने की आज्ञा दी। बादशाह की आज्ञा पाते ही मुसलमान सेनानायक महम्मद अली रणथंभ के अजेय दुर्ग को पाने के लिये प्रयत्न करने लगा। इधर से राव रणधीर ने भी किले की बुर्जी पर से अग्निवर्षा करने की आज्ञा दी और आप कुछ सैनिकों सहित मुसलमानी सेना में वह इस प्रकार धँस पड़ा जैसे भेड़ों के समूह में भेड़िया धँसता है। निदान पहली वरणी राव रणधीर और मुहम्मद अली की हुई जिसे राव जी ने एक ही हाथ में दो कर दिया। यह देखकर उसका पीठि-नायक अजमत खाँ राव जी के

संमुख आया। किंतु राव रणधीर ने उसे भी मार गिराया। अजमत खाँ के गिरते ही मुसल्मानी सेना के पैर उखड़ गए। इस युद्ध में मुसलमान सेना के अस्सी हजार अस्त्रधारी खेत रहे और राव रणधीर के केवल एक हजार जवान मारे गए। मुहम्मद मीर के मारे जाने पर जब मुसलमानी फौज भागने लगी तब अलाउद्दीन ने वादित खाँ को सेनानायक बनाया। वादित खाँ ने बड़े धैर्य्य और दृढ़ता से उत्तेजनाजनक वाक्य कहकर, बिखरी हुई फौज को बटोरकर, राजपूत वीर राव रणधीर का सामना किया किंतु अंत में उसे भी भूत सेना-नायकों के भाग्य में भाग लेना पड़ा।

वादित खाँ के मरते ही सारी सेना में कुहराम मच गया। अला-उद्दीन स्वय निस्तेज होकर पीर पैगंबरों को पुकारने लगा। तब वजीर महम्मद खाँ ने कहा कि इस प्रकार संमुख युद्ध करके जय पाना तो कठिन है। इसलिये कुछ सेना यहाँ छोड़कर छाड़गढ़ के किले पर चढ़ाई की जाय। उस किले में राव रणधीर के लोग रहते हैं। निदान अपने परिवार पर भीड़ पड़ी देखकर यदि राव रणधीर शरण में आ जाय तो फिर अपनी जय होने में कोई संदेह नहीं है। निदान वजीर की बात मानकर बादशाह ने वैसा ही किया; किंतु पाँच वर्ष व्यतीत हो गया और छाड़गढ़ का किला हाथ न आया। वरन् इसी में एक नवीन बात यह निकल पड़ी कि दिन भर तो हम्मीर जी युद्ध करते और रात को रणधीर का धावा पड़ता जिससे शाही सेना अत्यंत व्याकुल हो उठी। बड़े बड़े अमीर उमरा मिट्टी मोल मारे जाने लगे। अधिक क्या, आरंभ से अंत तक जितनी लड़ाइयाँ हुई उन सब में राजपूत वीरों की ही जय हुई। निदान जब अलाउद्दीन की तरफ के अब्दुलकरीम, करम खाँ, यूसफ जंग इत्यादि बड़े बड़े बुद्धि-मान् योद्धा सर्दार मारे गए और राव रणधीर जी तथा हम्मीर जी का बाल भी न बाँका हुआ, तब अलाउद्दीन घबरा उठा और फिर से अमीर उमरावों की सभा करके अपने उद्धार का उचित उपाय विचारने लगा।

इसी समय राव रणधीर जी ने हम्मीर जी से कहा कि यदि चित्तौर से दोनों कुमार बुला लिए जायँ तो अच्छा हो। इसपर राव जी ने भी "अच्छा" कह दिया। तब राव रणधीर ने रणथंभ का सब समाचार लिखकर चित्तौर भेज दिया। उक्त समाचार के पाते ही दोनों राजकुमार तीस हजार राठौर, आठ हजार चहुआन, और पाँच हजार प्रमार राजपूतों की सेना लेकर रणथंभ को चले आए। दोनों राजकुमारों को देखकर राव हम्मीर जी ने प्रसन्नता-पूर्वक उन्हें गले लगा लिया और मीर महिमा को शरण देने के कारण अलाउद्दीन से रार बढ़ जाने का हाल भी विधिवत् वर्णन कर सुनाया, जिसे सुनते ही दोनों राजकुमारों का मुख प्रसन्नता से प्रफुल्लित हो उठा। उन्होंने वीर रस में उन्मत्त होकर मदांध मृगराज की भाँति झूमते हुए राव जी से कहा कि अब तक आपने परिश्रम किया अब तनिक हमारा भी पराक्रम देख लीजिए। यों कहकर दोनों राजकुमार रनिवास में गए। राव हम्मीर की रानी आसुमती के चरण छूकर वे बोले कि हे माता आप कृपा कर हमारे मस्तक पर मौर बाँधकर हमें युद्ध करने का आशीर्वाद दीजिए। दोनों राजकुमारों के ऐसे वचन सुनकर आसुमती ने भी सुतस्नेह से सने हुए वाक्यों से संबोधन करते हुए उन्हें कलेजे से लगा लिया और अपने हाथों उनके शीश पर मौर बाँधा और केशरी बाना पहिनाकर उन्हें युद्ध में जाने को बिदा किया।

जिस समय आसुमती कुमारों का शृंगार कर रही थी उस समय छाड़गढ़ के किले में इस प्रकार घनघोर रव हो रहा था कि जिससे दिशाओं के दिग्पाल चौकन्ने हो रहे थे। यह खरभर देखकर अलाउद्दीन ने अपने मंत्री से पूछा कि आज छाड़गढ़ में यह उत्सव किसलिये हो रहा है। तब एक अमीर ने उत्तर दिया कि राव हम्मीर जी के छोटे भाई के पुत्रों ने स्वयं युद्ध के लिये सिर पर मौर बाँधा है। उसी के उत्सव में यह गान-वाद्य हो रहा है। यह सुनकर बादशाह ने जमाल खाँ को बुलाकर कहा कि तुमने ही पृथ्वीराज को कैद

किया था; आज भी अगर तुम दोनों राजकुमारों को पकड़ लोगे तो मेरी अत्यंत प्रसन्नता के पात्र होगे। इस प्रकार समझा-बुझाकर उस दिन के युद्ध के लिये अलाउद्दीन ने मीर जमाल को सेनानायक बनाया।

इधर से दोनों राजकुमार केसरिया बाना पहिने, सीस पर मुकुट, हाथों में रणकंकण बाँधे अपने अपने तेज़ तुरंगों पर सवार सोलह हजार राजपूतों की सेना के बीच में ऐसे भले मालूम देते थे मानों रणबाँकुरे देवताओं के दल में इंद्र और कुबेर सुशोभित हो रहे हों। दोनों वीर सेना सहित उज्ज्वल नेजे और खड्ग चमकाते हुए मुसलमान सेना में इस प्रकार धँस पड़े जैसे काले काले बादलों में विजली विलीन हो जाती है। इधर अलाउद्दीन से उत्तेजित किए हुए यवन-दल ने उन राजकुमारों को घेर लिया और जमाल खाँ वड़े वेग से उन दोनों राजकुमारों पर टूटा। वे वीर राजकुमार भी वड़ी धीरता से उसका सामना करने लगे। यह देखकर राव हम्मीर जी ने वीर शंखोदर को कुमारों की सहायता के लिये भेजा। इसपर इधर से अरवी फौज का धावा हुआ। राजपूत और मुसलमान सेना में इस प्रकार विकट मार होने लगी कि किसी को अपना विगाना न सूझता था। इसी समय जमाल खाँ ने अपना हाथी राजकुमारों के सामने वढ़ाया। तव कुमार ने तलवार का ऐसा हाथ मारा कि एक ही हाथ में लोहे का टोप कटते हुए मीर जमाल की खोपड़ी के दो टूक हो गए। जमाल खाँ को गिरता देखकर वालन्न खाँ ने धावा किया। इधर से वीर शंखोदर ने वढ़कर उसका मुख रोका। निदान सायंकाल तक बराबर लोहा झरता रहा। दोनों कुमार अपनी समस्त सेना के सहित स्वर्गगामी हुए। इस युद्ध में मुसलमानी फौज के ७५००० योधा खेत रहे।

इस प्रकार दोनों राजकुमारों के मारे जाने पर राव रणधीर ने क्रोधित होकर किले पर से आग वरसाना आरंभ कर दिया। तव वादशाह ने कहला भेजा कि आप क्यों जान-बूझकर जान देने पर उतारू हुए हैं, आपके लड़कर मर जाने से इस झगड़े का अंत न

होगा। यदि आप राव हम्मीर जी को समझाकर मीर महिमा को मेरे पास भेजवा दें तो आप वा राव हम्मीर जी दोनों सुख से राज्य करें और हम दिल्ली चले जायँ। किंतु बादशाह के पत्र का राव रणधीर ने केवल यही उत्तर दिया कि क्षत्रियों का यह धर्म नहीं है कि विषय-सुख-भोग की लालसा अथवा मृत्यु के डर से वे अपने धारण किए हुए धर्म्म को त्याग दें। राव रणधीर की ओर से इस प्रकार कोरा उत्तर पाकर अलाउद्दीन ने अपनी फौज को भी छाड़ के किले पर आक्रमण करने की आज्ञा दी। अलाउद्दीन की आज्ञा पाते ही मुसलमानी फौज ने टिड्डी दल की तरह उमड़कर किले को चारों ओर से घेर लिया और वे किले पर से चलते हुए गोले, गोली, बाण बर्छों की विषम बौछार की कुछ भी परवाह न करके किले पर चढ़ दौड़े। मुसलमानी सेना जब किले में धँस पड़ी तब राजपूत लोग सर्वथा प्राण का मोह छोड़कर तलवार से काम लेने लगे। दोनों में अग्न्यास्त्रों का संचालन बिल्कुल बंद हो गया। केवल तबल, तलवार, बरछी, कटार, सेल से काम लिया जाने लगा। इसी रेलापेल में बादशाह के निज पेश्कार (बगली) ने राव हम्मीर की तलवार के सामने आने की हिम्मत की किंतु वीर रणधीर के एक ही वार में उसके जीवन का वारा न्यारा हो गया, इसलिये उसके सहकारी रूमी सर्दार ने अपने ५० बलवान् योद्धाओं सहित रणधीर जी को घेर लिया। राव रणधीर ने इन पचासों सिपाहियों को मारकर रूमी सरदार को भी दो टूक कर दिया। इसी प्रकार मार काट होते हुए राव रणधीर सहित जितने राजपूत वीर उस किले में थे सबके सब मारे गए और छाड़-गढ़ का किला बादशाह के हाथ आया। इस युद्ध में शाही फौज के दो बड़े बड़े सर्दार और एक लाख रूमी सैनिक खेत रहे और राव रणधीर के साथी २०००० राजपूत काम आए। यह छाड़गढ़ का अंतिम युद्ध चैत्र सुदी ९ शनिवार को हुआ। बीस हजार केवल राजपूत मारे गए और एक हजार राजपूतनी स्त्रियाँ स्वयं जलकर भस्म हो गईं।

छाड़गढ़ का किला फतह करके अलाउद्दीन ने अपने लश्कर की बाग रणथंभ गढ़ की ओर मोड़ी और कुँवार सुदी ९ शनिवार को किले के चारों तरफ घेरा डालकर दूत के हाथ राव हम्मीर जी के पास कहला भेजा कि अब भी यदि महिमाशाह को मेरे पास भेज दो तो मैं विना किसी रोक टोक के दिल्ली चला जाऊँ। दूत की ऐसी बातें सुनकर राव हम्मीर जी ने कहा—रे मूर्ख दूत, मैं तुझसे क्या कहूँ, तेरे स्वामी अलाउद्दीन का मुझसे बार बार ऐसा कहला भेजना उचित नहीं है। विग्रह का निरधारण किया जाता है तो केवल इसलिये कि जिसमें वंधु बांधवों का रक्तपात न हो किंतु अब मुझे इस बात का सोच बाकी न रहा। राव रणधीर सा चाचा और कुलदीपक दोनों कुमार भी जब इस युद्धाग्नि में अपने प्राण होम कर चुके तब मुझे अब सोच ही किस बात का है। जा तू अपने स्वामी से कह दे कि अब कभी मेरे पास संदेसा न भेजे। दूत ने वहाँ से आकर राव जी के बचन ज्यों के त्यों बादशाह से कह सुनाए। यह सुनकर अलाउद्दीन ने उसी समय गोलंदाजों को बुलाकर हुक्म दिया कि यहाँ से ऐसा गोला मारो कि किले के बुर्जों पर रखी हुई तोपें ठस होकर शांत हो जायँ। गोलंदाजों ने बादशाह की आज्ञा पालन करने के लिये यथासाध्य चेष्टा की किंतु वह निष्फल हुई। साथ ही किले पर से उतरे हुए गोलों की मार से लश्कर की बहुत सी तोपें ठस होकर चरख पर से गिर पड़ीं। यह देखकर बादशाह की बुद्धि किंकर्तव्यविमूढ़ हो गई। वह नाना प्रकार के तर्क वितर्क करता हुआ अपने कर्तव्य पर पछताने लगा। यह देखकर उसके वजीर ने उसे समझाया और रात्रि को किले की खाईं पर पुल बाँधकर किले पर चढ़ जाने का मत पक्का किया, किंतु पानी की बाढ़ अधिक होने के कारण मुसलमान सेना को उससे भी हारना पड़ा। तब तो बादशाह अखंड रूप से डटकर रह गया और किले पर आक्रमण करने के लिये उपयुक्त समय आने की प्रतीक्षा करने लगा।

एक दिन राव हम्मीर जी ने किले के सबसे ऊँचे हिस्से पर सभामंडप सजाया। उस सभामंडप में सगे संबंधियों सहित बैठा हुआ राव हम्मीर ऐसा ज्ञात होता था जैसे देवताओं के बीच में इंद्र शोभित होता है। स्वर्ण सिंहासन पर बैठे हुए राव हम्मीर जी के संमुख चंद्रकला नामक वेश्या नृत्य कर रही थी। चंद्रकला के प्रत्येक गीत से अलाउद्दीन की अपमानसूचक ध्वनि निकलती थी। साथ ही इसके बादशाह की ओर पदाघात करके उसने ऐसा विलक्षण कटाक्ष किया कि जिसे देखकर रावजी की सब सभा में आनंद सूचक एक बड़ी भारी ध्वनि हुई। यह देखकर अलाउद्दीन से न रहा गया। तब उसने कहा कि यदि कोई इस वेश्या को बाण से मारकर राव हम्मीर के रंग में भंग कर दे तो मैं उसे बहुत कुछ पारितोषिक दूँ। यह सुनकर मीर महिमा के भाई मीर गभरू ने कहा कि मैं श्रीमान् की आज्ञा का प्रतिपालन कर सकता हूँ। किंतु स्त्री पर शस्त्र चलाना वीरों का काम नहीं है। इसीलिये उस वेश्या को जीव से न मारकर केवल उसका अहित किए देता हूँ। यों कहकर मीर गभरू ने एक ऐसा बाण मारा कि जिससे उस वेश्या के पांव में ऐसी चोट लगी कि वह तुरत लोट पोट हो गई। वेश्या को गिरते देखकर राव जी आश्चर्य और क्रोध में आकर चारों ओर देखने लगे। तब मीर ने हाथ बाँधकर अर्ज किया कि यह बाण मेरे भाई मीर गभरू का चलाया हुआ है। श्रीमान् इस पर किसी प्रकार का खेद न करें और तनिक मेरा पराक्रम देखें। यह कहकर मीर महिमाशाह ने एक ऐसा बाण मारा कि अलाउद्दीन के सिर पर से उसका मुकुट उड़ गया।

यह देखकर वजीर महरमखाँ ने अलाउद्दीन से कहा कि अब यहाँ ठहरना उचित नहीं है। इस महिमा के संचालन किए हुए बाण से यदि आप बच गए तो यह उसने पहले निमक का निर्वाह किया है। यदि वह हम्मीर का हुक्म

पाकर अब की जो लक्ष्य कर के बाण मारे तो आपके प्राण बचने

कठिन हैं, अतएव मेरा तो यही विचार है कि अब यहाँ से दिल्ली को कूच कर जाना ही भला है। वजीर महरमखाँ की बात मानकर बादशाह ने उसी समय कूच की तय्यारी करने की आज्ञा दी। इधर जिस समय सारे लश्कर में चला-चल का सामान हो रहा था उसी समय राव हम्मीर जी के सामान के कोषाध्यक्ष सुरजनसिंह ने आकर बादशाह के पैरों पर शिर धर दिया और कहा कि यदि श्रीमान् मुझे छाड़गढ़ का राज्य दे देना स्वीकार करें तो मैं सहज ही में रणथंभ के अजेय दुर्ग पर आपकी फतह करवा दूँ। इस पर अलाउद्दीन ने उसे बहुत कुछ ऊँची नीची दिखाकर कहा—सुरजनसिंह यदि मैं रणथंभ पर विजय पा जाऊँ तो छाड़ का राज्य तो दूँगा ही इसके अतिरिक्त तुम्हें इस प्रकार संतुष्ट करूँगा कि जिसमें तुम्हारा मन हर तरह से राजी हो जाय।

बादशाह की बातों में आकर कृतघ्न सुरजन ने रणथंभ को फतह करवाने का बीड़ा उठा लिया। उसने उसी समय राव हम्मीर जी के पास जाकर कहा कि "श्रीमान् रसद बरदास्त और गोली बारूद के खजाने चुक गए हैं, इसलिये किले में रहकर अपने हठ एवं मान मर्य्यादा की रक्षा होनी कठिन है, इसलिये वचन मानकर महिमाशाह को अलाउद्दीन के पास भेजकर उससे सुलह कर लीजिए।" सुरजन की बात पर राव हम्मीर जी ने विश्वास न किया और आप स्वयं "जौंरा भौंरा"[1] (खजाने) के पास जाकर जाँच की तो सुरजन का कहना वास्तव में सत्य पाया। तब तो राव जी को अत्यंत शोक और आश्चर्य

---

१ किंतु "जौंरा, भौंरा" (खजाने) वास्तव में खाली नहीं हुए थे। उनमें का सब माल सामान नीची तह में ज्यों का त्यों भरा पड़ा था। राव हम्मीर जी को धोखा देने के लिये सुरजन ने ऊपर से सूखा चमड़ा डलवा दिया था जो कि पत्थर डालने पर खड़क उठा।

ने दबा लिया। यह देखकर महिमाशाह ने कहा कि यदि श्रीमान् आज्ञा दें तो अब मैं स्वयं अलाउद्दीन से जा मिलूँ जिससे वह दिल्ली चला जाय। यह सुनते ही राव जी के नेत्रों से आग की चिनगारियाँ निकलने लगीं। उन्होंने कहा—महिमाशाह क्या फिर यह समय आवेगा? यदि मैं तुझे शाह के पास भेजकर रणथंभ का राज भोग करूँ तो संसार मुझे क्या कहेगा? क्या इस कायर कर्तव्य से मेरा क्षत्रिय कुल सदैव के लि। कलंकित न होगा? अब तो जो कुछ होना था हो चुका।

इधर सुरजन ने बादशाह के पास आकर कहा कि मैं एक ऐसा अद्भुत कुचक्र चला चुका हूँ कि इस समय आप जो कुछ कहेंगे राव जी तुरंत स्वीकार कर लेंगे। यह सुनकर अलाउद्दीन ने हम्मीर जी के यहाँ कहला भेजा कि वह अपनी देवल रानी की बेटी चंद्रकला को मुझे देकर मुझसे क्षमाप्रार्थी हो तो मैं उसपर दया कर सकता हूँ। यह सुनते ही राव हम्मीर जी के क्रोध और शोक का ठिकाना न रहा। उन्होंने इसके उत्तर में अलाउद्दीन के पास कहला भेजा कि यदि उसे अपनी जान प्यारी है तो चार पीरों सहित अपनी प्यारी चिमना बेगम को मेरे पास भेजकर आप दिल्ली चले जावें अन्यथा मेरे हठ को हटाने की आशा न करें। हम्मीर जी के यहाँ से इस प्रकार कड़ाचूर उत्तर पाकर बादशाह ने कुपित होकर सुरजन से कहा—क्यों रे झूठे! तू यही कहता था कि राव हम्मीर अब आजिज आ जायगा। इस अपमान से उस दुष्ट ने कुपित होकर कहा कि अच्छा अब देखिए क्या होता है।

इधर राव जी बादशाह के दूत को उपर्युक्त उत्तर देकर तन क्षीण मन मलिन शोकातुर एवं व्यग्रचित्त अवस्था में रनवास में गए और रानी जी से उक्त बीतक की वार्ता करने लगे—"हे प्रिये! अब क्या करूँ? क्या महिमाशाह को अलाउद्दीन के पास भेजकर ही अपनी प्रजा की रक्षा करूँ?" रावजी के ऐसे वचन सुनकर रानी

ने क्रोध, शोक, लज्जा एवं आश्चर्य्य से भरे कंठ कहा—"हे राजन्,

वीरकुल-शिरोमणि ! आज आपको बादशाह से लड़ते लड़ते १२ वर्ष हो गए । आज आपको यह कुलधर्म के विरुद्ध सलाह देने वाला कौन है ? हे प्राण प्यारे यह संसार सब झूठा है, अतएव इस संसार चक्र से संचालित दुःख और सुख भी अनित्य हैं, परंतु एक मात्र कीर्ति ही ऐसी वस्तु है कि जो इस संसार के अप्रतिहत चक्र से कुचली नहीं जा सकती । हे राजन् ! अपने हाथ से शीश काटकर देनेवाले राजा जगदेव, विद्याविशारद राजा भोज, परदुःखभंजन राजा विक्रमादित्य, दानवीर कर्ण इत्यादि कोई भी इस संसार में अब नहीं हैं परंतु उनके यश की पताका अब तक अक्षय स्वरूप से उड़ रही है और सदा उड़ेगी । महाराज ! धन यौवन सदैव नहीं रहता; मनुष्य ही क्या, आकाश में स्थित सूर्य्य और चंद्रमा भी एक-रस स्थिर नहीं रहते । जीवन, मरण, सुख, दुःख यह सब होनहार ही हैं तब अपने कर्तव्य से क्यों चूकिए । श्रीमान् आप इस समय अपने पूर्व्व पुरुष सोमेश्वर, पृथ्वीराज, जैतराव इत्यादि की वीरता और उनकी अक्षय कीर्ति का स्मरण कीजिए और तन धन सब कुछ जाय तो जाय परंतु शरणागत महिमाशाह और अपने धर्म हठ को न जाने दीजिए ।"

रानी की इस प्रकार उच्च उत्तम शिक्षा सुनकर राव जी के मुखार-विंद पर प्रसन्नता की झलक पड़ गई । उन्होंने कहा "धन्य प्रिये ! बस मैं इतना ही चाहता था, अब मैं निश्चिततापूर्वक रण में प्राण दे सकता हूँ ।" इस बात के सुनते ही रानी मूर्छित होकर जमीन पर गिर पड़ी, फिर कुछ सम्हलकर मधुर स्वर से बोली—"स्वामी, आप युद्ध कीजिए मैं आपसे पहले ही शाका करूँगी ।"

रानी जी से इस प्रकार बातें करके राव जी ने दरबार में आकर राज्य कोष को खोलवाकर याचकों को अयाची करने की आज्ञा दी और सब राजपूत सूर सामंतों के सामने "चतुरंग" से कहा कि अब मैं अपना कर्तव्य पालन करने पर उद्यत हूँ, रणथंभ की प्रजा और राजकुमार रतन की रक्षा आप कीजिए । उत्तम होगा कि आप

रतन को लेकर चित्तौर चले जायँ। इसपर यद्यपि चतुरंग ने आना-कानी करके अपने को भी राव जी के साथ युद्ध में शामिल रखना चाहा किंतु रावजी के आग्रह करने पर उसे वही मानना पड़ा अर्थात् ५००० सैनिकों सहित 'रतन' को लेकर वह चित्तौर की तरफ गया।

जब चतुरंग अल्हणपुर तक पहुँच गए तब राव हम्मीर जी ने अपने सब सर्दारों से कहा कि "अब धर्म्म के लिये प्राण न्यौछावर करने का समय निकट आ गया है अतएव जिनको मृत्यु प्यारी हो वे मेरे साथ रहें और जिन्हें जीवन प्यारा हो वे खुशी से घर चले जायँ। राव हम्मीर जी के इस प्रकार कह चुकने पर मीर महिमा-शाह ने सब सूर वीर सर्दारों की तरफ से प्रतिनिधि स्वरूप हो अर्ज किया—हे राव जी! ऐसा कौन पुरुष कुलांगार होगा जो आपको इस समय रणथंभ में छोड़कर अपने जीवन का सुख चाहेगा। देवता, मनुष्य, शूरवीर पुरुष किसी का भी जीवन स्थिर नहीं है। एक दिन मरेंगे सब, तब फिर ऐसे सुअवसर की मृत्यु को कौन छोड़े? मरने से सब डरते हैं, संसार में केवल सती स्त्री और शूर वीर पुरुष ही ऐसे हैं जो मृत्यु को सदैव आलिंगन करने के लिये प्रस्तुत रहते हैं एव उन्हें मृत्यु में ही आनंद आता है।

दूसरे दिन अरुणोदय होते ही राव जी ने शौचादि से निश्चिंत हो गंगाजल से स्नान कर शरीर में सुगंधित गंधादि लेपन कर केसर सने पीले वस्त्र धारण किए, माथे पर रत्नजटित मुकुट बाँधा और शूर वीरों के छत्तीसों बाने (हरवे) लगाकर प्रसन्नतापूर्वक वे ब्राह्मणों को संमान सहित दान देने लगे। इधर बात की बात में राठौड़, कूरम, गौड़, तोंवर, पड़िहार, पारैच, पुंडीर, चहुआन, यादव, गहिलोत, सेंगर, पँवार इत्यादि जाति के कुलीन शूर वीर राजपूत लोग अपने अपने बाने से सजे हुए रणरंग में रत मदमाते गयंद की भाँति आकर राव जी के पास इकट्ठे होने लगे। उन आगत शूर वीर राजपूतों के माथे पर टेढ़ी पगड़ी, ललाट में केशर सौंधे गंध की त्रिपुंड, गले में तुलसी और रुद्राक्ष की माला, सिर पर लोहे के टोप,

शरीर पर झिलम-बक्तर, हाथों में दस्ताने, और यथा अंग छत्तीसों बाने सजे हुए थे। वे वीर योद्धा लोग साक्षात् शिव के गण से सुशोभित होते थे। इधर तो इन सब शूर वीरों सहित राव जी गणेश, शिव, भगवती इत्यादि देवताओं का पूजन और परिक्रमा कर रहे थे उधर राजमहल के द्वार पर मेघ के समान बड़े दुरद दंतारे मतवारे हाथियों और वायु के वेग को उल्लघन करनेवाले घोड़ों का घमासान जम रहा था। सूर्य्य निकलते निकलते राव हम्मीर जी अपने वीर योद्धाओं सहित इष्टदेव का स्मरण करते हुए राजमहल से बाहर हुए। राव जी के आते ही सब सेना व्यूहबद्ध हो गई। सबसे आगे फड़वाली साक्षात् काल की सी बिकराल कालिका का अवतार तोपें, उनके पीछे हथनार ऊँटनार जंबूर, तिनके पीछे हाथी, तिनके पीछे ऊँट, घड़सवार और फिर तुबकदार पैदल इत्यादि थे। उस समय बाल सूर्य्य की सुनहरी किरणों के पड़ने से सब साज बाज से सुसज्जित चंचल घोड़े और गंधमय गंडस्थलवाले मतवाले हाथी बड़े ही भले मालूम होते थे। जिस समय राव जी की सवारी संपूर्ण रूप से सुसज्जित हो गई तो नौबत, नगाड़े, शंख, सहनाई, रणतूर, शृंगी, डफ इत्यादि रण-वाद्य बजने लगे, कड़खैत उच्च स्वर से कड़खे गा-गाकर सहज कठोरहृदय शूर वीरों के चित्त को उत्कर्ष देने लगे। इधर ये शूर वीर लोग उमंग में भरे हुए आगे बढ़ते जाते थे उधर आकाश में अप्सराओं के वृंद इस समर में शत्रु के संमुख प्राण को परित्याग करनेवाले वीरों को अपने हृदय का हार बनाने के लिये आकाश मार्ग से आ रही थीं। जिस प्रकार ये वीर लोग इधर झिलम, टोप, बख्तर, दस्ताने, कलगी, तुर्रा, सरपेच, तीर, तुबक, तेगा, तलवार, तबल, तोमर, तौरा नेत, बरछी, बिछुआ, बाँका, छुरी, पिस्तौल, पेशकब्ज, कटार, परिघ, फरसा, दाव इत्यादि अस्त्र शस्त्र से सजे हुए थे उसी प्रकार उस तरफ सर्वांगसुंदरी नबयौवना अप्सराएँ भी सीसफूल, दावनी, आड़, तार्टक, हार, बाजूबंद, जोसन, पहुँची, पाजेब इत्यादि गहने और नाना प्रकार की रंग बिरंगी कंचुकी, चोलो, चौबंद

इत्यादि वस्त्रों को धारण किए हुए आकाश-मार्ग में स्थित थीं।

इस प्रकार जंग-रंगराते मदमाते राजपूत इधर से बढ़े और उधर से इसी तरह वाणों की बौछार करती हुई मुसलमान सेना भी पहाड़ों की कंदराओं में से टिड्डी सी निकल पड़ी। दोनों सेनाओं में प्रथम तो धुँआधार तोप, तुवक, झौका, पिस्तौल इत्यादि अग्न्यास्त्रों से वर्षा हुई, परंतु जब वीरत्व के उत्साह से प्रोत्साहित हुई दोनों सेनाएँ समुद्र की तरह उमड़कर एक दूसरे से खिल्तमिल्त हो गईं उस समय एकदम तेगा, तलवार, तबल, छुरी, बिछुआ, कटार, गुर्ज, फर्सा इत्यादि की मार होने लगी। क्षण मात्र में वह आमोदमय रणभूमि साक्षात् करुणा और वीभत्स रस का समुद्र हो गई। जहाँ तहाँ घायल और मृतक शूर वीर सिपाहियों के शवों के ढेर के ढेर नजर आते थे। मृतक हाथी, घोड़ों के शव जहाँ तहाँ चट्टानों से दीखते थे और बहुतेरे नर-देह-रक्त की नदी में जहाँ तहाँ बहे जाते थे। उन पर बैठकर मांस भक्षण करते हुए कौवे, चील्ह, गिद्ध, कुही, बाज, कुर्रा और शृगाल इत्यादि जंतु अत्यंत भयानक रव मचाते थे। इस प्रकार कठिन मार मचने पर मुसलमान सेना के पैर उखड़ पड़े। यह देखकर बादशाह ने अपनी सेना को ललकारते हुए वजीर से कहा कि अब क्या किया जाय। तब वजीर ने कहा कि इस समय अपनी सेना की चार अनी करके प्रत्येक का भार दीवान, बाँके बगसी, मैं और आप स्वयं लेकर चार तरफ से आक्रमण करें, तब ठीक होगा। बादशाह ने उसकी संमति मानकर वैसा ही किया। इस बार उपयुक्त व्यूहबद्ध होने के कारण मुसलमान सेना ने बड़ी वीरता दिखाई। बादशाह ने पुकारकर कहा कि मेरा जो उमराव हम्मीर को पकड़कर लावेगा उसको बारह हजार की जागीर और दरबार में सबसे बड़ा मंसब मिलेगा। यह सुनकर अब्दुल नामक एक उमराव अपनी सेना सहित बड़े वेग से आगे बढ़ा। इधर राजपूत सेना ने उसके रोकने का यथासाध्य प्रयत्न किया, इस होड़ हौस में बड़ी कड़ी

मार हुई, दोनों ओर के कई कमंद खड़े हुए। जब राव जी की तरफ

के २०० सवार, तीस हाथी और ६०० वीर जोधा काम आ चुके तब शेख महिमाशाह ने राव हम्मीर को सिर नवाकर कहा कि श्रीमान अब बहुत हुआ। अब जरा मेरा भी पराक्रम देखिए। यह कहता हुआ वह बीच समरभूमि में आ खड़ा हुआ और बादशाह को संबोधन करके बोला—मैं महिमाशाह जो आपका अपराधी हूँ यहाँ खड़ा हूँ अब पकड़ते क्यों नहीं! अथवा जो कुछ करना हो करते क्यों नहीं? अब अपनी इच्छा को पूर्ण कीजिए।

महिमाशाह के ऐसे सगर्व वचन सुनकर अलाउद्दीन ने खुरासान खाँ की ओर देखकर कहा कि जो कोई इस शेख को जीवित पकड़ लावेगा उसे तीस हजार की जागीर, बारह हजारी मंसब, नौबत निशान और एक तलवार दूँगा। इस पर सद्की फौज के साथ इधर से खुरासान खाँ और राव हम्मीर की जय जयकार बोलते हुए उधर से महिमाशाह ने एक दूसरे पर आक्रमण किया। बादशाह ने अपनी सेना को उत्तेजित्त करने के लिये कहा इसको शीघ्र पकड़ो। शेख और खुरासान की सेना अनी तो एक दूसरे पर बाणों की वर्षा करने लगी और इधर ये दोनों वीर स्वयं आमने सामने जुटकर एक मात्र खड्ग के सहारे पर खेलने लगे। अंत में महिमाशाह ने खुरासान खाँ को मार गिराया और उसके निशान इत्यादि ले जाकर राव जी को नजर किए। महिमाशाह ने राव हम्मीर जी के संमुख खड़े होकर कहा—हे शरणागत प्रणरक्षक वीर चहुआन, आपको धन्य है। आप राज्य, परिवार, स्त्री और सब राजसी वैभवों को तिलांजलि देकर जो एक मात्र मेरी रक्षा करने के लिये अपने हठ से न हटे यह अचल कीर्ति आपकी इस संसार में सनातन स्थिर रहेगी। उसने आँसू भर कहा—"हाय! अब वह समय कब आवेगा कि मैं पुनः अपनी माता के गर्भ से जन्म धारण कर आपसे फिर मिलूँ।" यह सुनकर राव जी ने कहा हे वीर मीर, अधीर मत हो। जीवन मरण यह संसार का काम ही है इस विषय का पश्चात्ताप ही क्या? फिर हम तुम तो एक ही अंश के अवतार हैं तो हम आप अवश्य एक

में लीन होंगे अतएव इन निःसार बातों का विचार करना तो वृथा ही है परंतु यह अवश्य है कि मनुष्य देह धारण कर इस प्रकार कीर्ति संपादन करने का समय कठिनता से प्राप्त होता है।

राव हम्मीर जी के उपर्युक्त वक्तव्य का अंत होते ही वीरोचित उत्कर्ष से भरा हुआ मीर महिमाशाह रणक्षेत्र के मध्य में आ उपस्थित हुआ। उसकी बरनी पर इधर से उसका छोटा भाई मीर गभरू उसके सामने जा जुटा। जिस समय ये दोनों वीर बांधव एक दूसरे पर प्रहार करने को थे कि अलाउद्दीन ने हँसकर कहा "मीर महिमाशाह मैं सच्चे दिल से तेरी तारीफ करता हूँ। जिस वक्त से तूने दिल्ली छोड़ी उस वक्त से आज तक मुझको सिर न झुकाया, बस अब तुम खुशी से मेरे पास चले आओ मैं तुम्हारा कुसूर माफ करता हूँ और यह बेगम भी तुमको देना कबूल करता हूँ। साथ ही इसके गोरखपुर का परगना जागीर में दूँगा।" इस पर महिमाशाह ने मुस्कराते हुए सहज स्वभाव से उत्तर दिया कि अब आपका यह कहना वृथा है, आप जरा उन बातों का ख्याल भी तो कीजिए जो आपने उस समय कही थीं। यदि अब फिर से भी उसी माता की कुक्षि से जन्म लूँ तब भी राव जी को नहीं छोड़नेवाला हूँ।

मीर महिमाशाह को बादशाह से बातें करते देखकर राव जी ने कुमक भेजी। इधर मीर गभरू ने भी कहा कि हे भाई, अब वृथा की दंत कथाओं के क्रंदन करने से क्या लाभ है, आओ इस सुअवसर पर हम और आप दोनों अपने अपने धर्म को पालन करते हुए स्वर्ग की सीढ़ी पर पैर देवें। यह कहते हुए दोनों भाई अपने अपने स्वामियों की जयकार मनाते हुए एक दूसरे से जुट पड़े। मीर गभरू ने अपने बड़े भाई महिमाशाह के पैर छूकर कहा "अब मुझे आज्ञा हो।" इसके उत्तर में महिमाशाह ने कहा कि "स्वामिधर्म्म पालन में दोष ही क्या है?" पहले तो दोनों भाई परस्पर खड्ग से लड़ते रहे किंतु जब बहुत देर हो गई तब दोनों अपने अपने घोड़ों पर से उतरकर परस्पर द्वंद्व युद्ध में प्रवृत्त हुए, और दोनों सेनाओं के देखते

ही दोनों वीर भाई स्वर्ग को सिधारे।

जब महिमाशाह मारा जा चुका तब अलाउद्दीन ने राव हम्मीर जी से कहा कि अब आप युद्ध न कीजिए; मैं आपकी अक्षय वीरता से अत्यंत प्रसन्न होकर आपको अपनी तरफ से पाँच परगने और देना स्वीकार करता हूँ और यह भी प्रतिज्ञा करता हूँ कि अब मेरे रहते आप स्वच्छंदतापूर्वक रणथंभ का राज्य कीजिए। इसके उत्तर में हम्मीर जी ने कहा कि अब आपका यह विचार केवल विडंबना है। अब जो कुछ भविष्य में होगा वही होगा, मैं इस क्षणभंगुर जीवन की अभिलाषा वा राज्यसुख के लोभ से अक्षय कीर्ति को त्यागनेवाला नहीं हूँ। रावण, दुर्योधन आदि वीरों ने कीर्ति के लिये ही तन को तिनका सा त्याग दिया, हम तुम दोनों एक ही पद्म ऋषि के अंश से उत्पन्न हैं, अतएव अब यही उचित है कि इस सुअवसर पर समर भूमि में अनित्य शरीर को विसर्जन करके हम आप स्वर्ग में सदैव के लिये सहवास करें।

राव जी के ऐसे वचन सुनकर अलाउद्दीन ने अपनी सेना को आक्रमण करने की आज्ञा दी। उधर से राजपूत सेना भी प्राण का मोह छोड़कर मदोन्मत्त मातंग की तरह मुसलमानों से जंग करने को वीरत्व के उमंग में भरी हुई उमड़ पड़ी। जिस समय दसों दिग्गजों के हृदय को कंपायमान करनेवाले रणवाद्यों को बजाती हुई दोनों सेनाएँ परस्पर मिल रही थीं उसी समय भोज नामक भीलों के सर्दार ने राव जी से अपने हरावल में होने की आज्ञा माँगी। रावजी ने कहा कि तुम चित्तौर की रक्षा करो। इसपर उसने उत्तर दिया कि मुझे श्रीमान् की आज्ञा मानने में किसी प्रकार की आपत्ति नहीं है, परंतु मैंने जो आजन्म श्रीमान् की चरण-सेवा की है वह इसी अवसर के लिये; अतएव अब मुझे आज्ञा हो क्योंकि मैं अपने कर्त्तव्य के ऋण से उऋण होऊँ। यों कहकर भोजराज अपनी भील सेना सहित आगे बढ़ा। उधर से मीर सिकंदर हरावल में हुआ। मुसलमान सेना से तोप की गुरावें छुटती थीं और भील तीरों की वर्षा

करते थे। इसी समय भोजराज और सिकंदर का मुकाबला हुआ। इधर से भोजराज ने सिकंदर पर कटार का वार किया और उसने तलवार चलाई, निदान दोनों वीर एक ही समय धराशायी हुए। इस युद्ध में भोजराज के साथवाले दो हजार भील और सिकंदर की तरफ के तीस हजार कंधारी योद्धा काम आए और शाही सेना भाग उठी।

उसी समय राव हम्मीर जी ने भोजराज की लाश के पास हाथी जा डटाया और उस वीर के मृतक शव को देखकर राव जी ने आँसुओं से नेत्र डबडबाई हुई अवस्था में कहा—धन्य हो वीरवर! तुमने स्वामिसेवा में प्राण देकर अतुलित कीर्ति को संपादन किया। राव जी को रणक्षेत्र के बीच अचल भाव से स्थित देखकर अलाउद्दीन ने अपने भागते हुए वीरों से कहा—"रे मूर्ख मनुष्यो, तुमने जिस मेरे कारण आजन्म आनंद से जीविका निर्वाह की, अहर्निश आनंद आमोद में व्यतीत किए, आज तुम्हें लड़ाई का मैदान छोड़कर भागते हुए शरम नहीं आती।" इतना सुनते ही मुसलमान सेना भूखे बाघ या फुफकारते हुए सर्प की तरह लौट पड़ी। यहाँ राजपूत तो सदैव प्राण हथेली पर रखे हुए थे, दोनों में इस तरह कड़ाचूर मार पड़ी कि रणभूमि में रक्त की नदी बह निकली, उस वेग से बहती हुई शोणित सरिता में जहाँ तहाँ पड़े हुए हाथियों के शव वास्तविक चट्टानों से भासित होते थे, वीरों के हाथ पाँव जंघा इत्यादि कटे हुए अवयव जलचर जीव से तैरते ज्ञात होते थे, वीरों के सचिक्कन केश सिवार और ढाल कच्छप सी प्रतीत होती थी, नव युवा वीरों के कटे हुए मस्तक कमल से और उनके आरक्त बड़े बड़े नेत्र खंजन से खिलते हुए नजर आते थे। इस पसर में ७५ हाथी, सवा लाख घोड़े, ७०० निशानवाले और अगनित योधा काम आए। सिकंदर शाह, शेर खाँ, मरहम खाँ, मोहब्बत खाँ, मुदफ्फर या मुजफ्फर खाँ, नूर खाँ, निजाम खाँ इत्यादि मुसलमान वीर मारे गए और राव जी की तरफ के भी नामी नामी चार सौ योद्धा खेत रहे।

इसी मारामार में राव हम्मीर जी ने अपने हाथी को अलाउद्दीन के संमुख डटाए जाने की आज्ञा दी और कहला भेजा कि अबतक वृथा ही रक्त प्रवाह हुआ है अब आइए हमारा आपका द्वंद्व युद्ध हो और सब द्वंद्व समाप्त हो। राव जी का यह सँदेसा सुनकर अलाउद्दीन ने मंत्री से पूछा कि अब क्या करें। तब मंत्री ने उत्तर दिया कि उस चहुआन के बल प्रताप एवं पराक्रम से आप अपरिचित नहीं हैं अतएव मेरे विचार में तो यही आता है कि अब आप संधि कर लें तो सर्वथा भला है। निदान अलाउद्दीन ने वजीर की बात मानकर हम्मीर जी के पास संधि का प्रस्ताव भेजा परंतु उस वीर हम्मीर ने उत्तर दिया कि युद्धस्थल में उपस्थित होकर मित्रता का प्रस्ताव करना भला कौन सी नीति और बुद्धिमत्ता का काम है ! शत्रु के संमुख विनती करना नितांत कातरता अथवा दंभमय चतुरता का पता देता है।

बादशाह के दूत को इस प्रकार नीतियुक्त उत्तर देकर राव जी ने अपने राजपूत वीरों को आज्ञा दी कि "हे वीरवर योद्धाओ, अब मेरी यही इच्छा है कि आप तोप, बाण, हथनार, चादर, जंबूर, बंदूक, तमंचा, बरछा, सेल, साँग इत्यादि हथियारों को त्यागकर केवल तलवार, छुरी, कटारी और विषाण से काम लो अथवा मल्लयुद्ध द्वारा ही अपने पराक्रम का परिचय देते हुए स्वर्ग की सीढ़ी पर पैर दो। साथ ही मेरी यह भी आज्ञा है कि बादशाह को न मारना।"

राव जी के इतना कहते ही राजपूत रावत, महावत से हकारे हुए हाथी की तरह अपने अपने उज्ज्वल शस्त्रों को चमकाते हुए चल पड़े। क्षुधित मृगराज की भाँति रणबाँकुरे राजपूतों का वेग मुसलमानी सेना क्षण भर न सह सकी और बड़े बड़े सैनिक अमीर उमरा भेड़ की भाँति भाग उठे। राजपूत सेना ने अलाउद्दीन के हाथी को घेर लिया और उसे रावहम्मीर जी के संमुख ले आए। राव जी ने विवश हुए बादशाह को देखकर अपने सर्दारों से कहा कि यह पृथ्वी-

पति बादशाह है। अदंड्य है। इसलिये आप लोग इसे यों ही छोड़ दीजिए। निदान राजपूत सर्दारों ने राव जी की आज्ञा मानकर अलाउद्दीन को उसकी सेना में पहुँचा दिया और वह भी उसी समय वहाँ से कूचकर दिल्ली को चला आया।

उधर राव हम्मीर जी ने अपने घायलों को उठवाकर और बादशाही सेना से छीने हुए निशान लिवाकर निज दुर्ग की तरफ फेरा किया।

राव जी ने भूलवश, अथवा विजय के उत्साहवश, शाही निशानों को आगे चलने की आज्ञा दी, यह देखकर रानी जी ने समझा कि रावजी खेत हार गए और यह किले पर शाही सेना आ रही है। ऐसा विचार कर रानीजी ने अन्यान्य सब परिवार की वीर महिलाओं सहित प्रज्वलित अग्नि में शरीर होम कर शाका किया। जब राव जी ने किले में आकर यह दृश्य देखा तो सब सर्दारों और सैनिकों को आज्ञा दी कि वे चित्तौर में जाकर कुँअर रतनसेन की रक्षा करें और आप शिव के मंदिर में जाकर नाना प्रकार के पूजन अर्चन करके यह वरदान माँगा कि अब जो मैं पुनः जन्म धारण करूँ तो इसी प्रकार वीर क्षत्रिय कुल में। और खड्ग खींचकर अपने ही हाथों से कमल के पुष्प के समान अपना माथा उतार शिव जी को चढ़ा दिया।

जब यह समाचार अलाउद्दीन के कर्णगोचर हुआ तो राव जी के कर्तव्य पर पश्चात्ताप करता हुआ वह फौरन फिर आया और राव जी के संमुख खड़ा होकर अदब से प्रणाम करता हुआ बोला कि अब मुझे क्या आज्ञा है। यह सुनकर राव जी के मस्तक ने उत्तर दिया कि तुम जाकर समुद्र में शरीर छोड़ो तब हम तुम मिलेंगे। राव जी के शीश के वचन मानकर अलाउद्दीन ने वजीर महरम खाँ को आज्ञा दी कि वह सब लश्कर सहित दिल्ली जाकर "शाहजादा" अलावृत्त को तख्त पर बिठावे और वह आप उसी क्षण रामेश्वर को चला गया। वहाँ पर उसने रामेश्वर जी की पूजा की और उन्हीं का

ध्यान और स्मरण करते हुए समुद्र में वह कूद पड़ा।

इस प्रकार बादशाह के तन त्यागने पर राव हम्मीर जी और अलाउद्दीन और मीर महिमाशाह परस्पर स्वर्ग में गले मिले और अप्सराओं और देवताओं ने पुष्पवृष्टि की।

इस प्रकार राव हम्मीर जी का यश-कीर्तन सुनकर राव चंद्रभान जी ने कवि जोधराज को बहुत सा दान दिया, और सब भाँति से प्रसन्न किया।

चैत्र सुदी तृतीया वृहस्पतिवार संवत् १८८५ को ग्रंथ पूर्ण हुआ।

यह जोधराज कृत हम्मीररासो का सारांश हुआ। इसमें दी हुई ऐतिहासिक बातों पर विचार करने के पहले मैं एक दूसरे कवि की लिखी हुई हम्मीर राव की कथा का सारांश देना चाहता हूँ। नयनचंद्र सूरि नामक एक जैन कवि ने हम्मीर महाकाव्य नाम का एक ग्रंथ संस्कृत में लिखा है। नयनचंद्र जयसिंह सूरि का पौत्र था। वह ग्रंथ पंद्रहवीं शताब्दी का लिखा हुआ जान पड़ता है। सन् १८७८ में पंडित् नीलकंठ जनार्दन ने इस काव्य का एक संस्करण छपाया जिसकी भूमिका में उन्होंने काव्य का सारांश दिया है उससे नीचे लिखा वृत्तांत मैं हिंदी में उद्धृत करता हूँ। यहाँ पर इस ग्रंथ में दिया हुआ हम्मीरदेव के वंश का कुछ वृत्तांत दे देना उचित जान पड़ता है।

चौहान वंश में दीक्षित वासुदेव नाम का एक पराक्रमी राजा हुआ। इसका पुत्र नरदेव था। इसके अनंतर हम्मीर तक वंशक्रम इस प्रकार है—

चंद्रराज
जयपाल
जयराज
सामंतसिंह
गुयक
नंदन

वप्रराज

हरिराज

सिंहराज—इसने हेनिम नाम के मुसलमान सर्दार को मारा।

भीम—सिंह का भतीजा और उसका दत्तक पुत्र।

विग्रहराज—गुजरात के मूलराज को मारा।

गंगदेव

वल्लभराज

राम

चामुंडराज—हेजम्मुद्दीन को मारा।

दुर्लभराज—शहाबुद्दीन को जीता।

दुशल—कर्णदेव का मारा।

वीसलदेव—शहाबुद्दीन को मारा।

पृथ्वीराज—प्रथम

अल्हण

अनल—अजमेर में तालाब खुदवाया।

जगदेव

वीशल

जयपाल

गंगपाल

सोमेश्वर—कर्पूरादेवी से विवाह किया।

पृथ्वीराज—द्वितीय

हरिराज

गोविंद

वाल्हण—प्रल्हाद और वाग्भट्ट दो पुत्र हुए।

प्रह्लाद

वीरनारायण—प्रह्लाद का पुत्र।

वाग्भट्ट—वाल्हण का पुत्र।

वाग्भट्ट के उत्तराधिकारी उनके पुत्र जैत्रसिंह हुए। उनकी रानी

का नाम हीरादेवी था जो बहुत रूपवती और सर्वथा अपने उच्च पद के योग्य थी। कुछ काल में हीरादेवी गर्भवती हुई। उसकी इस अवस्था की वासनाओं से गर्भस्थित जीव की प्रवृत्ति और उसके महत्त्व का आभास मिलता था। कभी कभी उन्हें मुसलमानों के रक्त से स्नान करने की इच्छा होती। उसके पति उसकी अभिलाषाओं को पूरा करते; अंत में, शुभ घड़ी में, उसको एक पुत्र उत्पन्न हुआ। पृथ्वी की चारों दिशाओं ने सुंदर शोभा धारण की; सुखद समीर बहने लगा; आकाश निर्मल हो गया; सूर्य्य मृदुलता से चमकने लगा; राजा ने अपना आनंद ब्राह्मणों पर सुवर्ण बरसाकर और देवताओं की वंदना करके प्रगट किया। ज्योतिषियों ने बालक के मुहूर्त्तस्थान में पड़े हुए नक्षत्रों के शुभ योग का विचार करके भविष्यद्वाणी की कि कुमार समस्त पृथ्वी को अपने देश के शत्रु मुसलमानों के रक्त से आर्द्र करेगा। बालक का नाम हम्मीर रखा गया। हम्मीर बढ़कर एक सुंदर और बलिष्ठ बालक हुआ उसने सब कलाओं को सीख लिया और शीघ्र ही वह युद्ध-विद्या में भी निपुण हो गया !,

जैत्रसिंह के सुरत्राण और विराम दो और पुत्र थे, जो बड़े योद्धा थे। यह देखकर कि उनके पुत्र अब उनको राज्य के भार से मुक्त करने योग्य हो गए, जैत्रसिंह ने एक दिन हम्मीर से इस विषय में बातचीत की, और उन्हें किस रीति से चलना चाहिए इस विषय में उत्तम उपदेश देने के उपरांत, राज्य उनके (हम्मीर के) हवाले कर दिया, और वे आप वनवास करने चले गए। यह बात संवत् १३३९ (१२८३ ई०) में हुई।[1]

छः गुणों और तीन शक्तियों से संपन्न होकर हम्मीर ने युद्ध के

१—ततश्च सवन्नववह्नि वह्निभूहायने माघवलक्षपक्षे।
पौष्यां तिथौ हेलिदिने सपुष्ये दैवज्ञनिर्दिष्टबलेऽलिलग्ने॥
सर्ग ८ श्लोक ५६

हेतु प्रस्थान करने का संकल्प किया। पहले वह राजा अर्जुन की राजधानी सरसपुर में गया। यहाँ एक युद्ध हुआ जिसमें अर्जुन पराजित होकर अधीन हुआ। इसके अनंतर राजा ने गढ़मंडले पर चढ़ाई की, जिसने कर देकर अपनी रक्षा की। गढ़मंडले से हम्मीर धार की ओर बढ़ा। यहाँ एक राजा भोज राज्य करता था जो स्वनामधारी विख्यात राजा भोज के समान ही कवियों का मित्र था। भोज को पराजित करके सेना उज्जैन में आई जहाँ हाथी, घोड़े और मनुष्य क्षिप्रा के निर्मल जल में नहाए। राजा ने भी नदी में स्नान किया और महाकाल के मंदिर में जाकर पूजा की। बड़े समारोह के साथ वे उस प्राचीन नगरी के प्रधान मार्गों से होकर निकले। उज्जैन से हम्मीर चित्रकोट (चित्तौर) की ओर बढ़ा और मेढ़वार (मेवाड़) को उजाड़ करता हुआ आबू पर्वत पर गया।

वेद के अनुयायी होकर भी यहाँ हम्मीर ने मंदिर में ऋषभदेव की पूजा की, क्योंकि बड़े लोग विरोधसूचक भेदभाव नहीं रखते। वस्तुपाल के स्तुति-पाठ के समय भी राजा प्रस्तुत थे। वे कई दिन तक वशिष्ठ की कुटी में रहे, और मंदाकिनी में स्नान करके उन्होंने अचलेश्वर की आराधना की। यहाँ अर्जुन की कृतियों को देखकर वे बहुत ही आश्चर्यित हुए।

आबू का राजा एक प्रसिद्ध योद्धा था, किंतु उसके बल ने इस अवसरपर कुछ काम न किया और उसे हम्मीर के अधीन होना पड़ा।

आबू छोड़कर राजा वर्द्धनपुर आए और उस नगर को उन्होंने लूटा तथा नष्ट किया। चंगा की भी यही दशा हुई। यहाँ से अजमेर की राह स हम्मीर पुष्कर को गए जहाँ उन्होंने आदिवाराह की आराधना की। पुष्कर से राजा शाकंभरी को गए। मार्ग में मरहटा[1], खंडिल्ला, चमदा और काँकरोली लूटे गए। काँकरोली में

१–इस नाम का एक स्थान जोधपुर राज्य में है। जोधपुर राज्य में नाडोल नाम का एक गाँव है जहाँ आशापुरा देवी का स्थान है। रणथंभ से यदि नाडोल जाया जाय तो मेड़ता बीच में पड़ेगा।

त्रिभुवनेंद्र उनसे मिलने आए और अपने साथ बहुत सी अमूल्य भेंट लाए।

इन विशाद कार्यों को पूरा करके हम्मीर अपनी राजधानी को लौट आए। राजा के आगमन से वहाँ बड़ी धूम हुई। राज्य के सब से बड़े कर्म्मचारी धर्मसिंह के साथ दल बाँधकर अपने विजयी राजा की अगवानी के लिये बाहर आए। मार्ग के दोनों ओर प्रेमी प्रजा अपने राजा के दर्शन के हेतु उत्सुक खड़ी थी।

इसके कुछ दिन पीछे हम्मीर ने अपने गुरु विश्वरूप से कोटियज्ञ का फल पूछा और उनसे यह उत्तर पाकर कि इस यज्ञ के पूरा करने से स्वर्ग लोक प्राप्त होता है राजा ने आज्ञा दी कि कोटियज्ञ की तय्यारी की जाय। चट देश के सब भागों से विद्वान ब्राह्मण बुलाए गए, और यज्ञ पवित्र शास्त्रों में लिखे विधानों के अनुसार समाप्त किया गया। ब्रह्मणों को खूब भोजन कराकर उन्हें भरपूर दक्षिणा दी गई। इसके उपरांत राजा ने एक महीने तक के लिये मुनिव्रत ठाना।

जब कि रणथंभौर में ये सब बातें हो रही थीं, दिल्ली में, जहां अलाउद्दीन राज्य करता था, कई परिवर्त्तन हुए। रणथंभौर में जो कुछ हो रहा था उसका समाचार पाकर उसने अपने छोटे भाई उलुगखाँ [1] को सेना लेकर चौहान प्रदेश पर चढ़ाई करने और उसको उजाड़ देने की आज्ञा दी। उसने कहा "जैत्रसिंह हम लोगों को कर देता था; पर यह उसका बेटा न कि केवल कर ही नहीं देता वरन् हम लोगों के प्रति अपनी घृणा दिखाने के लिये प्रत्येक अवसर ताकता रहता है। यह उसकी शक्ति को नष्ट करने का अच्छा अवसर है।" ऐसी आज्ञा पाकर उलुगखाँ ने ८०००० सवार लेकर रणथंभौर प्रदेश पर चढ़ाई की। जब यह सेना वर्णनाशा नदी पर पहुँची तब उसने देखा कि सड़कें, जो शत्रु के प्रदेश को गई हैं, सवारों के चलने योग्य नहीं हैं। इससे वह कई दिन वहाँ टिका रहा; इस बीच में उसने आस पास के गाँवों को जलाया और नष्ट किया।

१—मालिक मुईजुद्दीन उलुगखाँ। बिग्स ने अपने फिरिश्ता के अनुवाद में इसको "अलफखाँ" लिखा है।

यहाँ रणथंभौर में मुनिव्रत पूरा न होने के कारण राजा स्वयं युद्धक्षेत्र में न जा सकते थे। अतएव उन्होंने भीमसिंह और धर्म्मसिंह अपने सेनापतियों को आक्रमणकारियों को भगाने के लिये भेजा। राजा की सेना वर्णनाशानदी के किनारे एक स्थान पर आक्रमणकारियों पर टूट पड़ी और उसने शत्रुओं को, जिनके बहुत से लोग मारे गए, परास्त किया। इस जयलाभ से संतुष्ट होकर भीमसिंह रणथंभौर की ओर लौटने लगा, और उलुगखाँ अपनी सेना का प्रधान अंग साथ लिए छिपकर उसके पीछे पीछे बढ़ने लगा। अब यह हुआ कि भीमसिंह के सिपाही, जिन्होंने लूट में बहुत सा धन पाया था, उसको रक्षापूर्वक अपने अपने घर ले जाने को व्यग्र थे, और इसी व्यग्रता में उन्होंने अपने नायक को पीछे छोड़ दिया जिसके साथ केवल अनुचरों की एक छोटी सी मंडली रह गई। जब इस प्रकार भीमसिंह हिंदावत घाटी के बीचोबीच पहुँचा तब उसने विजय के अभिमान में उन नगाड़ों और बाजों को जोर से बजाने की आज्ञा दी जिनको उसने शत्रु से छीना था। इस कार्य्य का फल अचिंत्यपूर्व और आपत्तिजनक हुआ। उलुगखाँ ने अपनी सेना को छोटे छोटे दलों में भीमसिंह का पीछा करने की आज्ञा दे रखी थी और बाजा बजाते ही उसे शत्रु के ऊपर जयलाभ की सूचना समझ, उसपर टूट पड़ने का आदेश दे रखा था। अतः जब मुसल्मानों के पृथक् पृथक् दलों ने नगाड़ों का शब्द सुना तब वे चारों ओर से घाटी में आ पहुँचे, और उलुगखाँ भी एक ओर से आकर भीमसिंह से युद्ध करने लगा। हिंदू सेनापति कुछ काल तक यह बेजोड़ की लड़ाई लड़ता रहा, पर अंत में घायल हुआ और मारा गया। शत्रु के ऊपर यह जयलाभ पाकर उलुगखाँ दिल्ली लौट गया।

यज्ञ पूरा होने के उपरांत हम्मीर ने युद्ध का वृत्तांत और अपने सेनापति भीमसिंह की मृत्यु का समाचार सुना। उन्होंने धर्म्मसिंह को भीमसिंह का साथ छोड़ने के लिये धिक्कारा, उसको अंधा कहा

क्योंकि वह यह न देख सका कि उलुगखाँ सेना के पीछे पीछे था।

उन्होंने उसको क्लीव भी कहा क्योंकि, वह भीमसिंह की रक्षा के लिये नहीं दौड़ा। इस प्रकार धर्म्मसिंह को धिक्कारकर ही संतुष्ट न होकर राजा ने उस दोषी सेनापति को अंधा करने और उसको क्लीव करने की आज्ञा दी। सेनानायक के पद पर भी धर्म्मसिंह के स्थान पर भोजदेव हुए, जो राजा के एक प्रकार से भाई होते थे और धर्म्मसिंह को देश निकालने का दंड भी सुनाया जा चुका था पर भोजदेव के बीच में पड़ने से उसका वर्त्ताव नहीं हुआ।

धर्म्मसिंह इस प्रकार अवयवभग्न और अपमानित होकर राजा के इस व्यवहार से अत्यंत दुःखित हुआ, और उसने बदला लेने का संकल्प किया। अपने संकल्पसाधन के हेतु उसने राधादेवी नाम की एक वेश्या से, जिसका दरवार में बहुत मान था, गहरी मित्रता की। राधादेवी नित्य प्रति जो कुछ दरबार में होता उसकी रत्ती रत्ती सूचना अपने अंधे मित्र को देती। एक दिन ऐसा हुआ कि राधादेवी बिलकुल उदास और मलिन घर लौटी, और जब उसके अंधे मित्र ने उसकी उदासी का कारण पूछा तव उसने उत्तर दिया कि आज राजा के वहुत से घोड़े वेधरोग से मर गए इससे उन्होंने मेरे नाचने और गाने की ओर बहुत थोड़ा ध्यान दिया, और जान पड़ता है कि बहुत दिन तक यही दशा रहेगी। अंधे पुरुष ने उसे प्रसन्न होने को कहा क्योंकि थोड़े ही दिनों में सब फिर ठीक हो जायगा। उसे केवल राजा से यह जताने का अवसर देखते रहना चाहिए कि यदि धर्म्मसिंह अपने पहले पद पर फिर हो जाय तो वह राजा को जितने घोड़े हाल में मरे हैं उनसे दूने भेंट करे। राधादेवी ने अपना काम सफाई से किया, और राजा ने लोभ के वश में होकर धर्म्मसिंह को उसके पहले पद पर फिर आरूढ़ कर दिया।

धर्मसिंह इस प्रकार फिर से नियुक्त होकर बदले ही का विचार करने लगा। राजा का लोभ बढ़ाता गया और उसने अपने अत्याचार और लूट से प्रजा की ऐसी हीन दशा कर दी कि वह राजा से घृणा करने लगी। वह किसी को, जिसके कुछ घोड़ा, रुपया, कोई भी रखने

योग्य पदार्थ—मिल सकता था, न छोड़ता। राजा, जिसका कोष वह भरता था, अपने अंधे मंत्री से बहुत प्रसन्न रहता जिसने, सफलता से फूलकर भोजदेव से उसके विभाग का लेखा माँगा। भोज जानता था कि वह उसके पद से कुढ़ता है, अतः उसने राजा के पास जाकर धर्म्मसिंह के समस्त षड्यंत्र की बात कही और मंत्री के अत्याचार से रक्षा पाने के लिये उनसे प्रार्थना की। किंतु हम्मीर ने भोज की बात पर कुछ भी ध्यान नहीं दिया और कहा कि धर्म्मसिंह को पूरा अधिकार सौंपा गया है, वह जो उचित समझे कर सकता है, इसलिये यह आवश्यक है कि और लोग उसकी आज्ञा मानें। भोज ने जब देखा कि राजा का चित्त उसकी ओर से फिर गया है तब उसने अपनी संपत्ति जब्त होने दी और धर्म्मसिंह के आज्ञानुसार उसे लाकर राजा के भांडार में रखा। पर कर्त्तव्य के अनुरोध से वह अपने नायक के साथ अब भी जहाँ कहीं वे जाते जाता रहता था। एक दिन राजा वैजनाथ के मंदिर में पूजन के हेतु गए और भोज को अपने दल में देखकर उन्होंने एक सभासद से, जो पास खड़ा था, व्यंग्यपूर्वक कहा कि 'पृथ्वी अधम जनों से भरी है; किंतु पृथ्वी पर सबसे अधम जीव कौआ है, जो क्रुद्ध उल्लू से अपने पर नोचवाकर भी अपने पुराने पेड़ों पर के घोंसले में पड़ा रहता है।' भोज ने इस व्यंग्य का अर्थ समझा और यह भी जाना कि यह उसी पर छोड़ा गया है। अत्यंत दुखी होकर वह घर लौट गया और उसने अपने अपमान की बात अपने छोटे भाई पीतम से कही। दोनों भाइयों ने अब देश छोड़ने का संकल्प किया, और दूसरे दिन भोज हम्मीर के पास गया और उसने बड़ी नम्रता से तीर्थाटन के हेतु काशी जाने की अनुमति माँगी। राजा ने उसकी प्रार्थना स्वीकार की और कहा कि काशी क्या जी चाहे तो तुम और आगे जा सकते हो—तुम्हारे कारण नगर उजड़ जाने का भय नहीं है।' इस अविनीत वचन का उत्तर भोज ने कुछ न दिया। वह प्रणाम करके चला गया और उसने तुरंत काशी के हेतु प्रस्थान कर दिया। राजा भोजदेव के चले जाने से प्रसन्न हुआ और उसने

कोतवाल का पद, जो (उसके जाने से) खाली हुआ, रतिपाल को प्रदान किया।

जब भोज शिरसा पहुँचा तब उसने अपने दिन के फेर पर विचार किया और संकल्प किया कि इन अपमानों का बिना बदला लिए न रहना चाहिए। चित्त की इसी अवस्था में वह अपने भाई पीतम के साथ योगिनीपुर गया और वहाँ अलाउद्दीन से मिला। मुसलमान सरदार अपने दरबार में भोज के आ जाने से बहुत प्रसन्न हुआ। उसने बड़े आदर से उसके साथ व्यवहार किया और जगरा का नगर तथा इलाका उसे जागीर में दिया। अब से पीतम तथा भोज के परिवार के और लोग यहाँ रहने लगे और वह आप (भोज) दरबार में रहने लगा। अलाउद्दीन का अभिप्राय हम्मीर का वृत्त जानने का था इस लिये भेंट और पुरस्कार से दिन दिन भोज की प्रतिष्ठा बढ़ाने लगा और वह भी धीरे धीरे अपने नए स्वामी के हित-साधन में तत्पर हुआ।

भोज को अपने पक्ष में समझ अलाउद्दीन ने एक दिन उससे अकेले में पूछा कि हम्मीर को दबाने का कोई सुगम उपाय है। भोज ने उत्तर दिया कि हम्मीर ऐसे राजा पर विजय पाना कोई सहज काम नहीं है। जिससे कुंतल, मध्यदेश, अंग और कांची तक के राजा भयभीत रहते हैं, जो छः गुणों और तीन शक्तियों से संपन्न, एक विशाल और प्रबल सेना का नायक है, जिसकी और समस्त राजा शंका करते और आज्ञा मानते हैं, कई राजाओं को दमन करनेवाला पराक्रमी विराम जिसका भाई है, जिसकी सेवा में महिमासाह तथा और दूसरे निःशंक मोगल सर्दार रहते हैं, जिसने उसके भाई को हराकर स्वयं अलाउद्दीन को छकाया। भोज ने कहा कि न केवल हम्मीर के पास योग्य सेनापति ही हैं वरन् वे सबके सब उससे स्नेह रखते हैं। एक ओर के सिवाय और कहीं लोभ दिखाना असंभव है। हम्मीर की सभा में केवल एक ही व्यक्ति ऐसा है जो अपने को बेच सकता है। जैसे दीपक के लिये वायु का झोंका, कमल के लिये मेघ, सूर्य

के लिये रात्रि, यती के लिये स्त्रियों का संग, दूसरे गुणों के लिये लोभ वैसे ही हम्मीर के लिये अप्रतिष्ठा और नाश का कारण यह एक व्यक्ति है। भोज ने कहा कि वह समय भी हम्मीर के विरुद्ध चढ़ाई करने के लिये अनुपयुक्त नहीं है। इस वर्ष चौहान प्रदेश में खूब अन्न हुआ है। यदि किसी प्रकार अलाउद्दीन उसे रखने के पहले ही किसानों से छीन सके तो वे जो कि अंधे व्यक्ति के अत्याचार से पहले ही से पीड़ित हैं, हम्मीर का पक्ष छोड़ने पर सम्मत हो सकते हैं।

अलाउद्दीन को भोज का विचार पसंद आया और उसने तुरंत उलुगखाँ को एक लाख सवारों की सेना लेकर हम्मीर के देश पर आक्रमण करने की आज्ञा दी। उलुगखाँ की सेना एक प्रबल धारा के समान जिन प्रदेशों से होकर निकलती उनके अधिपतियों को नरकट के समान नवाती चली जाती। सेना इसी ढंग से हिंदावत पहुँच गई। तब उसके आने का समाचार हम्मीर तक पहुँचाया गया। इस पर उस हिंदू राजा ने एकसभा की और विचार किया कि किन उपायों का अवलंबन करना अच्छा होगा। यह निश्चय हुआ कि वीरम और राज्य का शेष आठ बड़े पदाधिकारी शत्रु से युद्ध करने जायँ। तुरंत राजा के सेनानायकों ने सेना को आठ भागों में विभक्त किया और आठों दिशाओं से आकर वे मुसलमानों पर टूट पड़े। वीरम पूर्व से आया और महिमासाह पश्चिम से। जाजदेव दक्षिण से और गर्भारूक उत्तर की ओर से बढ़ा। रतिपाल अग्निकोण से आया और तिचर मोगल ने वायुकोण से आक्रमण किया। रणमल ईशानकोण से आया और वैचर ने नैऋत्य की ओर से आकर आक्रमण किया। राजपूत लोग बड़े पराक्रम के साथ अपने कार्य्य में तत्पर हुए। उनमें से कई एक ने शत्रु की खाइँयों को मिट्टी और कूड़े करकट से भर दिया, कई एक ने मुसलमानों के लकड़ी के घेरों में आग लगा दी। कुछ लोगों ने उनके डेरों (खेमों) की रस्सियों को काट डाला। मुसलमान लोग शस्त्र

लेकर खड़े थे और डींग हाँककर कहते थे कि हम राजपूतों को घास के समान काट डालेंगे। दोनों दल साहसपूर्वक जी खोलकर लड़े, किंतु राजपूतों के लगातार आक्रमण के आगे मुसल्मानों को हटना पड़ा। अतएव उनमें से बहुतों ने रणक्षेत्र त्याग दिया और वे अपना प्राण लेकर भागे। कुछ काल पीछे समस्त मुसल्मानी सेना ने इसी रीति का अनुसरण किया और वह कायरता से युद्धक्षेत्र से भागी; राजपूतों की पूरी विजय हुई।

जब युद्ध समाप्त हो गया तब सीधे सादे राजपूत लोग युद्धस्थल में अपने मरे और घायल लोगों को उठाने आए। इस खोज में उन्होंने बहुत सा धन, शस्त्र, हाथी और घोड़े पाए। शत्रु की बहुत सी स्त्रियाँ उनके हाथ आईं। रतिपाल ने आते हुए प्रत्येक नगर में उनसे मट्ठा बेचवाया।

हम्मीर शत्रु के ऊपर अपने सेनापतियों की इस विजयप्राप्ति से अत्यंत प्रसन्न हुए। इस घटना के उपलक्ष में उन्होंने एक बड़ा दरबार किया। दरबार में राजा ने रतिपाल को सोने की सिकरी पहनाई, और उसकी तुलना युद्ध के हाथी से की जो सुवर्ण के पट्टे का अधिकारी होता है। दूसरे सरदार और सिपाही लोग भी अपनी अपनी योग्यता के अनुसार पुरस्कृत किए गए और अनुग्रहपूर्वक उन्हें अपने अपने घर जाने की आज्ञा मिली।

मोगल सरदारों के सिवाय और सब लोग चले गए। हम्मीर ने यह बात देखी और कृपापूर्वक उनसे रह जाने का कारण पूछा। उन्होंने उत्तर दिया कि कृतघ्न भोज को, जो जगरा में जागीर भोग रहा है, दंड देने के पहले हम तलवार म्यान में करना और अपने घर जाना बुरा समझते हैं। उन्होंने कहा कि राजा के संबंध के कारण ही हम लोगों ने उसे अब तक जीता छोड़ा है; किंतु अब वह इस सहनशीलता के योग्य नहीं रहा क्योंकि उसी की प्रेरणा से शत्रु ने रणथंभौर प्रदेश पर चढ़ाई की थी। अतएव उन्होंने जगरा पर चढ़ाई करके भोज पर आक्रमण करने की अनुमति माँगी। राजा ने

प्रार्थना स्वीकार की और दोनों मोगलों ने तुरंत जगरा की ओर प्रस्थान किया। उन्होंने नगर को घेरकर ले लिया और पीतम को कई और मनुष्यों के साथ वंदी बनाकर वे उसे फिर रणथंभौर ले आए।

उलुगखाँ पराजय के पीछे तुरंत दिल्ली लौट गया और जो कुछ हुआ था अपने भाई से उसने सब कह सुनाया। उसके भाई ने उस पर कायरता का दोष लगाया; अपने भागने का दोष उसने यह कहकर मिटाया कि उस अवस्था में मेरे लिये केवल एक यही उपाय था जिससे इस संसार में एक वेर फिर मैं आपका दर्शन करता और चौहान से लड़ने के लिये दूसरा अवसर पाता। उलुगखाँ ने बात गढ़ कर छुट्टी भी न पाई थी कि क्रोध से लाल भोज भीतर आया। उसने अपने उपवस्त्र को पृथ्वी पर बिछा दिया और उसपर इस प्रकार लोटने और अंडवंड बकने लगा जैसे उस पर प्रेत चढ़ा हो। अला-उद्दीन को उसका यह विलक्षण आचरण कुछ कम वुरा नहीं लगा; उसने उसका कारण पूछा। भोज ने उत्तर दिया कि मेरे लिये इस विपत्ति को कभी भूलना कठिन है जो आज मुझपर पड़ी है; क्योंकि महिमासाह ने जगरा में जाकर मुझ पर आक्रमण किया और मेरे भाई पीतम को वंदी करके हम्मीर के पास ले गया। भोज ने कहा— लोग घृणा से मेरी ओर उँगली दिखाकर अब यही कहेंगे कि यह एक ऐसा मनुष्य है जिसने अधिक पाने के लालच से अपना सर्वस्व खो दिया। असहाय और अनाथ होकर मैं पृथ्वी पर अब भी बेखटके नहीं लेट सकता क्योंकि वह समस्त पृथ्वी हम्मीर की है; इसीलिये मैंने अपना वस्त्र बिछा दिया है जिसमें उसी पर मैं उस शोक में छटपटाऊँ जिसने मुझमें खड़े रहने की शक्ति भी नहीं रहने दी है।

अपने भाई की सहायता की कथा से अलाउद्दीन के हृदय में क्रोध की अग्नि पहले ही से जल उठी थी अब भोज की ये बातें उस अग्नि में आहुति के समान हुईं। हृदय के आवेग में अपनी पगड़ी को पृथ्वी पर पटककर उसने कहा कि हम्मीर की मूर्खता उस मनुष्य

की सी है जो समझता है कि मैं सिंह के कपाल पर पैर रख सकता हूँ, और प्रतिज्ञा की कि मैं चौहानों की समस्त जाति ही को नष्ट कर डालूँगा। उसने तुरंत अनेक देशों के राजाओं के पास पत्र भेजे और हम्मीर के विरुद्ध लड़ाई में योग देने के लिये उन्हें बुलाया। अंग, तैलंग, मगध, मैसूर, कलिंग, वंग, भोट, मेड़पाट, पंचाल, बंगाल, थमिम, भिल्ल, नेपाल तथा दाहल के राजा और कुछ हिमालय के सरदार अपना अपना दल आक्रमणकारी सेना में भरने को लाए। इस बहुरंगिनी सेना में कुछ लोग ऐसे थे जो युद्ध की देवी के प्रेम से आए थे, और कुछ ऐसे थे जो लूट की चाह से आक्रमणकारियों के दल में भरती हुए थे। कुछ लोग केवल उस घमासान युद्ध के दर्शक ही होने के हेतु आए थे जो होनेवाला था। हाथी, घोड़ों, रथों और मनुष्यों की इतनी 'कसामस थी कि भीड़ में कहीं तिल रखने की जगह नहीं थी। इस भारी समारोह के साथ दोनों भाई नसरतखाँ और उलुगखाँ रणथंभौर प्रदेश की ओर चले।

अलाउद्दीन छोटे से दल के साथ इस अभिप्राय से पीछे रह गया जिसमें राजपूतों को यह भय बना रहे कि अभी बादशाह के पास सेना बची है।

सेना की संख्या इतनी अधिक थी कि मार्ग में नदियों का जल चुक जाता था इससे यह आवश्यक हुआ कि सेना किसी एक स्थान पर कुछ घंटों से अधिक न ठहरे। कूच पर कूच बोलते दोनों सेनापति रणथंभौर प्रदेश की सीमा पर पहुँच गए। इससे आक्रमणकारियों के हृदयों में भिन्न भिन्न भाव उत्पन्न हुए। वे लोग जो पहली लड़ाई में संमिलित नहीं हुए थे कहते थे कि विजय पाना निश्चित है क्योंकि राजपूतों के लिये ऐसी सेना का सामना करना असंभव है। किंतु पहली लड़ाई के योद्धा लोग ऐसा नहीं समझते थे और अपने साथियों से कहते थे कि याद रखना हम्मीर की सेना से सामना करना है अतएव युद्ध के अंत तक डींग हाँकना बंद रखना चाहिए। जब सेना उस घाटी में पहुँची जहाँ उलुगखाँ की पराजय और

दुर्गति हुई थी तब उसने अपने भाई को शिक्षा दी कि अपनी शक्ति ही पर बहुत भरोसा न करना चाहिए, वरन, चूँकि स्थान विकट और हम्मीर की सेना बली और निपुण है, इससे यह चाल चलनी चाहिए कि किसी को हम्मीर की सभा में भेज दें जो दो चार दिन तक संधि की बातचीत में उन्हें बहलाए रहे; और इस बीच में सेना कुशलपूर्वक पर्वतों को पार करे और अपनी स्थिति दृढ़ कर ले। नसरतखाँ ने अपने भाई की इस अनुभवपूर्ण बात को माना, और मोल्हणदेव उन बातों का प्रस्ताव करने के लिये भेजा गया जिनसे मुसल्मान लोग हम्मीर के साथ संधि कर सकते थे। बातचीत होने तक हम्मीर के लोगों ने आक्रमणकारी सेना को उस भयानक घाटी को बे-रोक टोक पार करने दिया। अब खाँ ने अपने भाई को तो उस मार्ग के एक पार्श्व में स्थित किया जो मंडी पथ कहलाता था और उसने स्वयं श्रीमंडप के दुर्ग को छेंका। साथी राजाओं के दल जैत्रसागर के चारों ओर टिकाए गए।

दोनों पक्ष अपनी अपनी घात में थे। मुसल्मानों ने समझा कि हम आक्रमण आरंभ करने के लिये धूर्त्तता से उत्तम स्थिति पा गए हैं; उधर राजपूतों ने विचारा कि शत्रु अंतर्भाग में इतनी दूर बढ़ आए हैं कि वे अब हमसे किसी प्रकार भाग नहीं सकते।

रणथंभोर में खाँ के दूत ने राजा की आज्ञा से दुर्ग में प्रवेश पाया; जो कुछ उसने वहाँ देखा उससे उसपर राजा के प्रताप का आतंक छा गया। उसके हेतु जो दरबार हुआ उसमें वह गया, और आवश्यक शिष्टाचार के उपरांत उसने साहसपूर्वक उस सँदेसे को कहा जो लेकर वह आया था। उसने कहा 'मैं विख्यात अलाउद्दीन के भाई उलुगखाँ और नसतरखाँ का दूत होकर राजा के दरबार में आया हूँ; मैं राजा के हृदय में, यदि संभव हो, तो यह बात जमाने के लिये आया हूँ कि अलाउद्दीन ऐसे महाविजयी का सामना करना कैसा निष्फल है और उन्हें अपने सरदार से संधि कर लेने की संमति देने आया हूँ।' उसने हम्मीर से संधि के लिये यह चंद शर्तें

बतलाई—"चाहे आप मेरे सरदार को एक लाख मोहर, चार हाथी और तीन सौ घोड़े भेंट करें और अपनी बेटी अलाउद्दीन को ब्याह दें, अथवा उन चार विद्रोही मोगल सरदारों को मेरे हवाले कर दें जो अपने स्वामी के कोपभाजन होकर अब आप की शरण में रहते हैं।" दूत ने फिर कहा "यदि आप अपने राज्य और प्रताप को शांतिपूर्वक भोगना चाहते हों तो इन दो में से किसी शर्त को मानकर अपना अभिप्राय सिद्ध करने के लिये आपको अच्छा अवसर मिला है; इससे आपको शत्रुओं का नाश करनेवाले बादशाह अलाउद्दीन की कृपा और सहायता प्राप्त होगी जिसके पास असंख्य दृढ़ दुर्ग, सुसज्जित शस्त्रागार और मेगजीन हैं, जिसने देवगढ़ ऐसे ऐसे अगणित अजेय दुर्गों पर अधिकार करके महादेव को भी लज्जित किया क्योंकि उनकी (महादेव की) ख्याति तो अकेले त्रिपुर के गढ़ को सफलतापूर्वक अधिकृत करने से हुई है।"

हम्मीर जो दूत के वचन अधीर होकर सुनता रहा इस अपमानकारी सँदेसे से बहुत ही क्रुद्ध हुआ और उसने श्री मोल्हणदेव से कहा कि यदि तुम भेजे हुए दूत न होते तो जिस जीभ से तुमने ये अपमान-सूचक बातें कही हैं वह काट ली गई होती। हम्मीर ने न केवल इन शर्तों में से किसी को मानना अस्वीकार ही किया वरन् अपनी ओर से उतने खड्ग के आघात स्वीकार करने के लिये अलाउद्दीन से प्रस्ताव किया जितनी मुहर हाथी और घोड़े माँगने का उसने साहस किया, और दूत से यह भी कहा कि मुसलमान सरदार का इस रणभिक्षा को अस्वीकार करना सूअर खाने के बराबर होगा। बिना और किसी शिष्टाचार के दूत सामने से हटा दिया गया।

रणथंभौर की सेना युद्ध के लिये सुसज्जित होने लगी। बड़ी योग्यता और पराक्रम के सेनापति भिन्न भिन्न स्थानों की रक्षा के हेतु नियुक्त हुए। दुर्ग की दीवारों पर रक्षकों को धूप से बचाने के लिये इधर उधर डेरे गाड़े गए। कई स्थानों पर उबलता हुआ तेल

और राल रखी गई कि यदि आक्रमणकारियों में से कोई निकट आने का साहस करे तो उसके शरीर पर वह छोड़ दी जाय, उपयुक्त स्थानों पर तोपें चढ़ा दी गईं। अंत में मुसलमानी सेना भी रण-थंभौर दुर्ग के सामने आई। कई दिन तक घमासान युद्ध होता रहा। नसरतखाँ अचानक एक गोली के लगने से मर गया और बरसात के आ जाने पर उलुगखाँ को लड़ाई बंद करनी पड़ी। वह दुर्ग से कुछ दूर हट गया और उसने अलाउद्दीन के पास अपनी भयानक स्थिति का समाचार भेजा। उसने नसरत खाँ का शव भी समाधिस्थ करने के निमित्त उसके पास भेज दिया। अलाउद्दीन ने यह समाचार पाकर तुरंत रणथंभौर की ओर प्रस्थान किया। यहाँ पहुँचकर उसने तुरंत अपनी सेना को दुर्ग के द्वार की ओर बढ़ाया और उसे छेंक लिया।

हम्मीर ने इन कार्य्यों की तुच्छता सूचित करने के लिये दुर्ग की दीवारों पर कई जगह सूप के झंडे गड़वा दिए। इससे यह अभिप्राय झलकता था कि दुर्ग के संमुख अलाउद्दीन के आगमन से राजपूतों को कुछ भी बोझ वा कष्ट नहीं मालूम होता था। मुसलमान सरदार ने देखा कि उससे साधारण धैर्य और साहस के मनुष्यों से पाला नहीं पड़ा है, और उसने हम्मीर के पास सँदेसा भेजकर यह कहलाया कि मैं तुम्हारी वीरता से बहुत प्रसन्न हूँ, और ऐसा पराक्रमी शत्रु चाहे जिस बात की प्रार्थना करे उसे मानने में मैं प्रसन्न हूँ। हम्मीर ने उत्तर दिया कि यदि अलाउद्दीन जो मैं चाहूँ उसे देने में प्रसन्न है तो मेरे लिये इससे बढ़कर संतोष की बात और कोई नहीं होगी कि वह दो दिन मेरे साथ युद्ध करे, और मुझे आशा है कि मेरी यह प्रार्थना स्वीकृत होगी। मुसलमान सरदार ने इस उत्तर की यह कहकर बड़ी प्रशंसा की कि वह सर्वथा उसके प्रतिद्वंद्वी के साहस के योग्य है और उससे दूसरे दिन युद्ध रोपने का वचन दिया। इसके अनंतर अत्यंत भीषण और कराल युद्ध हुआ। इन दो दिनों में मुसलमानों के कम से कम ८५००० आदमी मारे गए। दोनों योद्धाओं के बीच कुछ दिन विश्राम

करना निश्चित होने पर लड़ाई कुछ काल के लिये बंद हुई।

इस बीच में एक दिन राजा ने दुर्ग के प्राचीर पर राधादेवी का नाच कराया; उनके चारों ओर बड़ा जमाव था। यह स्त्री क्रम से क्षण क्षण पर घूमती हुई, जिसे संगीत जाननेवाले ही अच्छी तरह समझ सकते थे, जान-बूझकर अपनी पीठ अलाउद्दीन की ओर फेर लेती थी जो किले से थोड़ी दूर नीचे अपने डेरे में बैठा यह देख रहा था। कोई अश्चर्य नहीं कि वह इस आचरण से रुष्ट हुआ, और क्रोध करके अपने पास के लोगों से उनसे कहा कि क्या मेरे असंख्य साथियों में कोई ऐसा है जो इस स्त्री को इतनी दूर से एक तीर से मारकर गिरा सकता है। एक सरदार ने उत्तर दिया कि मैं केवल एक आदमी को जानता हूँ जो यह काम कर सकता है, वह उड्डानसिंह है जिसे बादशाह ने कैद कर रखा है। कैदी तुरंत छोड़ दिया गया और अलाउद्दीन के पास लाया गया जिसने उसे उस सुंदर लक्ष्य पर अपना कौशल दिखाने की आज्ञा दी। उड्डानसिंह ने आज्ञानुसार वैसा ही किया, और एक क्षण में उस वीरांगना की सुंदर देह बाण से बिधकर दुर्ग की दीवार पर से सिर के बल नीचे गिरी।

इस घटना से महिमासाह को बहुत क्रोध हुआ और उसने राजा से अलाउद्दीन के साथ भी वही व्यवहार करने की अनुमति माँगी जो उसने बेचारी राधादेवी के साथ किया था। राजा ने उत्तर दिया कि मुझे तुम्हारी धनुर्विद्या का असाधारण कौशल विदित है, किंतु मैं नहीं चाहता कि अलाउद्दीन इस रीति से मारा जाय क्योंकि उसकी मृत्यु से मेरे साथ शस्त्र ग्रहण करनेवाला कोई पराक्रमी शत्रु न रह जायगा। महिमासाह ने तब प्रत्यंचा चढ़े हुए बाण को उड्डानसिंह पर छोड़ा और उसे मार गिराया। महिमासाह के इस कौशल ने अलाउद्दीन को इतना सशंकित कर दिया कि वह तुरंत अपने डेरे को झील के पूर्वीय पार्श्व से हटाकर पश्चिम की ओर ले गया जहाँ वे आक्रमणों से अधिक रक्षा हो सकती थी। जब डेरा हटाया गया तब राजपूतों ने देखा कि शत्रु ने नीचे नीचे सुरंग तैयार कर ली है, और

खाई के एक भाग पर मिट्टी से ढका हुआ लकड़ी और घास का पुल बाँधने का यत्न किया है। राजपूतों ने इस पुल को तोपों से नष्ट कर दिया, और सुरंग में खौलता हुआ तेल डालकर उन लोगों को मार डाला जो भीतर काम कर रहे थे। इस प्रकार अलाउद्दीन का गढ़ लेने का सब यत्न निष्फल हुआ। उसी समय वर्षा से भी उसे बहुत कष्ट होने लगा जो मूसलाधार होती थी। अतएव उसने हम्मीर के पास सँदेसा भेजा कि कृपा करके रतिपाल को मेरे डेरे में भेज दीजिए क्योंकि मुझे उनसे इस अभिप्राय से बातचीत करने की इच्छा है कि जिसमें हमारे और आपके बीच का झगड़ा शांतिपूर्वक तै हो जाय।

राजा ने रतिपाल को जाकर अलाउद्दीन की बात सुनने की आज्ञा दी। रणमल रतिपाल के प्रभाव से कुढ़ता था और नहीं चाहता था कि वह इस काम के लिये चुना जाय।

अलाउद्दीन रतिपाल से बड़े ही आदर के साथ मिला। उसके दरबार के डेरे में प्रवेश करने पर मुसलमान सरदार अपने स्थान पर से उठा और उसे आलिंगन करके उसने अपनी गद्दी पर बैठाया और वह आप उसके बगल में बैठ गया। उसने अमूल्य भेंट उसके सामने रखवाई तथा और भी पुरस्कार देने का वचन दिया। रतिपाल इस सुंदर व्यवहार से बहुत प्रसन्न हुआ। उस धूर्त मुसलमान ने यह देखकर और लोगों को वहाँ से हट जाने की आज्ञा दी। जब वे सब चले गए तब उसने रतिपाल से बातचीत आरंभ की। उसने कहा— "मैं अलाउद्दीन मुसलमानों का बादशाह हूँ, और मैंने अब तक सैकड़ों दुर्ग ढहाए और लिए हैं। किंतु शस्त्र के बल से रणथंभौर को लेना मेरे लिये असंभव है। इस दुर्ग को घेरने से मेरा अभिप्राय केवल उसके अधिकार की ख्याति पाना है। मैं आशा करता हूँ (जब कि आपने मुझसे मिलना स्वीकार किया है) कि मैं अपना मनोरथ सिद्ध करूँगा और अपनी इच्छा पूरी करने में मुझे आपसे कुछ सहायता पाने का भरोसा है। मैं अपने लिये और अधिक राज्य और किले नहीं चाहता। जब मैं इस गढ़ को लूँगा तब इसके सिवाय और क्या

कर सकता हूँ कि उसे आप ऐसे मित्र को दे दूँ ? मुझे तो उसके प्राप्त करने की ख्याति ही से प्रसन्नता होगी।" ऐसी ऐसी फुसलाहटों से रतिपाल का मन फिर गया और उसने इस बात का अलाउद्दीन को निश्चय भी करा दिया। इस पर, अलाउद्दीन अपने लक्ष्य को और भी दृढ़ करने के लिये रतिपाल को अपने हरम में ले गया और वहाँ उसने उसे अपनी सब से छोटी बहिन के साथ खान पान करने के लिये एकांत में छोड़ दिया। यह हो चुकने पर रतिपाल मुसलमानों के डेरे से निकलकर दुर्ग को लौट आया।

रतिपाल इस प्रकार अलाउद्दीन के पक्ष में हो गया। अतएव जब वह राजा के पास आया तब उसने जो कुछ मुसलमानों के डेरे में देखा था और जो कुछ अलाउद्दीन ने उससे कहा था, उसका सच्चा वृत्तांत नहीं कहा। यह न कहकर कि अलाउद्दीन का बल राजपूतों के लगातार आक्रमण से बिलकुल टूट गया है और वह गढ़ लेने का नाम मात्र करके लौटना चाहता है, उसने कहा कि वह न केवल राजा से दीनतापूर्वक अधीनता स्वीकार कराने ही पर उतारू है वरंच उसे अपनी धमकियों को सच्चा कर दिखाने की सामर्थ्य है। रतिपाल ने कहा कि अलाउद्दीन इस बात को मानता है कि राजपूतों ने उसके कुछ सिपाहियों को मारा है किंतु इसकी उसे कुछ परवा नहीं, "गोजर की एक टाँग टूटने से वह लँगड़ा नहीं कहा जा सकता।" उसने हम्मीर को संमति दी कि ऐसी दशा में आपको स्वयं इसी रात को रणमल से मिलना चाहिए और उसे आक्रमणकारियों को हटाने पर उद्यत करना चाहिए, देश-द्रोही रतिपाल ने कहा कि रणमल एक असाधारण योद्धा है किंतु वह शत्रुओं को हटाने का पूरा पूरा उद्योग नहीं करता है क्योंकि वह राजा से किसी न किसी बात के लिये दुखी है। रतिपाल बोला कि राजा के मिलने से सब बातें ठीक हो जायँगी।

राजा से मिलने के उपरांत रतिपाल रणमल से मिलने गया और वहाँ जाकर मानो अपने पुराने मित्र को सर्वनाश से बचाने के निमित्त उसने कहा कि न जाने क्यों राजा का चित्त तुम्हारी ओर

फिर गया है। इनसे युद्ध के पहले ही हल्ले में तुम शत्रु की ओर हो जाना। उनसे कहा कि हम्मीर इसी रात को तुम्हें वंदी बनाना चाहता है। उसने उससे वह घड़ी भी बतलाई जब राजा उसके पास इस अभिप्राय से आवेंगे। यह सब करके रतिपाल चुपचाप अपनी इस शठता का परिणाम देखने की प्रतीक्षा करने लगा।

जब रतिपाल हम्मीर से मिलने गया था तब उनके पास उनका भाई वीरम भी था। उसने अपने भाई से यह विश्वास प्रगट किया कि रतिपाल ने जो कुछ कहा है वह सत्य नहीं है। शत्रुओं ने उसे अपनी ओर मिला लिया है। उसने कहा कि बोलते समय रतिपाल के मुँह से मद्य की गंध आती थी, और मद्यप का विश्वास करना उचित नहीं। कुल का अभिमान, शील, विवेक, लज्जा, स्वामिभक्ति, सत्य और शौच ये ऐसे गुण हैं जो मद्यपों में नहीं पाए जा सकते। अपनी प्रजा में राजद्रोह का प्रचार रोकने के लिये वीरम ने अपने भाई को रतिपाल के वध को संमति दी। किंतु राजा ने इस प्रस्ताव को यह कहकर अस्वीकार किया कि मेरा दुर्ग इतना दृढ़ है कि वह शत्रु को किसी दशा में भी रोक सकता है; किंतु यदि कहीं संयोगवश रतिपाल के वध के अनंतर यह गढ़ शत्रुओं के हाथ में पड़ जायगा तो लोगों को यह कहने को हो जायगा कि एक निर्दोष मनुष्य के वध के दुष्कर्म्म के कारण उनका पतन हुआ।

इस बीच में रतिपाल ने राजा के रनिवास में यह खबर फैलाई कि अलाउद्दीन केवल राजा की कन्या से विवाह करना चाहता है और यदि उसकी यह इच्छा पूरी हो जाय तो वह संधि करने के लिये प्रस्तुत है, क्योंकि वह और कुछ नहीं चाहता। इस पर रानियों ने राजकन्या से राजा के पास जाकर यह कहने को कहा कि मैं अलाउद्दीन से विवाह करने में सहमत हूँ। वह कन्या वहाँ गई जहाँ उसके पिता बैठे थे और उसने उनसे अपने राज्य और शरीर की रक्षा के हेतु अपने को मुसलमान को दे डालने की प्रार्थना की। उस (कन्या) ने कहा "हे पिता मैं एक व्यर्थ काँच के टुकड़े के समान

हूँ और आपका राज्य और प्राण चिंतामणि वा पारस पत्थर के समान है; मैं बिनती करती हूँ कि आप उनको रखने के लिये मुझको फेंक दीजिए।"

जब वह भोली भाली लड़की इस प्रकार हाथ जोड़कर बोली तब राजा का जी भर आया। उन्होंने उससे कहा, "तुम अभी बालिका हो इससे जो कुछ तुम्हें सिखाया गया है उसके कहने में तुम्हारा कोई दोष नहीं। किंतु मैं नहीं कह सकता कि उनको क्या दंड मिलना चाहिए जिन्होंने तुम्हारे हृदय में ऐसे ख्याल भर दिए हैं। स्त्रियों का अंग भंग करना राजपूतों का काम नहीं, नहीं तो उनकी जीभ काट ली जाती जिन्होंने ऐसी कुत्सित बात मेरी कन्या के कान में कही।" हम्मीर ने फिर कहा "पुत्री! तुम अभी इन बातों को समझने के लिये बहुत छोटी हो इससे तुम्हें बतलाना व्यर्थ है। किंतु तुम्हें म्लेच्छ मुसलमान को देकर सुख भोगना मेरे लिये ऐसा ही है जैसा अपना ही मांस खाकर जीवन काटना। ऐसे संबंध से मेरे कुल में कलंक लगेगा, मुक्ति की आशा नष्ट होगी, इस संसार में हमारे अंतिम दिन कड़ुए हो जायँगे। मैं ऐसे कलंकित जीवन की अपेक्षा दस हजार बार मरना अच्छा समझता हूँ।" अब वे चुप हुए और दृढ़ता तथा स्नेह पूर्वक अपनी कन्या को चले जाने को उन्होंने कहा।

राजा, रतिपाल की संमति के अनुसार संध्या के समय अपनी शंकाओं को मिटाने के लिये रणमल के डेरे पर जाने को तैयार हुए साथ में उन्होंने बहुत थोड़े आदमी लिए। जब वे रणमल के डेरे के निकट पहुँचे तब उसको (रणमल को) रतिपाल की बात याद आई। वह यह समझकर कि यदि मैं यहाँ ठहरूँगा तो मेरा बंदी होना निश्चय है, अपने दल के साहित गढ़ से भाग निकला और अलाउद्दीन की ओर जा मिला; यह देखकर रतिपाल ने भी वैसा ही किया।

राजा इस प्रकार ठगे और घबड़ाए हुए कोट में लौट आए उन्होंने भंडारी को बुलाकर भंडार की दशा पूछी कि कितने दिन तक सामान चल सकता है। भंडारी ने सच्ची बात कहने में अपने प्रभाव की

हानि समझ कहा कि सामान बहुत दिन तक के लिये काफी है। किंतु ज्योंही यह कहकर वह फिरा त्योंही विदित हुआ कि राजभांडार में कुछ भी अन्न नहीं है। राजा ने यह समाचार पाकर वीरम को उसके मारने और उसकी समस्त संपत्ति पद्मसागर में फेंक देने की आज्ञा दी।

उस दिन की अनेक आपत्तियों को झेलकर, राजा शिथिलता से अपनी शय्या पर जा पड़े। किंतु उनकी आँखों में उस भयावनी रात को नींद नहीं आई। जिन लोगों के साथ वे भाई से बढ़कर स्नेह का व्यवहार करते थे उनका उन्हें ऐसी दशा में अकेले छोड़कर एक एक करके चल खड़े होना उनको असह्य जान पड़ता था। जब सबेरा हुआ तब उन्होंने नित्य-क्रिया की और दरबार में बैठकर वे उस समय की दशा पर विचार करने लगे। उन्होंने सोचा कि जब हमारे राजपूतों ही ने हमें छोड़ दिया तब महिमासाह का क्या विश्वास, जो मुसलमान और विजातीय है। इसी दशा में उन्होंने महिमासाह को बुला भेजा और उससे कहा "सच्चा राजपूत होकर मेरा यह धर्म्म है कि देश की रक्षा में मैं अपना प्राण त्याग दूँ, किंतु मेरे विचार में यह अनुचित है कि वे लोग जो मेरी जाति के नहीं, मेरे हेतु युद्ध में अपने प्राण खोवें, इससे मेरी इच्छा है कि तुम कोई रक्षा का ऐसा स्थान बतलाओ जहाँ कि तुम सपरिवार जा सकते हो जिससे मैं तुम्हें कुशलपूर्वक वहाँ पहुँचवा दूँ।"

राजा के इस शील से संकुचित होकर, महिमासाह बिना कुछ उत्तर दिए, अपने घर लौट गया, और वहाँ तलवार लेकर उसने अपने जनाने के सब लोगों को काट डाला और हम्मीर के पास आकर कहा कि मेरी स्त्री और मेरे लड़के जाने को तैयार हैं किंतु मेरी स्त्री एक बेर अपने राजा का मुँह देखना चाहती है जिसकी कृपा से उसने इतने दिनों तक सुख किया। राजा ने यह प्रार्थना अंगीकार की और अपने भाई वीरम के साथ वे महिमासाह के घर गए। किंतु वहाँ जाने पर यह हत्याकांड देख उनके आश्चर्य और

शोक का ठिकाना न रहा। राजा, महिमासाह को हृदय से लगाकर

बच्चे के समान रोने लगे। उन्होंने उससे चले जाने को कहने के कारण अपने को दोषी ठहराया और कहा कि ऐसी अलौकिक स्वामि-भक्ति का बदला नहीं हो सकता। अतः धीरे धीरे, वे कोट में लौट आए और प्रत्येक वस्तु को गई हुई समझ, उन्होंने अपने लोगों से कहा कि तुम लोग जो उचित समझो वह करो, मैं तो शत्रु के बीच लड़कर प्राण देने को उद्यत हूँ। इसकी तैयारी में, उनके परिवार की स्त्रियाँ रंगदेवी के साथ चिता पर जलकर भस्म हो गई। जब राजा की कन्या चिता पर चढ़ने लगी तब राजा शोक के वशीभूत हुए। वे उसे हृदय से लगाकर छोड़ते ही न थे। किंतु उसने अपने को पिता की गोद से छुड़ाकर अग्नि में विसर्जन कर दिया। जब चौहानों की सती साध्वी ललनाओं की राख के ढेर के अतिरिक्त और कुछ न रह गया तब हम्मीर ने मृतक संस्कार किया और तिलांजलि देकर उनकी आत्माओं को शांत किया। इसके अनंतर वे अपनी बची हुई स्वामिभक्त सेना को लेकर गढ़ के बाहर निकले और शत्रुओं पर टूट पड़े। भीषण संमुख युद्ध उपस्थित हुआ। पहले वीरम युद्ध की कसामस के बीच लड़ते हुए गिरे, फिर महिमासाह के हृदय में गोली लगी। इसके पीछे जाज, गंगाधर, ताक और चेत्रसिंह परमार ने उनका साथ दिया। सबके अंत में महापराक्रमी हम्मीर सैकड़ों भालों से विधे हुए गिरे। प्राण का लेश रहते भी शत्रु के हाथ में पड़ना बुरा समझ उन्होंने एक ही बार में अपने हाथों से सिर को धड़ से जुदा कर दिया और इस प्रकार अपने जीवन को शेष किया। इस प्रकार चौहानों के अंतिम राजा हम्मीर का पतन हुआ! यह शोचनीय घटना उनके राज्य के अठारहवें वर्ष में श्रावण के महीने में हुई।

यहाँ पर यह कथा समाप्त होती है। दोनों के मिलान करने पर मुख्य मुख्य बातों में आकाश-पाताल का अंतर जान पड़ता है। किस में कहाँ तक सत्यता है इसका निर्णय करना बड़ा कठिन है। दोनों कथाओं में हम्मीर के पिता का नाम जैत्रसिंह लिखा है अतएव इस संबंध में कोई संदेह की बात नहीं जान पड़ती। हम्मीररासो

में लिखा है कि कि हम्मीर का जन्म विक्रम संवत् ११४१ शाके १००८ में हुआ। साथ ही यह भी लिखा है कि अलाउद्दीन का जन्म भी इसी दिन हुआ। इस हिसाब से हम्मीर और अलाउद्दीन का जन्म १०८४ ई० में हुआ। पर अन्य ऐतिहासिक ग्रंथों से यह बात ठीक नहीं जान पड़ती। हम्मीर महाकाव्य में हम्मीर के गद्दी पर बैठने का संवत् १३३० (सन् १२८३ ई०) दिया है। यह ठीक जान पड़ता है। फिर हम्मीर महाकाव्य में लिखा है कि चौहानराज की मृत्यु उनके राज्य के अठारहवें वर्ष में अर्थात् संवत् १३४८ (सन् १३०१ ई०) में हुई। अमीर खुशरू की तारीख अालाई में यह तिथि तीसरी जीलकद: ७०० हिजरी (जुलाई १३०१ ई०) दी है। मुसलमानी इतिहासों से विदित है कि सन् १२९६ में सुल्तान अलाउद्दीन मुहम्मदशाह अपने चाचा जलालुद्दीन फीरोज-शाह को मारकर गद्दी पर बैठा, और सन् १३१६ ई० तक राज्य करता रहा। इस अवस्था में हम्मीररासो में दिए हुए संवत् ठीक नहीं हो सकते। कदाचित् यहाँ यह कह देना भी अनुचित न होगा कि हम्मीररासो में हम्मीर की जो जन्म कुंडली दी है वह भी ठीक नहीं है।

दूसरी बात जो इस काव्य के संबंध में विचार करने की है वह यह है कि हम्मीर की अलाउद्दीन से लड़ाई क्यों हुई। हम्मीररासो तथा ऐसे ही अन्य हिंदी काव्यों में मीर महिमाशाह की रक्षा के लिये युद्ध का होना लिखा गया है और इसमे कोई संदेह नहीं कि इस अद्भुत कथा से हम्मीर का गौरव बहुत कुछ बढ़ जाता है और कथा में भी एक अद्भुत रस का संचार हो आता है। पर हम्मीर महाकाव्य में इसका कहीं नाम भी नहीं है और न कहीं किसी पुराने इतिहास में इसका वर्णन मिलता है। पर महिमाशाह का हम्मीर के यहाँ रहना निश्चित है तथा उसके अपने बाल बच्चों को मारकर लड़ाई में हम्मीर का साथ देने की बात भी ठीक है। यह अवस्था तभी हो सकती है जब महिमाशाह अपने को हम्मीर का किसी बड़े उपकार के लिये ऋणी मानता हो। अलाउद्दीन का साथ न देकर हम्मीर का

साथ देना एक मुसलमान सर्दार के लिये निस्संदेह बड़े आश्चर्य की बात है। हिंदी काव्यों में जिन घटनाओं का उल्लेख है उनका होना तो कोई असंभव बात है ही नहीं। भारतवर्ष में जितने बड़े युद्ध हुए हैं सब स्त्रियों के ही कारण हुए हैं। पृथ्वीराज के समय में तो मानों इसकी पराकाष्ठा हो गई थी। पर मुसलमानों के लिये यह निन्दा की बात थी। इसलिये मुसलमान इतिहासकारों का इस घटना को छोड़कर युद्ध का कुछ दूसरा ही कारण बताना कोई आश्चर्य की बात नहीं है। पर नयनचंद्र सूरि का कुछ न कहना अवश्य संदेह उत्पन्न करता है। अल्लाउद्दीन ने जिस नीचता से रतिपाल को मिला लिया इसका तो यह कवि पूरा पूरा वर्णन करता है। यहाँ के कुछ श्लोक उद्धृत कर देना उचित जान पड़ता है—

> अंतरंतःपुरं नीत्वा शकेशस्तमभोजयत्।
> अपीप्यत्तद्भगिन्या च प्रतीत्यै मदिरामपि ॥ ८१ ॥
> प्रतिश्रुत्य शकेशोक्तं ततः सर्वं स दुर्मतिः।
> विरोधोद्बोधिनीर्वाचो गत्वा राज्ञे न्यरूपयत् ॥ ८२ ॥
>
> [सर्ग १३]

इनसे यह स्पष्ट विदित होता है कि नयनचंद्र कुछ मुसलमानों का पक्षपाती नहीं था। कुछ लोग कह सकते हैं कि जैनी होने से उसका विरोधी होना असंभव नहीं है। मेरा अनुमान तो यह है कि उसने मुसलमानी इतिहासों के आधार पर अपना काव्य लिखा है क्योंकि उसमें कथित घटनाएँ और सन्-संवत् सब मुसलमानी इतिहासों से मिलते हैं। जो कुछ हो, इसमें कोई संदेह नहीं कि ऐतिहासिक दृष्टि से नयनचंद्र सूरि का काव्य जोधराज के रासो से अधिक प्रामाणिक है।

तीसरी घटना, जिसपर विचार करना आवश्यक है, वह हम्मीर की मृत्यु है। दोनों काव्यों से यह सिद्ध होता है कि हम्मीर ने आत्महत्या की। हम्मीररासो में इसका कारण कुछ और ही लिखा है और हम्मीर महाकाव्य में कुछ और है। जोधराज के अनुसार हम्मीर को

विजय प्राप्त हुई और विजय के उत्साह में उसने मुसलमानी झंडे निशानों को आगे करके अपने गढ़ की ओर पयान किया जिसपर रानियों और रनिवास की अन्य महिलाओं ने यह समझा कि हम्मीर की हार हुई और मुसलमानी सेना गढ़ को लेने के लिये आ रही है। इसपर अपने सतीत्व की रक्षा के निमित्त उन्होंने अग्नि में अपने प्राण दे दिए। इस पर हम्मीर को ऐसी ग्लानि हुई कि उसने भी अपने प्राण देकर अपने संताप को शांत किया। नयनचंद्र के अनुसार रणमल और रतिपाल के विश्वासघात पर विजय की सब आशा जाती रही और हम्मीर ने पहले राजमहिलाओं को अग्निदेव के अर्पण कर रण में वीरोचित मृत्यु से मरना विचारा। अंत में जब उसका शरीर रणक्षेत्र में विधकर गिर पड़ा तो उसे आशंका हुई कि कहीं मुसलमानों के हाथ से मेरे प्राण न जायँ। इसलिये वहीं उसने अपने मस्तक को अपने हाथ से काटकर इस आशंकित अपमान से अपनी रक्षा की। दोनों बातों में राजमहिलाओं का अग्नि में आत्मसमर्पण करना और हम्मीर का आत्महत्या करना मिलता है और इन घटनाओं के संघटित होने में भी कोई संदेह या आश्चर्य की बात नहीं है। जो कथा इस संबंध में दोनों काव्यों में दी है वह युक्तिसंगत जान पड़ती है। कौन कहाँ तक सत्य है, इसका निर्णय करना तो बड़ा कठिन है, विशेष करके ऐतिहासिक प्रमाणों के अभाव में तो इस संबंध में कुछ करना व्यर्थ है। जोधराज का यह लिखना कि अलाउद्दीन ने समुद्र में कूदकर अपने प्राण दे दिए, निस्संदेह असत्य जान पड़ता है। इस युद्ध के १५ वर्ष पीछे तक वह जीता रहा, इसके अनेक प्रमाण मिलते हैं।

जो कुछ हो, ऐतिहासिक अंश में गड़बड़ रहने पर भी हम्मीर की कथा बड़ी अद्भुत है और भारतवर्ष के गौरव को बढ़ानेवाली है। कौन ऐसा स्वदेशाभिमानी होगा जो राजमहिलाओं के जौहर और हम्मीर की वीरता तथा उसके साहस का वृत्तांत पढ़कर अपने को धन्य न मानता हो और जिसका हृदय देशगौरव से न भर जाता हो। धन्य

है वह देश जहाँ ऐसे ऐसे वीर हो गए हैं। धन्य हैं वे स्त्रियाँ जो अपने सतीत्व की रक्षा के लिये विना कुछ सोचे विचारे इस क्षणभंगुर शरीर को नष्ट कर डालती थीं और धन्य हैं वे लोग जो उनके वृत्तांतों को पढ़कर आनंदित और प्रफुल्लित होते हों और जिन्हें अपने देश के गौरव की रक्षा का उत्साह होता हो।

मैं पहले लिख चुका हूँ कि दो हम्मीर हो गए हैं। एक के विषय में तो मैंने इतना कुछ मसाला इकट्ठा कर दिया है। मेवाड़ के हम्मीर के विषय में भी कुछ कह देना आवश्यक जानकर ठाकुर हनुवंत सिंह लिखित मेवाड़ के इतिहास से इनका वृत्तांत उद्धृत कर देता हूँ। वह इस प्रकार है—

"लखमसी जी के पीछे मुसलमानों से बैर लेनेवाला अब केवल उनका लड़का अजयसिंह था जो कि केलवाड़े में रहता था। यह केलवाड़ा अर्वली पर्वत के उच्च प्रदेश में है। वहाँ उसकी रक्षा करनेवाले भील लोग थे। अजयसिंह जी के बड़े भाई अरसी जी के कुँवर हम्मीरसिंह को अपने पीछे गद्दी पर बिठलाने का वचन लखमसी जी ने अजयसिंह से ले लिया था। इससे तथा अजयसिंह के पुत्र के हम्मीरसिंह के समान पराक्रमी न होने से उनके उत्तराधिकारी हम्मीरसिंह ही थे। इनकी माता के विषय में यह कथा प्रसिद्ध है कि एक दिन अरसी जी युवराजत्व अवस्था में ऊदवा गाँव के जंगल में आखेट को गए थे। वहाँ जब एक सूअर के पीछे इन्होंने घोड़ा दिया तो वह भागकर ज्वार के खेत में घुस गया। ज्योंही अरसी जी सूअर के पीछे खेत में जाने लगे त्योंही एक कन्या ने, जो उस खेत की चौकसी कर रही थी, इनको भीतर जाने से रोका और कहा कि ठहरो सूअर को मैं बाहर निकाले देती हूँ। फिर उस लड़की ने ज्वार के पेड़ को उखाड़ सूअर को दो चार सपाटा लगाकर उसे उनकी ओर खदेड़ दिया। उस लड़की की निर्भयता को देख आखेटकों को बड़ा आश्चर्य हुआ। पीछे जब कि वे एक नाले पर विश्राम करने के लिये ठहरे हुए थे तो सनसनाता हुआ दूर से एक पत्थर का टुकड़ा आया और

घोड़े की टाँग में ऐसे जोर से लगा कि उसका पैर टूट गया। बहुत ही छोटे से पत्थर के टुकड़े से घोड़े का पैर टूटा हुआ देख खोजा गया तो उसकी मारनेवाली भी वही खेत की रखवालिन कन्या निकली। पक्षियों के उड़ाने को उसने गोफन में रख कर गिल्ला फेंका था परंतु दैवयोग से वह घोड़े को आ लगा। जब उसने यह सुना कि घोड़े को चोट लग गई है तो अरसी जी के पास जाकर अपने बिना जाने अपराध की क्षमा बड़ी नम्रता से माँगी। संध्या को लौटते समय अरसी जी को फिर वही कन्या अपने घर को जाती हुई राह में मिली। यह लड़की माथे पर दूध का मटका रखे और दोनों हाथों में दो पड़रे (भैंस के बच्चे) लिए हुए जा रही थी, उस समय अरसी जी के साथियों में से एक ने हँसी में उसके दूध को गिरा देने का विचार किया और वह मनुष्य घोड़ा दौड़ाता हुआ उसके पास होकर निकला। इससे यह लड़की कुछ भी न घबड़ाई और अपने हाथ में का एक पड़रा घोड़े के पिछले पैरों में ऐसा मारा कि घोड़ा और सवार दोनों धरती पर गिर पड़े और हँसी के बदले उलटी अपनी हानि कर ली। अरसी जी ने घर जाकर निश्चय कराया तो वह कन्या चंदाना वंश (चहुवानों की एक शाखा है) के एक राजपूत की पुत्री निकली। अरसी जी ने उसके बाप को बुलवाकर उससे अपने विवाह करने के लिये वह लड़की माँगी, परंतु उस राजपूत ने निषेध कर दिया। घर पहुँचकर जब अपनी स्त्री से उसने सब वृत्तांत कहा तो वह पति के इस कार्य्य से बहुत अप्रसन्न हुई और लग्न स्वीकार करने के लिये अपने पति को फिर अरसी जी के पास उसने लौटाया। अंत में अरसी जी का उस कन्या के साथ विवाह हुआ, जिसके पेट से अति पराक्रमी हम्मीरसिंह ने जन्म लिया। सिंहनी के पेट में तो सिंह ही जन्म लेता है। हम्मीरसिंह जी बचपन में अपनी ननसाल में रहकर बड़े हुए थे।

"हम्मीरसिंह के काका अजयसिंह जब केलवाड़े में रहते थे तो

उनकी मुसलमानों के सिवाय पहाड़ियों में रहनेवाले राजपूत सर्दारों

के साथ भी बड़ी लड़ाई रही। इन पहाड़ियों का मुखिया बालेछा जाति का मूंजा नामी एक राजपूत था जिसके साथ लड़ाई करने में एक बार अजयसिंह बहुत घायल हुए। इस समय अजयसिंह के दो पुत्र सजनसी और अजीतसी भी थे जिनकी आयु अनुमान १५ वर्ष की थी परंतु वे कुछ भी वीरता लड़ाई में न दिखा सके। इससे उन्होंने अपने भतीजे हम्मीरसिंह को बुला लिया और उनको सब वृत्तांत कह सुनाया। हम्मीरसिंह अपने दोनों चचेरे भाइयों से बड़े न थे परंतु तो भी उन्होंने मूँजा बालेछा का सिर काट लाना ऐसा विचार निश्चय करके वे निकले। थोड़े दिनों में उन्होंने मूंजा का सिर काट लाकर अपने काका को भेंट किया। अजयसिंह इस बात से बहुत प्रसन्न हुए, और मूँजा के ही रुधिर से तिलक करके अपने पीछे हम्मीरसिंह को राज्य का अधिकारी ठहराया। जब अजयसिंह मरे तो उनसे पहले ही अजमाल मर चुके थे। सजनसी गद्दी के लिये हम्मीरसिंह को अधिकारी नियत हुआ देख दक्षिण में चले गए, जिनके वंश में एक ऐसा वीर पुरुष जन्मा कि जिसने मुसलमानों से पूरा बदला ही न लिया किंतु अपने असामान्य पराक्रम और साहस से मुसलमानी राज्य का मूलोच्छेदन ही कर दिया। यह पुरुष मरहठों के राज्य की नींव जमानेवाला सितारे का राजा शिव जी था जो समस्त भारतवर्ष में विख्यात है। सजनसी से बारहवीं पीढ़ी में यह हिंदू धर्म्मरक्षक और अतुलित पराक्रमी वीर पुरुष शिव जी हुआ है। सजनसी जी से पीछे दुलीपजी, सीओजी, भोराजी, देवराज, उग्रसेन, माहुल जी, खेलुजी जनकोजी, संतोजी, शाहजी और शिव जी हुए। अजयसिंह के पीछे हम्मीरसिंह सं० १३०१ ई० में मेवाड़ की गद्दी पर बैठे। उस समय मेवाड़ की गिरती दशा होने से आस-पास के राजा लोगों ने मेवाड़ के राणाओं को अपना शिरोमणि मानना छोड़ दिया था। हम्मीरसिंह ने अपने पहाड़ी साथियों को इकट्ठा करके जिन जिन राजाओं ने इनको अधिष्ठाता मानना छोड़ दिया था उन सभों को परास्त करके अपने अधीन किया। इस प्रकार

थोड़े दिनों में हीं हम्मीरसिंह ने अपना गौरव आस पास के राजाओं पर जमा लिया। अब चित्तौर को किस विधि लूँ इस विचार में हम्मीरसिंह पड़े।

"हम्मीरसिंह ने चित्तौर के आस-पास का सारा देश लूटकर उजाड़ डाला, अकेला चित्तौर ही मुसलमानों के अधीन रह गया था। किसी प्रकार उसे लूँ, यही हम्मीरसिंह का दृढ़ विचार था। एक दिन उन्होंने अपने सब मनुष्यों को बुलाकर कहा कि "भाइयो! जिसे जीने की इच्छा हो, जिसे संसार के इन क्षणिक सुखों के बदले स्वर्ग का सुख छोड़ देना हो, जिस अपनी प्रतिष्ठा की अपेक्षा प्राण प्यारे हों, जिसे अपने उग्र वैरी मुसलमानों का डर हो, जिसे अपनी गई हुई भूमाता को तुर्कों के हाथ में से निकाल लेने की हौस न हो और जिसको इस अर्वली पर्वत की झाड़ो जंगलों में सदा पड़े रहने की इच्छा हो, वह भले ही सुख से इस अर्वली की विकट गुह्य गुफाओं में रहे, यह मेरी आज्ञा है। जो मेरी भुजा मे बल होगा तो तुम्हारे चले जाने पर भी अपने कुलदेवता की सहायता स अकेला भी चित्तौर को लूँगा। तुम लोग सुख से जाओ और जो ईश्वर-इच्छा से मैं चित्तोर को जल्दी ले सका तो तुमको पीछे बुला लूँगा, उस समय आ जाना।" हम्मीरसिंह के मनुष्यों में राजपूत भी थे परंतु अधिक तो आसपास के भील लोग थे। उन लोगों ने बालकपन से ही हम्मीरसिंह का पराक्रम देख रखा था और निरंतर उनके साथ रहने से वे भी राजपूतों के समान ही साहसी और पराक्रमी हो गए थे और हम्मीरसिंह के चाल-चलन तथा व्यवहार से ही वे लोग ऐसे प्रसन्न थे कि यदि वे कहते तो प्राण देने को वे लोग उद्यत हो जाते। हम्मीरसिंह के उपरोक्त वचनों का उत्तर उन लोगों ने इस प्रकार दिया—"हम मरेंगे अथवा शत्रुओं को मारेंगे परंतु अपने राजा को छोड़कर कभी पीछे न हटेंगे, हम अपने कुल को कलंकित न करेंगे, हम अपने शत्रुओं के हाथ में से अपनी भूमाता को छुड़ाने के लिये

अपने प्राण देंगे और इस जगत् के क्षणस्थायी सुखों को छोड़ स्वर्ग

का सदैव सुख भोगेंगे।" इस प्रकार वे एक स्वर होकर बोले कि मानो एक साथ मेघ की गर्जना हुई। हम्मीरसिंह ने इन वीर राजपूतों के ऊपर पुष्पों की वृष्टि करके कहा "धन्य हो मेरे प्यारे! धन्य हो! धन्य हो क्षत्रिय-पुत्रो! धन्य हो! ऐसे ही उत्तर की मैं आशा रखता था और सोही अंत को मिला। तुम लोगों की शुभचिंतकता से मैं अपनी भूमाता को छुड़ा सकूँगा। तुम्हारी राजभक्ति और तुम्हारी एकता देख, तुम्हारा साहस और पराक्रम देख हमारे कुलदेवता हमारे सहायक होंगे। और मुझे निश्चय है कि हमारा मनोरथ सिद्ध होगा; इसलिये प्यारे वीर पुरुषो, तैयार हो जाओ। अपने बाल-बच्चों को इस पहाड़ की सुरक्षित गुफा में छोड़ आओ और उनकी सब प्रकार रक्षा होती रहे इसके लिये पाँच सहस्र वीर भीलों को नियत कर चलो।" हम्मीरसिंह के इन वाक्यों को सुनकर सर्वत्र जय जयकार होने लगी। उक्त प्रकार के प्रबंध करके वे सब चित्तौर के लिये पहाड़ों से उतर पड़े।

"इस समय हम्मीरसिंह के पास पाँच हजार से कुछ अधिक मनुष्य थे तथापि, 'एक मराऊ सौ को मारे' इस कहावत के अनुसार वे पाँच लाख के समान थे। उन्होंने चित्तौर के चारों ओर का देश लूट लिया, ग्राम जला दिए, मुसलमानों को पकड़ लिया। चारों ओर अशांति रहने से व्यापारी व्यापार से और किसान खेती करने से रुक गए। मुसलमान लोग अपनी प्रजा का रक्षण न कर सके। इससे प्रजा का समूह हम्मीरसिंह के अधीन हो बसने लगा। इस समय हम्मीरसिंह की रहन सहन अर्वली पर्वत की चोटियों पर केलवाड़े में थी। वहाँ जाने का मार्ग बड़ा बेढ़ा था। शत्रुओं के अधिकार कर लेने योग्य कदापि न था। अर्वली पर्वत के भीतरी गुप्त स्थलों को वहाँ से भाग जाने का मार्ग पृथक् था। ये गुप्त स्थल पहाड़ों की घनी झाड़ियों में होने से बड़े विकट थे। वहाँ इतने फलादि खाने योग्य पदार्थ उत्पन्न होते थे कि वर्षों तक सहस्रों मनुष्यों का निर्वाह हो सकता था। केलवाड़े से पश्चिम और का मार्ग खुला था जहाँ

होकर गुजरात और मारवाड़ का माल व्यापारी लाते थे तथा मित्रता रखनेवाले भीलों से भोजन की बड़ी सहायता मिलती थी। बाल बच्चों की रक्षा के लिये जो पाँच सहस्र भील नियत थे वे आवश्यकतानुसार रसद पहुँचा जाते थे। अच्छी तरह सोच समझ के और चतुराई से हम्मीरसिंह ने अपने लिये निर्भय स्थान ढूँढ़ा था। परंतु हम्मीरसिंह की बुद्धि को भला उनका दुर्दांत शत्रु अलाउद्दीन कैसे सह सकता था। वह सैन्य लेकर स्वयं आया और उसने अर्वली का पूर्व भाग जीत लिया। परंतु इससे हम्मीर की कुछ भी हानि न हुई। बादशाह ने अर्वली का पूर्वी भाग जीत लिया तो वे दक्षिण भाग में धूम मचाने लगे। अंत में अलाउद्दीन थक गया और हम्मीरसिंह को अधीन करने का काम चित्तौर के सूबेदार मालदेव को सौंप आप दिल्ली को लौट गया।

मालदेव अपने बल से तो हम्मीरसिंह को वश में कर न सका, छल से उनको वश में लाने तथा उनके अपमान करने का विचार कर अपनी पुत्री के विवाह कर देने के बहाने से उसने हम्मीरसिंह के पास नारियल भेजा। हम्मीरसिंह ने अपने संपूर्ण राजपूत लोगों तथा साथियों से इस विषय में संमति ली तो उन सभों ने इस संबंध के स्वीकार करने का निषेध किया, परंतु हम्मीरसिंह ने कहा कि "भाइयो मेरी समझ में तो यही आता है कि तुम सब भूल रहे हो। तुम लोग जो भय बतलाते हो उससे मैं अजान नहीं हूँ परंतु राजपूत होकर किसी के डर से अपना निश्चय किया हुआ कार्य्य छोड़ देना यह बड़ी कायरता है। यह राजपूत का नहीं किंतु दासीपुत्र का काम है। राजपूतों को तो सदा दुःख के समय के लिये कटिबद्ध रहना चाहिए। राजपूतों को तो एक बार घायल होकर घर भी छोड़ना पड़ता है, और एक बार बाजे गाजे के साथ गद्दी पर भी बैठना पड़ता है। जो भेजा हुआ यह टीका न स्वीकार करूँ तो मेरी माँ की कोख कलंकित होवे। मेरे शूर वीर भाइयो! मैं यह जानता

हूँ कि तुम लोग अपने प्राणों की अपेक्षा मेरे प्राणों की अधिक चिंता

रखते हो परंतु इसमें तुम्हारी भूल है। घर में बैठे बैठे सवा मन रुई के गद्दे पर सोते सोते और बातें करते करते सैकड़ों मनुष्य मर जाते हैं, यह हम सभों से छिपा नहीं है। क्या यह तुम समझते हो कि जो इस संसार का मारने वा जिलानेवाला है वह हमको जो डर-कर घर में छिप जावेंगे तो न मारेगा। और जो उसे जीवित रखना होगा तो हमारा नाम मिटानेवाला कौन है ? इसलिये घर में निकम्मे पड़े पड़े मर जाने से तो शत्रु को मारते मारते मरना ही श्रेष्ठ है, नहीं तो जीना भी किस काम का है। भला इस बहाने से जिन स्थानों में मेरे बाप दादे रहते थे, जिन किलों के ऊपर मेरे बाप दादों के झंडे फहराते थे, जिन जंगलों में मेरे बाप दादों के शरीर का रुधिर बह चुका है, वे स्थल, वे गढ़ और राजमहल तो देखने को मिलेंगे। मेरे बाप दादे जिन स्थानों में मरे हैं वहीं मैं भी मरूँगा, उनके साथ मैं भी स्वर्गधाम पाऊँगा। कहीं हमारे कुल देवताओं ने ही अथवा हमारी भूमाता ने ही इस बहाने से मुझे वहाँ बुलवाया हो। कदाचित् उनकी इच्छा यही हो कि मैं वहाँ जाऊँ, इसलिये वहाँ जाने से वे भी हमारी सहायता अवश्य करेंगी। भाइयो ! मेरी इच्छा है कि नारियल को स्वीकार करना चाहिए। उनके बचन सुनते ही सब लोगों में वीर-रस उमड़ आया और यह बात सबने स्वीकार कर ली और हम्मीरसिंह ने पाँच सौ सवार लेकर चित्तौर जाने का विचार कर लिया। हम्मीरसिंह अपने छँटे छँटाए पाँच सौ सवार लेकर चित्तौर के निकट पहुँचे, उस समय मालदेव के पाँच लड़के उनकी अगवानी को आए। द्वार पर तोरण बँधा हुआ न देखा, तथा नगर में कोई धूमधाम और विवाह की तैयारी न देखी, इससे उन्होंने मालदेव के पुत्रों से पूछा कि क्यों क्या बात है, विवाह की कुछ धूमधाम नहीं दीखती। वे कुछ उत्तर न दे सके। इससे हम्मीरसिंह क्रोध में भरे हुए चित्तौर में जाकर दर्बार में बैठ गए। हम्मीरसिंह का कोप और उनके मनुष्यों के लाल मुख देख मालदेव के देवता कूँच कर गए। उनके पकड़ लेने की तो सामर्थ्य कहाँ थी। पाँच सौ

वीर नंगी तलवारें लिए अडिग जमे हुए थे, वहाँ किसकी सामर्थ्य थी जो हम्मीरसिंह की ओर देख सके। हम्मीरसिंह अकेले भी मालदेव और उसके पाँच पुत्र के लिये काफी थे। मालदेव ने डरकर अपनी पुत्री के साथ हम्मीरसिंह का पाणिग्रहण कर दिया। उस लड़की ने हम्मीरसिंह को चित्तोर लेने की यह युक्ति बतलाई कि आपको जिस समय दहेज दिया जाय, उस समय आप उस वृद्ध महता को जो मेरे पिता का बड़ा चतुर सेवक है अपने लिये माँग लेना। निदान यही हुआ। इस भाँति विवाह करके हम्मीरसिंह अपने घर को लौटे। केलवाड़े में लोग बड़े अधीर हो रहे थे परंतु हम्मीरसिंह को कुशलपूर्वक लौट आया देख लोग आनंद में मग्न हो गए।

"इस रानी से हम्मीरसिंह के खेतसी नामक पुत्र जन्मा। जब खेतसी एक वर्ष का हुआ तो उसकी माता ने अपने बाप को लिखा कि मुझे अपने क्षेत्रपाल देवता के पगों लगना है, इसलिये मुझे वहाँ बुला लो। मालदेव उस समय मेर लोगों के साथ लड़ने को गया हुआ था, इससे उसके भाइयों ने अपनी बहिन को बुला लिया। इस प्रकार हम्मीरसिंह की स्त्री, उनका पुत्र और कुछ मनुष्य चित्तौर में प्रविष्ट हुए। उसी बूढ़े महता के यत्न से जो कि मालदेव के यहाँ सेना का अध्यक्ष रह चुका था, और अब हम्मीरसिंह के यहाँ रहता था यह परिणाम निकला कि चित्तोर की संपूर्ण राजपूत सेना हम्मीरसिंह के पक्ष में हो गई। हम्मीरसिंह को गद्दी पर बिठाने के समाचार भेजे गए। हम्मीरसिंह आगे से ही सावधान होकर आस पास फिरते रहते थे। यह समाचार पाते ही आ निकले, परंतु इतने ही में शत्रु की सेना भी लड़ने को आ गई। इस समय हम्मीरसिंह के पास थोड़े और शत्रु के पास बहुत से मनुष्य थे परंतु बड़े पराक्रम के साथ अपनी तलवार का स्वाद चखाते हुए हम्मीरसिंह सबको परास्त करके विजय प्राप्तकर चित्तौर में आ गद्दी पर बैठ गए।

"अलाउद्दीन उस समय मर गया था और मुहम्मद तुगलक उस समय बादशाह था। मालदेव यह देखकर कि चित्तोर छिन गया

और बिना बादशाही मदद के फिर मिलना कठिन है, दिल्ली को भाग गया।

"चित्तौर के गढ़ पर राणा जी का झंडा फहराता हुआ देख पहाड़ों में से आसपास के ग्रामों में से तथा गुप्त स्थानों में से निकल निकलकर टिड्डी दल की भाँति लोग चित्तौर में घुसने लगे। चित्तौर में से मुसलमानों का राज्य उठ गया और राजपूतों का आ गया, यह सुनकर लोग आनंद मग्न हो गए और दूर दूर से वहाँ आने लगे। छोटे और बड़े सब ही लोग मुसलमानों से बदला लेने की उमंग के साथ आ एकत्रित हुए। जो इस समय मुसलमानों की सेना चित्तौर लेने को आवे तो उसे कुचल डालो ऐसा वचन सबके मुख से निकलने लगा। हम्मीरसिंह को सेना की कमी न रही। मुसलमानों से युद्ध करने की उमंग में चित्तौर में झुंड के झुंड सहस्रों मनुष्य फिरने लगे। सब कहने लगे कि जो मुसलमानी सेना ऐसे समय में लड़ने को आ जावे तो उसकी अच्छी दुर्गति हो और वे जो कह रहे थे सो ही हुआ। मुहम्मद अपने छिने हुए राज्य को लौटाने को आया। हम्मीरसिंह के पास बिना बुलाए सहस्रों मनुष्य मुसलमानों के प्राण लेने को आ उपस्थित हुए और उनके उत्साह को देख राणाजी तत्काल चित्तौर से बाहर लड़ने के लिये निकले। सिंगोली स्थान के निकट बड़ा संग्राम हुआ। सारांश यह है कि राजपूतों ने इस उत्कटता से युद्ध किया कि मुसलमानों का एक भी मनुष्य दिल्ली को लौटकर न जाने दिया।

"इस लड़ाई में स्वयं मुहम्मद पकड़ा गया। मालदेव का पुत्र हरीसिंह हम्मीरसिंह के साथ द्वंद्व युद्ध करता हुआ मारा गया। मुहम्मद को तीन महीने तक हम्मीरसिंह ने बँधुआ बनाकर रखा। पीछे मुहम्मद ने अजमेर, रणथंभौर, नागौर आदि पर्गने सौ हाथी और पचास लाख रुपया देकर छुटकारा पाया।

"हम्मीरसिंह का बड़ा साला बनवीरसिंह उनके पास नौकरी के लिये आया। राणा जी ने उसे सत्कारपूर्वक अपने पास रखा और

उसके निर्वाह के लिये नीमच, जीरण, रतनपुर और कीरार ये पर्गने जागीर में दिए। जागीर देते समय राणा जी ने उससे कहा कि 'यह जागीर भोगो और प्रामाणिक रीति से चाकरी देते रहो। तुम एक समय तुर्कों के पादसेवी थे परंतु अब तो अपनी ही जाति के, स्वधर्मवाले के तथा अपने सगे संबंधी के नौकर हो। जिस भूमि के लिये मेरे बाप दादों तथा सहस्रों शुभचिंतक पुरुषों ने अपना रुधिर बहाया था उस भूमि को फिर लौटा लेने का मेरे ऊपर ऋण था सो मैंने कुलदेवताओं की कृपा से लौटा लिया। तुम अब से तुर्क के नौकर न रहकर राजपूत के हुए सो ईमानदारी से काम करना।' बनबीर भी वैसा ही ईमानदार निकला। उसने मरते समय तक शुद्ध चित्त से सेवा की और चंबल नदी के ऊपर का भीनौर ग्राम जीतकर मेवाड़ में मिलाया।

"जब से चित्तौर को मुसलमानों ने ले लिया था तभी से मेवाड़ के राणाओं की प्रतिष्ठा घट गई थी। भरतखंड के समस्त देशी राज्यों में मेवाड़ के राणा शिरोमणि गिने जाते थे परंतु चित्तौर के निकल जाते ही इसमें बाधा पड़ गई थी। जो राजा कर देनेवाले थे उन्होंने कर तथा गद्दी पर बैठते समय भेंट, और आवश्यकता के समय पर सेना द्वारा सहायता करना आदि सब बंद कर दिया था। उस समय संपूर्ण क्षत्रिय राज्य निर्बल थे। उनको किसी के आश्रय की आवश्यकता थी। जब तक चित्तौर में राणा रहे वे लोग उनके आश्रय में रहे परंतु चित्तौर निकल जाने से वे दिल्ली के बादशाहों के अधीन हो गये, परन्तु राणा हम्मीर सिंह जी ने फिर से इस प्रवाह को फेरा। उन्होंने चित्तौर को मुसलमानों से छीनकर उन फेरफारों को फिर ज्यों का त्यों कर दिया जिन्हें कि मुसलमानों ने अपने राज्य समय में कर डाला था। देश के संपूर्ण क्षत्रिय राजा मुसलमानों की अपेक्षा चित्तौर के राणाओं के अधीन रहने से प्रसन्न हुए। ज्यों ही हम्मीरसिंह जी ने चित्तौर ले लिया और महम्मद को हराया कि

संपूर्ण आर्य वंश के राजा एक के पीछे एक भेंट ले लेकर आए, कर

दने लगे और यथासमय सेना द्वारा युद्ध में सहायता करने लगे। इस भाँति मारवाड़, जयपुर, बूँदी, ग्वालियर, चंदेरी, राजौड़, रायसेन, सीकरी, कालपी और आबू आदि ठिकानों के राजा हम्मीरसिंह जी के आज्ञाकारी हुए। हम्मीरसिंह जी भरतखंड के समस्त राजपूत राज्यों में महाराजाधिराज बन गए। मुसलमानों के आने से पहले इस देश में मेवाड़ के राजाओं की शक्ति अधिक थी, मुसलमानों के आते ही वह दिन दिन घटने लगी। हम्मीरसिंह जी ने इस अवनति को केवल रोका ही नहीं किंतु मुसलमानों के आने से पहले मेवाड़ की जो उत्तम दशा थी फिर उसी पर उसे पहुँचा दिया। मुहम्मद के पीछे किसी भी बादशाह ने चित्तौर के लेने का साहस न किया, इसका एकमात्र हेतु हम्मीरसिंह जी के पराक्रम का भय था। इसी से हम्मीरसिंह के राज्यशासन के पिछले पचास वर्षों में मेवाड़ में अटल शांति रही और इस दीर्घकाल की शांति ने मेवाड़ देश को व्यापार, धन, विद्या, सभ्यता, तथा शूर पुरुषों से परिपूर्ण कर दिया। हम्मीरसिंह जी जैसे बलवान् थे वैसे ही राज्य चलाने में, न्याय करने में, कला-कौशल को उन्नति देने में प्रवीण थे। उनके राज्य में यह कहावत पूर्णतया चरितार्थ हो गई थी कि "बाघ और बकरी एक घाट पानी पीते हैं"; शांति बढ़ने से संपूर्ण व्यापारी, किसान और कारीगर अपने अपने धंधों में लग गए, इससे देश में संपत्ति बढ़ी जिससे राज्य की आय में अधिकता हुई। इन्होंने उत्तम उत्तम स्थान बनाकर कारीगरी की उन्नति की और प्रजा का न्याय यथोचित करके तथा पुत्रवत् पालन करके सबसे आशीर्वाद प्राप्त किया। इस भाँति चौंसठ वर्ष राज्य भोगकर अति वृद्धावस्था में सन् १३६५ ई० में हम्मीरसिंह जी ने वैकुंठधाम का मार्ग लिया। परम बुद्धिमान् और पराक्रमी महाराणा हम्मीरसिंह जी अपने पुत्र खेतसी जी के लिये शांति-संपन्न और विस्तीर्ण राज्य छोड़ गए। मेवाड़पति महाराणा हम्मीरसिंह जी अपनी अक्षय कीर्ति छोड़कर मरे। वहाँ के लोग उन्हें अब तक सराहते हैं।"

इन हम्मीर के विषय में विशेष कुछ लिखना अथवा इनके संबंध की घटनाओं पर विचार करना मैं आवश्यक नहीं समझता। एक तो इनका इस रासो काव्य से कोई संबंध नहीं है, दूसरे यह भूमिका योंही इतनी बड़ी हो गई है कि अब इसे और बढ़ाना अनुचित जान पड़ता है। केवल कथाभाग मैंने इसलिये दे दिया है कि जिसमें पाठकों को इसके जानने का यहीं अवसर प्राप्त हो जाय और वे स्वयं इसके विषय में और जानने का उद्योग करें। जिन महाशयों को हम्मीर के विषय में कुछ लिखने का अवसर प्राप्त हो उन्हें उचित है कि वे दोनों हम्मीरों को अलग अलग मानकर उनके संबंध का घटनाओं का उल्लेख करें।

बस अब मुझे हिंदी के प्रेमियों से क्षमा माँगनी है कि एक तो इस भूमिका के लिखने में इतना विलंब हो गया, दूसरे यह भूमिका इतनी बड़ी हो गई। आशा है कि पहले अपराध का मार्जन दूसरे से हो जाय।

इस भूमिका को समाप्त करने के पहले मैं कुँअर कन्हैया जू और पंडित रामचंद्र शुक्ल को अनेक धन्यवाद देना चाहता हूँ जिन्होंने इसके कई अंशों के लिखने में मुझे बड़ी सहायता दी। साथ ही मैं कुँअर कृष्णसिंह वर्म्मा को भी धन्यवाद दिए बिना नहीं रह सकता। उन्हीं के द्वारा मुझे यह काव्य प्राप्त हुआ। ठाकुर विजयसिंह जी ने इस काव्य को प्राप्त करने और कुँअर कृष्णसिंह जी की सहायता करने में जो कष्ट उठाया उसके लिये मैं उनका भी उपकार मानता हूँ। आशा है कि ये सब महाशय इसी प्रकार मुझपर कृपा बनाए रहेंगे जिससे मैं अन्य अन्य ऐसे काव्यों के संपादन करने में समर्थ होऊँ।

काशी,
९ फरवरी १९०८ } श्यामसुंदर दास

हम्मीररासो

दोहा

सिंधुर बदन अमंद दुति, बुद्धि सिद्धि बरदाय।
सुमिरत पद-पंकज तुरत, बिघ्न अनेक बिलाय ॥ १ ॥

छप्पय

दुरद* बदन बुधि-सदन चंद्र लल्लाट बिराजै।
भुजा च्यारि आयुद्ध तेज फरसा+ कर राजै[1] ॥
इक्क दंत छबि-धाँम अरुण सिंदुरमय सोहै।
मनो प्रात रबि उदित कहन उपमा कबि को है ॥
कर-कमल माल मोदक लिये उर उदार उपबीत बर।
सिव सिवा सुवन गणराज तुम देहु सदा बरदाँन बर[2] ॥२॥
पुंडरीक सुत सुता तासु पद-कमल मनाऊँ ॥
बिसद÷ बरण[3] बर वसन बिसद भूषन हिय ध्याऊँ ॥
बिसद जंत्र सुर सुद्ध तंत्र तुबरजुत सोहै।
बिसद ताल इक भुजा द्वितिय पुस्तक मन मोहै ॥
गति राजहंस हंसह चढ़ा रटी सुरन कीरति बिमल।
जय मात बिमल[4] बरदायिनी देहु सदा बरदाँन बल ॥३॥

---

१ वर साजै। २ बरदायक वरदान वर। ३ बसन। ४ सदा।

* दुरद—द्विरद। + फरसी—परशु। ÷ बिसद—बिमल, सुंदर।

छंद पद्धरी

जय विघ्नराज गणईसदेव ।
जय जगदंब जननी सएव[1] * ॥
गुरु - पाद - पद्म वंदन सुकीन ।
सब सज्जन पद मन[2] लीन कीन ॥ ४ ॥
प्रथिराज राज जग भौ प्रसिद्ध ।
भृगु वंस मध्य प्रगटे सुसिद्ध ॥
नृप चंद्रभाँन तिहिं बंस मध्य ।
किरवाँन+ दाँन दोऊ प्रसिद्ध ॥ ५ ॥
पिच निंवराण जग ग्राँम नाँम ।
जुत बर्णास्रम निज धर्म्म धाँम ॥
जय कीरति भुवमंडल उदार ।
अरु तेज प्रतापी बल अपार ॥ ६ ॥
सब कहैं राठ कौ पातस्याह ।
जस स्त्रवन सुनन को सदा चाह ॥
द्विजराज गौड़कुल जग - प्रसिद्ध ।
विद्या - विनीत हरि - धर्म्म - वृद्ध ॥ ७ ॥
सब दया दाँन उद्दार बीर ।
गुण - सागर नागर परम धीर ॥
कुल पंच बृत्त कै मूल जाँन ।
द्विज आदि गौड़[3] जानत जहाँन[4] ॥ ८ ॥
सौ चौदह सै चालीस च्यार ।
जन - सासन-सागर अति उदार ॥
अब सब को किंकर मोहिं जानि ।

---

१ सहेव । २ हुलसन । ३ सोइ आदि गोर । ४ जानि ।

+ सएव (सहेव)=स्वामिनी । * किरवाँन (किरपान)=कृपाण ।

ऋषि अत्रि गोत्र मैं जन्म मानि ॥ ६ ॥
डिडवरिया राव कहि बिरद ताहिं।
सुभ राठ देस मैं उदित आहि ॥
तिहिं नाँम ग्राँम भल बीजवार।
सब प्रजा सुखी जुत बरण च्यार ॥ १० ॥
जहँ बालकृष्ण सुत जोधराज।
गुन जोतिष पंडित कबि समाज[1] ॥
नृप करी कृपा तिहिं पर अपार।
धन धरा बाजि[2] गृह बसन सार ॥११॥
बाहन अनेक सतकार भूरि।
सब भाँति अजाची कियौ मूरि ॥
नृप एक[3] समय दरबार माहिं।
रासो हमीर कहि[4] सुन्यौ नाहिं ॥१२॥
नृप प्रस्न[5] करिय यह उभे बात।
सब कहो बंस उत्पति सुतात ॥
अरु कहो साहि हम्मीर बैर।
किहिं भाँति[6] कंक॥ बढ्यौ सु फेर ॥१३॥
तब कही प्रथम यह कल्प आदि।
जल सेष सैन जब है अनादि ॥
नहिं धरणि चंद्र सूरज अकास।
नहिं देव दनुज नर बर प्रकास ॥१४॥
सब बीज बृच्छ[7] हरि संग मेलि।
करि आप जोग निद्रा सकेलि ॥
करि सैन अंत निज सक्ति जानि।

---

१ उदार। २ बास। ३ इक्क। ४ कह्यौ। ५ प्रष्ण। ६ बत्त। ७ जुक्क।
॥ कंक=झगड़ा।

ऊरण* सु तंत्र करि सूत्र मानि ॥१५॥
ह्व माया ईस्वर उभै नाँम।
करि महततत्व† गुण÷ प्रगट जाँम+ ॥
यह धरि चरित्र[1] लीला अपार।
हरि नाभिकोस पंकज प्रचार[2] ॥१६॥
तिहिं प्रगट भए ब्रह्मा सु आदि।
बाराहकल्प यह कहि अनादि ॥
बहु काल ब्रह्म-चिंता सु कीन।
मैं कौन, करों का, कर्म कीन[3] ॥१७॥
अध उद्ध० भ्रम्यौ बहु कमलि-नाल।
नहिं पार लह्यौ तद्दपि भुहाल[4] ॥
करि ध्याँन स्वयंभू लख्यौ आप।
तप कर्‍यौ सृष्टि उपजै अमाप ॥१८॥
तप कर्‍यौ स्वयंभू अति प्रचंड।
तब भयउ प्रजापति बिधि अखंड ॥
मानसी सृष्टि कीनी उदार।
सब बृक्ष बीज किन्ने अपार ॥१९॥
जल गगन तेज भुव बायु मानि।

---

१ धरी चित्त। २ बढ्यौ पंकज अपार प्रसार। ३ कर्मचीन, कर्महीन। ४ भुआय।

* ऊरण (ऊर्ण)=ऊन। † महततत्व (महत्तत्त्व)—सांख्य के मतानुसार प्रकृति का प्रथम विकार, बुद्धि। ÷गुण—सांख्य के मतानुसार सत्त्व, रज तथा तम गुण। इस शास्त्र में इन गुणों की साम्यावस्था को प्रकृति कहा गया है। इसी प्रकृति से सृष्टि का विकास होता है। + जाम=प्रहर, काल। ० उद्ध (ऊर्ध्व)=ऊपर।

सनकादि भए सुत च्यारि आनि[1] ॥
तप-पुंज भये तृहिं सृष्टि भोग।
तहाँ मध्य भए तब रुद्र जोग ॥२०॥
भन तैं मरीचि भय तव सु आय।
उपजे पुलस्त ऋषि स्त्रवण पाय ॥
इमि भए नाभि तैं पुलह और।
कृत भए ब्रह्म कर तैं जु मौर ॥२१॥
भृगु भए स्वयंभू त्वचा थाँन।
भय प्राण नात बासिष्ट माँन ॥
अंगुष्ट दक्ष उपजे सु ब्रह्म।
नारद जु भए उतसंग* अह्म ॥२२॥
भय छाया तैं करदम ऋषीस।
अरु भए प्रष्टि+ अद्धरम दीस ॥
अरु हृदय भए कामा उदार।
करदन तैं भौ धरमावतार ॥२३॥
भय लोम अधर[2] तैं अति वलिष्ट।
बानी जु विमल मुख तैं प्रतिष्ठ ॥
पद निरत मिंड[3]† तैं सिंधु जानि।
यहिं बिधि जु प्रजापति ब्रह्म मानि ॥२४॥
अब सुनहु वंस तिनकै अपार।
यह भइय सृष्टि चहुँ खाँ (चहुँधा?) निवार ॥
सिव कै जु सती त्रिय बिन प्रसूत।
दिय दक्ष स्राप तातैं न पूत ॥२५॥
इक कला नाम त्रिय धर मरीच।

---

१ मानि। २ अधुर। ३ मींड, मिड्डु।

*उतसंग (उत्संग)=गोद। +प्रष्टि (पृष्ठ)=पीठ। †मिंड (मींढ)=मत्र।

द्वै पुत्र भए ताकै जु बीच ॥
इक भए प्रथम कस्यप सुजाँन ।
फिर उपजि धरम जहँ पूर्णमाँन ॥२६॥
भय कस्यप कै सूरज सु आय ।
सो भयौ वंस सूरज सुगाय ॥
अरु सुनो अत्रि कै पुत्र तीन ।
इक दत्त सोम जान्यौ प्रबीन ॥२७॥
ऋषि भए अपर दुरबास नाँम ।
सोइ[1] सुनो स्त्रवण तिहिं वंस जाँम ॥
सुत भयौ सोम कै वुद्ध आय ।
पुरुरवा पुत्र ताकै सुभाय ॥२८॥
षट पुत्र भए ताकै प्रसिद्ध ।
भए सोम वंस तिनकै जु सिद्ध ॥
भृगु वंस सुनो अतिसै उदार ।
चहुवाँन भए तिनतैं अपार ॥२९॥
इक ख्यात नाँम तिय अति अनूप ।
भय उभै पुत्र ताकै जु भूप ॥
इक कह्यौ प्रथम धाता जु नाँम ।
फिर भए विधाता धर्म-धाँम ॥३०॥
इक[2] अपर प्रिया भृगु कै कनिष्ठ ।
ए पुत्र भए ताकै प्रतिष्ठ ॥
भय सुक्र जेष्ठ गुरु-असुर जानि ।
तिहिं अनुज चिमन[3] तप-पुंज मानि ॥३१॥
भृगु कै जु भए जग अति बिख्यात ।
जिहिं सुक्र नाम बल तेज तात ॥

---

१ सुई । २ एक । ३ च्यवन ।

तिनकै रिचीक भए पुत्र आय।
जमदग्नि भए तिनकै सुभाय ॥३२॥
ऋषि जामदग्नि सुत परसराँम।
हनि क्षत्रि सकल द्विज तेजधाँम ॥३३॥

दोहरा छंद

ब्रह्मा कै सुत भृगु भए, भार्गव भृगु कै गेह।
ऋषि रिच्चिक ताकै भए; तेज-पुंज तप-देह ॥३४॥
जामदग्नि तिनकै भए, परसराँम सुत जाहिं।
क्षत्रि मेटि विप्रन दइय, भुंमि किती बर ताहिं ॥३५॥
कमलासन कुल मैं प्रकट, परसराँम रणधीर।
सहस्रारजुन वैर तैं, हने जु क्षत्री वीर ॥३६॥
बार इक्कीस जुद्धि जिन, दिन्नौ[1] उर्बीराज।
बच्यौ न क्षत्री जगत तब, आए तप कै काज[2] ॥३७॥

छंद मुक्तादाम

हने क्षिति कै सब बीर अपार।
भरे बहु कुंड जु स्रोणित धार॥
करे तिहिं पितृन तरपन नीर।
भए सब हरषित पित्र सधीर ॥३८॥
दए तब आसिष प्रेम समेत।
चले ऋषिराज तपःकृत हेत॥
रह्यौ नहिं क्षत्रिय जाति विसेष।
भए निरमूल जु क्षत्रि असेष[3] ॥३९॥
बचे कछु दीन मलीन सुवेस।
कहूँ तिनकै अब रूप असेष॥

---

१ दीनौ। २ आप्प (आप) गए तप काज। ३ विसेष।

घरे तृणदंत[1] कि दीन बयन्न[2]।
किये नियरूप लखे जु नयन्न ॥४०॥
नपुंसक बालक बृद्ध सु दीन।
धरे मुख नक्ख सुबैन सहीन ॥
तजे तिन आयुध पिट्ठि दिखाय।
गहे तिन आय सुभाय सुपाय ॥४१॥
मिले सब पित्र सु[3] दीन असीष।
भए सुअ निरभय पित्र जगीस ॥
तजो अब उग्ग[5] असेष सुभाव।
करो सब[6] उप्पर क्षोभ सु चाव ॥४२॥
तजे तब क्रोध भए सु दयाल।
चले पद वंदि पिता पद[7] हाल ॥
भई कछु काल क्षत्री बिन भुंमि।
नहीं जग रच्छ रह्यौ सोइ पुंमि[8] ॥४३॥
बढ़े[9] रजनोचर बृंद अनेक।
मिटे जप तप्प जु बेद बिबेक ॥
करे उतपात सुघात अपार।
तजे कुल-धर्म्म सु आस्रम च्यार[10] ॥४४॥
मिटी मरजाद रहे सब भीत।
तबै ऋषिराजन बड्ढत[11] चीत ॥
जुरे ऋषि-बृंद सु अरबुद आय।
जहाँ ऋषि च्याय बसैं सत भाय ॥४५॥
सुर नर नाग मिले सह आय।

---

१ तनदंत। २ नयन्न। ३ जु। ४ अनिरिय। ५ उग्र। ६ वन। ७ पदु,पट्ठ। ८ नहीं जग रच्छिक यो जग पूमि। ९ वचे। १० च्चार। ११ वाढ़त, बाढ़न।

रचे रजनीचर मेटि उपाय[1] ॥
मिले कमलासन और वसिष्ठ।
कियौ[2] सुचि कुंड अनल्ल[3] सुइष्ट ॥४६॥

दोहरा छंद

चाय आय अरबुद सुनग[4], मिलिय[5] सकल ऋषिराय।
तब आराधिय संभु तिन, दिन्नौ दरसन आय[6] ॥४७॥
जटा मुकुट बिभ्भूति अँग, सीस गंग अहि अंग[7]।
भूत संग अनभंग मन, हरषित अधिक उमंग ॥४८॥
ऋषिसमूह अस्तुति करत[8], करव (करो)[9] अचल नग[10] आय।
बास करो तिहिं पर अचल, यज्ञ करें तव पाय ॥४९॥

छप्पय छंद

तब भव भये[11] प्रसन्न बास अरबुद सिर किन्निव।
कियव यज्ञ आरंभ विप्र सम्मूह[12] सुलिन्निव ॥
द्वैपायन, बासिष्ठ, लोम, दालिभ,[13] सब आए।
जैमिनि हरषन, धौम्य, भृगू, घटयोनि[14], सुभाए ॥
कौसिकह +, बत्स, मुद्गल मिलिउ, उदालीक, मातंग, भनि।
स्वर मिलिय स्वयंभुव संभुजुत लगे करन मख मुदित मन ॥५०॥
पुलह, अत्रि, गौतम्म, गरग, संडिल्यलि महामुनि।
भरद्वाज, जाबालि, मारकंडेय, इष्ट गुनि ॥

---

१ मेटन पाय। २ किये। ३ अनिल्ल। ४ गन। ५ मिले। ६ धाय। ७ संग। ८ करिव, करयव। ९ करत। १० मन। ११ भयउ। १२ सम्मुहँ सुइ लिन्निव। १३ दालिंभ सु। १४ जोनि।

+ पुलह अत्रि गौतमहिं गरग सांडिल्ल महामुनि। भरद्वाज जाबालि मारकंडेय उध्म (उद्दम) गुनि। ये दो चरण एक प्रति में अधिक हैं सो दूसरी प्रति में दूसरे छप्पय में आए हैं।

जरतकार जाजुल्लिय परासुर परम पुनीतव।
चिमन[१] चाइ सुर आइ, पिप्पलायनहिं, सुरचि[२] सव ॥
वोटा अनेक बरनूँ किते, पंचसिखा पिक्खिय प्रगट।
तप तेज पुंज झलहलत तहँ, दरसन तैं पातक सुघट ॥५१॥
सिद्धि औषधिय सकल, सकल[३] तीरथ जल आनिव।
जिते यज्ञ कै योग्य तिते, द्रव[४] सव मन मानिव ॥
जजन[५] जानि[६] अध्याय होम ध्वनि होम सु वुट्ठे।
सकल वेद कै मंत्र बिप्र मुख सुर जुत जुठ्ठे[७] ॥
ध्वनि सुनत असुर आए तुरत करन यज्ञ उच्छिष्ट थल।
उत्पात अमित किन्ने[८] तबै तहाँ बृष्टि किन्निय[९] सबल ॥५२॥
पवन चलत परचंड घोर घन वारि सु वु(उ)ठ्ठे।
रुहिर[१०] माँस त्रण पत्र अग्गि[११] रज देखत उठ्ठे ॥
गए तहाँ बासिष्ट यज्ञ बहु बिघ्न सुनायौ।
करै[१२] प्रथम वध असुर होय तव यज्ञ सुभायौ ॥
बासिष्ट कुंड किन्नौ सुरुचि करन असुर निमूल तव।
धरि ध्याँन होम बेदी बिमल बेद मंत्र आहूति जव ॥५३॥

दोहरा छंद

ऋषि बसीष्ठ बेदिय बिमल, साम बेद स्वर साधि।
प्रगट कियउ क्षत्रिय पहुमि, बेदमंत्र आराधि ॥५४॥
तीन पुरुष उपजे तहाँ, चालुक्क प्रथम पँवार।
दूजै तीजै ऊपजे, क्षत्र[१३] जाति परिहार[१४] ॥ ५५॥
कियउ[१५] जुद्ध अतुलित तिनहिं, नहिं खल जीते मूरि।

---

१ च्यवन। २ सुरच्चिय। ३ सकल तीर्थनु जल आन्यौं, तित्थोदक आन्यौ। ४ द्रव्य तितने मत मानिव, दर्व्य जितनै मन मान्यौं। ५ यजन। ६ जाप। ७ वुठ्ठे। ८ कीने। ९ कीनी। १० रुधिर। ११ अग्नि। १२ करो। १३ चतुरजाति १४ पारिहार। १५ कियौ।

तब चतुरानन जज्ञ थल, कियौ तुरत वह दूरि ॥ ५६ ॥
आबू गिरि अग्नेव दिसि, चायस्थल सब आय।
आराधे तिहिं फरस धरि, आए सीघ्र सुभाय ॥ ५७ ॥
कमलासन ब्रह्मा भए, होता भृगु मुनि कीन।
आचारज वासिष्ठ भौ, ऋत्वज बत्स प्रबीन ॥ ५८ ॥
परसराँम जजमाँन करि, होम करन मुनि लाग।
महासक्ति आराधि करि, अनलकुंड पटि[1] जाग ॥ ५९ ॥

छंद पद्धरी

विधि करी[2] परसधर, बोलि ठौर।
जजमाँन कियउ भृगुकुल सुमौर ॥
वरदेव सक्ति आराधि ताँम।
चहुँ वेद वदन उच्चार जाँम ॥ ६० ॥
निज वारि कमंडल अग्नि सींच।
रज संख पानि होमे स बीच ॥
चहुँ[3] वेद मंत्र-बल सक्ति पाय।
तव अग्नि रूप प्रगटे सुभाय ॥ ६१ ॥
उत्तंग अंग सुचि तेज-धाँम।
झलहलत कांति तन प्रभा काँम ॥
भलहलत मुकट भृकुटी करूर*।
पलहलत नेत्र आरक्त मूर ॥ ६२ ॥
हलहलत दनुज वह त्रास मानि।
भुज च्यारि दिग्ध[4] आयुध सजानि[5]॥
जम जज्ञ पुरुष प्रगटे अजोनि।

१ पदि। २ करे फरसधर। ३ चउ। ४ दीर्घ। ५ मान जान—अंत्यानुप्रास।

*करूर (सं० कुरल)—मस्तक पर विखरी बाल की लट।

कर खग्ग[1] धनुष कटि लसै तोनि ॥ ६३ ॥
कर जोरि ब्रह्म सों कह्यौ धाय।
मैं करूँ कहा लोकेस आय ॥
जब कह्यौ कमलभू सुनहु तात ।
भृगुनाथ कहैं सुइ करो बात ॥ ६४ ॥
भृगुनाथ कही खल हनूँ धाय ।
सँग सक्ति दइय नृप कै सहाय ॥
दसबाहु उग्र आयुध बिसाल ।
आरुढ़ु सिंह उर[2] कमल माल ॥ ६५ ॥
मुनिदेव मिले अभिसेष कीन ।
नृप अनल नाँम कह तासु दीन ॥
नृप कियौ जुद्ध तिनतैं अखंड ।
हनि जंत्रकेत करि खंड खंड ॥ ६६ ॥
हनि धूम्रकेत जो सक्ति आय ।
नृप हरष सहित परसे सुपाय ॥
बहु दैत्य नृपति मारे अपार ।
उठि चली खेत तैं रुहिर[3] धार ॥ ६७ ॥
उबरे सु गए पाताललोक ।
भय दनुजहीन सब मृत्युलोक[4] ॥ ६८ ॥

दोहरा छंद

आसा पूरण सबन की, करी सक्ति तिहिं बार।
याही तैं आसापुरा, धर्यौ नाँम निरधार ॥ ६९ ॥
चहुवाँनन[5] कै वंस मैं, परम इष्ट कुलदेवि ।
सकल मनोरथ सिधि तहाँ, पूजत पावैं सेवि[6] ॥ ७० ॥

१ खड्ग । २ गला । ३ रुधिर धार । ४ मर्त्यलोक । ५ चाहुव्वाँन ।
६ देव, सेव—अंत्यानुप्रास ।

परसराँम अवतार भौ[1], हरन सकल भुव-भार।
जैत राव तिहिं वंस मैं, जन्म्यौ परम उदार ॥ ७१ ॥

छप्पय छंद

जैत राव चहुवाँन सकल बिद्याजुत सोहै।
दाँन कृपाँन बिधाँन अखिल भूपति मन मोहै ॥
अमित थाट रजपूत बंस छत्तीस अमानो।
सूर बीर उद्दार[2] बिरद बंदी जु बखानो ॥
दिन प्रत्ति तेज बड्डिय[3] नृपति, सत्रु संक निसि दिन रहैं।
बिस्सलह[4] भूप अवतंस भुव, अरथिन् मिलि दारिद दहैं ॥७२॥
इक्क समय आखेट, राव खेलन बन आए[5]।
सकल सुभट थट संग, बीर बानै जु बनाए ॥
लखव[6] इक्क बाराह, बाजि पिच्छै नृप दिन्निव।
रहे[7] संग तैं दूरि, सथ्थ बिन राव सु किन्निव ॥
बन विषम वंक भूधर बिरह, सुथल पदम भव तप करत।
मृग त्यागि भागि मिल्ले सुऋषि, बंदि चरण सवा धरत ॥७३॥

छंद लघुनाराच

करे प्रणाम रावयं, सुदिन्न पद्म पावयं।
उभै सुपाणि जोरि कै, बिनै सु कीन कोरि कै ॥ ७४ ॥
खुले सुभाग्य मोरयं, लह्यौ दरस्स तोरयं।
अखंड जोग भूपयं, नमः सजीव मोखयं* ॥ ७५ ॥
त्रिकाल ज्ञान धाँमयं, रटंत नाँम राँमयं।
समस्त योग धाँमयं, त्रिलोक पूर काँमयं ॥ ७६ ॥

---

१ भयौ। २ उदार। ३ बढ़तो, बड्ढिग। ४ बीसलह। ५ आयउ, बनायउ। ६ लखिव। ७ रह्यउ।

* मोखयं—मोक्ष।

समीप स्वामि संकरं, गणेसयं सुधं करं ।
धरौ सुसीस हथ्थयं, प्रभू[1] सदा समथ्थयं ॥ ७७ ॥

दोहरा छंद

प्रसन भए ऋषि पद्म तब, अस्तुति सुनत प्रमाँन[2] ।
जैत राज यहिँ थल करो, राव राखि सिव ध्याँन ॥ ७८ ॥
हर प्रसन्न भय राव पहँ, मुनिबर पद्म प्रसाद ।
मिले भील-कुल सकल तहँ, हरषित मिटे बिषाद ॥ ७९ ॥

छंद पद्धरी

ऋषिराज पद्म आज्ञा सुपाय ।
नृप जैत मित्र मंत्रिय बुलाय ॥
बड़ वणिक गणक कोबिद सुजाँन ।
तिन पुच्छि मंत्र वास्तव प्रमाँन ॥ ८० ॥
सुभ दिए मुहूरत नीव हेत ।
रणथंभ नाँम औ गढ़ समेत ॥
सव ग्यारह सै दस बरष और ।
सुइ संवत बिक्रम कहत मौर ॥ ८१ ॥
इषु अर्द्ध अरंगा को प्रसिद्ध ।
रवि अयन सोम्य जान्यौ प्रसिद्ध ॥
सत्र कला पाँच जानो सुइष्ट ।
त्रिय पुरुष लग्न गढ़ कीन इष्ट ॥ ८२ ॥
गत इक्क अंस वृषभाँनु जानि ।
ससि बेद सार्द्ध मिथुनेस मानि ॥
तृन अंस वृस्चिक कै इलानंद ।
ससि बीस[3] नंद अज अंस मंद ॥ ८३ ॥

---

१ प्रभु सदा सर्थयं । २ अमाँन । ३ अंश ।

जष* रासि जानि नव अंस सुद्ध ।
तम तीन अंस मूरति समुद्ध × ॥
त्रिय धूमकेतु गुण अंस जानि ।
भृगु सप्त गुरू[1] सत्रा सु मानि ॥ ८४ ॥
तन लग्न उभै जानो सु जानि ।
फल कह्यौ वरष सत आयु मानि ॥
षय भाव भाँन तिहिं भवनहीन ।
कछु घटे वरष छिन मैं प्रवीन ॥ ८५ ॥
तिहिं समय अटल थूणी सथप्प ।
गणनाथ पूजि सुभ मंत्र जप्प ॥
करि होम देव पुज्जे अपार ।
गो भुंमि रत्न हाटक सुढार ॥ ८६ ॥
दिय दाँन द्विजिन बहु विधि अनेक ।
नृप जैत सकल पुज्जे विवेक ॥
तिय करत गाँन मंगल सरूप ।
धुनि दुंदभि बज्जत अति अनूप ॥ ८७ ॥
सब करहिं हरष नर नारि वृंद ।
यहि भाँति नीम रचना सुछंद ॥ ८८ ॥

दूहरा छंद

ग्यारा सइ दस अग्गरो, संवत माधव मास ।
सुक्ल तीज शनिवार कैं, चंद्र रक्ष अनयास ।।८९॥
थूणीगढ़ रणथंभ की, रोपी पदम् प्रताप ।
सुमरि गणेस गिरीस कौ, नगर बसायौ आप[2] ॥९०॥

---

१ सप्तम गुरु । २ आय ।

* जष (झष)=मीन (राशि) × समुद्ध=समृद्ध ।

वार्ता (वचनिका)

राव जैत पद्म ऋषि की आज्ञा तैं गढ़ रणथंभ की नीम दिवाई। ताही समय सहर बसावन की मन मैं आई। (रणथंभ की नीम का लग्न) ग्यारा सै दसोत्तरा कौ संवत् बैसाख की आषै तीज (अक्षय त्रितिया) मैं सनिस्चर मैं घड़ी पाँच दिन चढ़े मिथुन लग्न मैं नीम दीनी। गणेस पूजकर सिवजी की और पद्म ऋषि की आज्ञा पाय अनेक उछाह करि धन दीनौ।

चौपाई

जैत राव थिर थूणी रुथ्थिय× । भूसुर बृंद वंदि पद उथ्थिय ॥
ध्वजा पताक कलस अरु तोरन । मंगलरूप सुरूप निचोरन ॥९१॥

इष्ट लग्न, सू० ५ ॥ २ । ८ ॥ १। ०० चं० ३ । ४ । मं० ७ । ३०० । २० । वृ० ८ । १७ । शु० २ । ७ श० ११ । ६ । रा० २ । ६ के ८ । ३

छंद भुजंगप्रयात

पुरं मंदिरं चौहटं औ गवाष्यं+ ।
भुजंगप्रयातं सुंदरं प्रवंधं सुभाष्यं ॥
पुरी इंद्र की सीस वै सुभ्र देखी ।
सबै मंदिरं सुंदरं उच्च लेखी ॥ ९२ ॥
पड़द्दा जरी बाफतं * कै वनाए।

× रुथ्थिय=रूँधा, स्थिर किया । + गवाष्यं (गवाक्ष)=झरोखा।
* बाफतं (बाफता)=एक प्रकार का रेशमी वस्त्र जिसपर कलाबत्तू और रेशमी बूटियाँ होती हैं ।

ध्वजा तोरणं सर्व कै गेह छाए ॥
कपाटं सिरीखंड हाटक÷ सोहैं ।
सबै चित्र सा चित्र सूचित्त मोहैं ॥ ९३ ॥
बितानं छए झल्लरी सोभसानी ।
सबै ठौर सोहै मनो कामरानी ॥
गृहं द्वार गोखा झरोखा सुहाए ।
सुगंधं चुवा इत्र महकंत भाए । ९४ ॥
यसो नग्र रम्यं रच्यौ भूप केरो ।
किते चारु चौकंत भावंत हेरो ॥
बसैं वर्ण च्यारच्यौ जथासंखि बासं ।
चहूँ आश्रमं औ तजं लोभ आसं ॥ ९५ ॥
सबै आय आयं रहै धर्म माहीं ।
छिमासील दानं बृतं नीत[1] आहीं ॥ ९६ ॥

छप्पय छंद

महा वंक गढ़ हड्ढ़ बुरजि[2] कंगुर बर सोहैं ।
चहूँ कोद[3] अग अगम चारु दरवाजे मोहैं ॥
घाटी चतुरासीति[4] बिषम अति[5] पच्छि न पावैं ।
वनचर वंकट वेस पाय लगि यों गुन[6] गावैं ॥
तुम नाथ हमारे[7] कृपाकरि[8] गढ़ लज्जा यह[9] धारिये ।
परबेस मनहुँ रवि को प्रकट यह गढ़ हम प्रति पारिये ॥९७॥

दोहरा छंद

च्यारि दरा चहुँ[10] ग्राम बसि, घाटी किती जु और ।
चहूँ ओर पर्वत अगम, बिचरण थंभ सु जोर ॥९८॥

---

१ नित्य । २ सुदृढ़ गुरजि । ३ कोध । ४ घाटी चोइससाठि ।
५ अति, गति । ६ मुख । ७ हमार । ८ करी । ९ हम । १० चउ ।

÷हाटक(हाटक)=सोना ।

अथ पद्मऋषि तनपात प्रसंग

छप्पय

रणतभँवर ऋषिपद्म उग्रतप तेज कराए[१]।
इंद्रासन डिगमगिय[२] देवपति[३] संका खाए॥
तब कामादिक बोलि सक्र ऋषि पास पठाए।
करो बिघ्न तव जाय भंग पर काज नसाए[४]।
तब चल्यव मार निज सेन जुत[५] ऋतु वसंत प्रगटिय तुरत।
बह त्रिविध पवन अद्भुत महा करहिं[६] गान रंभा सुरति॥९९॥

बसंत ऋतु वर्णन

छंद पद्धरी

तिहिं समय काम प्रेर्यौ सुरिंद्र।
जुहारि इंद्र उठि पाव बंदि॥
सब परिकर बोले[७] चढ़ि सुमार।
ऋतु छहूँ संग धनु सुमन हार॥ १००॥
रति परम प्रिया ऋतुराज जानि।
नित रहत निरंतर रूप मानि॥
बहु किन्नर गावत देवनारि।
गंधर्व संग अति बल उदार॥ १०१॥
संगीत भाव गावैं अनंत।
सुर नर सुनंत बसि होत मंत॥
बन उपबन फुल्लहिं अति कठौर।
रहे जौँर मौँर रस अंबमौर॥ १०२॥

---

१ करायौ। २ डगमग्यौ। ३ इन्द्र मन माहिं (माँझि) डरायौ।
४ नठाए। ५ जुरि। ६ करति। ७ बुल्ले।

कल कूजत कोकिल ऋतु बसंत।
सुनि मोहत जहँ तहँ सकल जंत॥
नर नारि भए कामंध अंध।
तजि लाज काज परि काम-फंद॥ १०३॥
पहुँचे सुमारि ऋषि निकट आय।
प्रेर्‌यौ सु परम भट अग्ग जाय॥
ऋषि लखे सुभट सेना सुकाम।
ऋषि कह्यौ कहा करिहै सुबाम॥ १०४॥
करि कठिन आप लाई समाधि।
तिहिं रहत काम क्रोधारि व्याधि॥

ग्रीष्म ऋतु वर्णन

ऋतु ग्रीषम कौ आज्ञा सु दिन्न।
तिहिं अति प्रताप जाज्वल्लि किन्न॥ १०५॥
रवि तपै बिषम अति किरन धूप।
रवि नैन खुल्लि दिक्खिय अनूप॥
वट इक्क महा गह्वर सुजानि।
तिहिं निकट सरोवर सुरस मानि॥ १०६॥
इक आस्रम सुंदर अति अनूप।
तिय गान करत सुंदर सरूप॥
सौरभ अपार मिलि मंद पौन।
मृगमद कपूर मिलि करत गौन॥ १०७॥
स्रीखंड *मेद[1] केसर उसीर।
तिहिं परसि ताप मिट्टत सरीर॥

---

१ मेरु।

* मेद=कस्तूरी।

गंधर्व और किन्नर सुबाल।
मिलि अंग रंग पहरें सुमाल ॥ १०८ ॥
चित चल्यौ नाहिं ऋषि बज्रमाँन।
रहि ग्रीष्म[1] ऋतू हिय हारि माँन ॥ १०९ ॥

दोहरा छंद

लग्यौ न ग्रीषम कौ कछू, ऋषि प्रताप तपधीर।
तब पावस परनाँम करि, आयस काँम गहीर ॥ ११० ॥

वर्षा ऋतु वर्णन

छंद भुजंगप्रयात

उठे बद्दलं घोर आकास भारी।
भई एक बारं अपारं अँध्यारी ॥
बहैं पौन चार्‌यों महा सीतकारी।
चहूँ ओर क्रोधंत दामनि अँध्यारी ॥१११॥
घने घोर गज्जंत बर्षंत पानी।
कलापी पपीहा रटैं भूरि बानी ॥
तहाँ बाल झूलंत गावंत झीनी।
रही जाय आस्रम भई कॉमभीनी ॥११२॥
उड़ैं चीर सम्मीर लग्गंत अंगं।
लसे गात देखंत जग्गै अनंगं ॥
करैं सोर झिल्ली घने दद्दुरंगे।
तहाँ बाल लीला करैं काँम संगे ॥ ११३ ॥
निकट्टं उघट्टंत संगीत बाला।
बरं अंग अंगं रची फूलमाला ॥

---

१ ग्रीष्म।

कटाछं करैं मंद हासं प्रसारैं[1]।
तहाँ पद्म अंगं लगैं ना निहारैं॥ ११४॥

दोहरा छंद

पावस हारि बिचारि जिय, ऋपि न तज्यौ तप आप।
तब सु मैन मन मैं कहिय, उपजे सरद सुताप॥ ११५॥

शरद ऋतु वर्णन

छंद त्रोटक

तजिये तप पावस बित्ति सबं।
ऋतु[2] सारद बादर दीस अबं॥
सरिता सर निम्मल नीर[3] बहैं।
रस रंग सरोज सु फुल्लि रहैं॥ ११६॥
बहु खंजन रंजन भृंग भ्रमैं।
कलहंस कलानिधि बेंदि* भ्रमैं॥
बसुधा सब उज्ज्वल रूप कियं।
सित बासन जानि बिछाय दियं॥ ११७॥
बहु भाँति चमेलिय फूलि रही।
लखि मार सुमार सुदेह दही॥
बन रास बिलास सुवास भरै।
तिय काँम[4] कमाँन सुतानि धरै॥ ११८॥
समर्यों[5] पर तैं नर काँम जगै।
बिरही सुनि कै उर घ्याव[6] खगै॥
धर अंबर दीपग जोति जगी।

---

१ प्रहारैं। २ रति। ३ बारि। ५ बाँन। ५ श्रमणे। ६ घाव।

* बेंदि—(बेधि)=बेधकर।

नर नारि लखैं उर प्रीति पगी ॥ ११६ ॥
ऋषि पास त्रिया सर न्हान रच्यौ।
जल केलि अनेक[1] प्रकार मच्यौ ॥
बिन चीर अधीर लखै नर वै।
कुच पीन नितंब सुकाँम तवै ॥ १२० ॥
कबरी छुटि नागनि सी दरसै।
सुर संग भ्रमै रस सों सरसै ॥
ऋषिराज महा उर धीर अयं।
रितु सारद हारि सुजात रयं ॥ १२१ ॥

दोहरा छंद

हारि मानि सारद गइय, उठि हेमंत सकोपि।
महासीत प्रगटिय जगत, सवै लाज तजि लोपि ॥ १२२ ॥

हेमंत ऋतु वर्णन

छप्पय छंद

तब सुहेम करि कोप सीत अति जगत प्रकास्यौ।
बिषम तुषार अपार मार उपचार सुभास्यौ[2] ॥
कंपत[3] चैतन रूप कहा जर जरत समूरे।
तिय हिय लगि लगि वचन चरत मुख सैन सरूरे ॥
तिहिं समय जीव सब जगत के भए इक्क नर नारि सब।
उरवसी आय ऋषि निकट तंक[4] हिये लाय मोहिं[5] सरंन[6] अब ॥१२३॥

दोहरा छंद

खुली न कठिन समाधि ऋषि, चली हिमंत सुहारि।
सिसिर परस मन बरनि करि, उठी सुकाँम जुहारि ॥१२४॥

---

१ अपुब्ब। २ सुभाष्यौ। ३ नचै। ४ तैं,लौं। ५ मुहिं। ६ सरनि।

शिशिर ऋतु वर्णन

छंद मोतीदाम

कियौ तब मार हुकम्म सु हेरि।
उठी सिसिरौ[1] तब आयसु फेरि ॥
किये नव पल्लव जे तरु वृंद।
प्रफुल्लित अंब कदंब स्वछंद ॥ १२५ ॥
वहैं बहु भाँति त्रिविद्धि समीर।
रहै नहिं धीरज होत अधीर ॥
लता तरु भेंटत[2] संकुल भूरि।
भए त्रण गुल्म हरे जड़ मूरि ॥ १२६ ॥
मिटै जग सीत न ताप न तोय।
सबै सुखदायक जोवन सोय ॥
झुके फल फूल लता वर भार।
भ्रमैं बहु भृंग जगावत मार ॥ १२७ ॥
लगी लखि वायु सबै तिहिं बार।
सुने डफ लाज तजैं नर नार ॥
बजावत गावत नाचत[3] संग।
अबीर गुलालरु केसरि रंग ॥ १२८ ॥
भए मतवार सु खेलत[4] फाग।
महा सुख संग सँजोग्गनि[5] भाग ॥
बियोग्गनि जारत मारत मार।
अनेक सुगंध अनेक बिहार ॥ १२९ ॥

---

१ ससियौ। २ भिंट्टत। ३ नच्चहिं। ४ खिल्लत। ५ सँजुग्गनि।

वसंत ऋतु वर्णन

छंद लघुनाराच

असंत संत मोहियं, बसंत खोलि जोहियं।
बजंत[१] बीन बाँसरी, मृदंग संग आँसुरी॥ १३०॥
लियं सुबाल बृंदयं, जगत्त काँम द्वंदयं।
अनेक रूप सुंदरी, मनोज राव की छरी॥ १३१॥
स्वबेस केस पासयं, मनो कि मैन फाँसयं।
गुही त्रिबिद्धि वैनियं, कि मोह किन्न[२] सैनयं॥ १३२॥
महा सुघट्ट पट्टियं, सृँगार भूमि फट्टियं।
बिचै सुमंद[३] रेखयं, महा बिसुद्ध देखयं॥ १३३॥
बिसाल भाल सोभियं, छपा सु नाथ लोभियं[४]।
सु मध्य सीस फूलयं, दिनेस तेज तूलयं[५]॥ १३४॥
भरी सु मुक्त मंगयं, मनो नछत्र संगयं।
बिसाल लाल बिंदयं, मिले सु भोम चंदयं॥ १३५॥
जराव आड भाइयं[६], मनो मिलन्न आइयं।
दिनेस भोम बुद्धयं, ससि गृहे सु सुद्धयं॥ १३६॥
कपोल गोल आहसं, कि भौंह भौंर साहसं।
प्रफुल्ल कंज लोचनं, मृगाखिख[७] गर्ब मोचनं॥ १३७॥
त्रिबिद्ध रंग गातयं, सु स्याँम स्वेत राजयं[८]।
बनी कि कीर नासिका, सु गथ्थ नथ्थ भासिका॥ १३८॥
मनो सु काँम ओपयं[९], दयौ सुचक्र[१०] कोपयं।
करन्न फूल राजयं, उभै कि भाँन साजयं॥ १३९॥

---

१ मुढंग ताल खंजरी। उपंग संग अंसुरी। २ कीन। ३ सुमंग, माँग। ४ लोपियं। ५ तुल्लयं। ६ भालयं। ७ मृगासि। ८ रातयं। ९ वोपयं। १० चक्र।

सुहंत स्याँम अल्लकं, भ्रमत्त भौंर वल्लकं।
अरुन्न रेख बेसयं, पियूष कोस देखयं ॥ १४० ॥
अनार दंत कुंदयं, लसंत बज्र दंतयं[1]।
बुलंत बाणि कोकिला, बिपंच की सुरं मिला ॥ १४१ ॥
कपोति पोति कंठयं, सुढार हार कंठयं[2]।

छप्पय छंद

कुच कंचन घट प्रगट, नाभि सरवर वर सोहै।
त्रिबली पापहँ ललित, रोम राजी मन मोहै॥
पंचानन मधि देस, रहत सोभा हियहारी।
मनहुँ काँम के चक्र, उलटि दुंदुभि दोउ डारी[3]॥
दोउ[4] जंघ रंभ कंचन दिपत[5], घरी कमल हाटक[6] तनै।
गति हंस लखत मोहत जगत, सुर नर मुनि धीरज हनै ॥१४२॥
जिती उव्वसी संग, सकल सम्मूह मिलिय वर।
बिचि सु मैन सह सैन गए, ऋषि निकट मरूकर॥
गावत बिबिधि प्रकार, करत लीला मन भाइय।
हाव भाव परभाव, करत आस्रम मैं आइय॥
ऋषि निकट आय होरिय रचो, बर्षत रंग अनंग गति।
नन[7] चलै चित्त ज्यों ज्यों[8] अचल, करत क्रया त्यों त्यों अमित॥१४३॥

दोहरा छंद

करि बिचार त्रिय कृत क्रया, कुसुम कुंद गहि[9] लीन।
लीला ललित सु बिथ्थरिय,[10] चंचल बयसु नवीन॥ १४४॥
ससि मुख बृंद[11] स्वछंद मिलि, रति सम रूप अनूप।
ऋषि समीप क्रीड़ा करत, हरत धीर मुनि भूप ॥१४५॥

---

१ द्वंदयं। २ तंठयं। ३ निस्साँन सुधारी। ४ दुहुँ। ५ उलटि।
६ हारक। ७ चन। ८ भौ। ९ कहि। १० बिस्तरी। ११ वोइ।

चौपाई छंद

बषंत रंग अनंग सु बाला।
मनहुँ[१] अनेक कमल की माला॥
चंचल नैन चलैं चहुँ आसा।
रूप सिंधु मनु मीन सु पासा ॥१४६॥
घूँघट ओट दुरत प्रगटत यों।
मनों ससि घटा दबत उघटत ज्यों॥
बिलुलित बसन अंग दुति सोहै।
निरखत सुर नर मुनि मन मोहै ॥१४७॥
अलक सलक[२] अतिसैं चटकारी।
अमी पियत[३] ससि नागनि कारी॥
छुटै गुलाल मुठी मृदु मुसकै।
चूवै अधर[४] बिंब रस चमकै॥ १४८॥
करैं गान पसु पच्छी[५] मोहैं।
कहो जगत इन पटतर को है॥
लै लै गैंद परसपर मेलैं।
बाल बृंद मिलि मिलि सुख झेलैं॥ १५०॥
अध ऊरध[६] चहुँ ओर सुमारैं।
लजति खिजति लगि[७] प्रेम प्रहारैं।।
मंद पवन लगि चीर परयो धर।
कुच अंकुर[८] उर मनहुँ उभै हर॥ १५०॥
दमकति दिपति सलोंनी दीपति।
कामलता बिहरैं मनु गज गति[९]॥

---

१ मनों। २ चिलक। ३ पीवत, पवत। ४ अधर बिंब रसकै चसकै। ५ पच्छिय, पच्छी। ६ अद्ध उद्द। ७ मिलि।८ अंबर। ९ झीन लंक अंग झलकत वर। नाभि गँभीर त्रिवलि अति सुंदर।

लगत गैंद कंपित उर भागी।
मंद मुसुकि ऋषि निकट सुपागी[1] ॥ १५१ ॥
सुमन बृंद सौरभ उठि भारी।
भ्रमर पुनीत[2] गुँजार[3] उचारी[4] ॥
सबद उन्मद[5] संधाँन सु किन्नौ।
अति रिसि तानि स्रवन उर दिन्नौ ॥ १५२ ॥
छुटि समाधि ऋषि नैन उघारे।
अति सकोपि सम्मर उर मारे॥
चहुँ दिसि चितै[6] चक्रित ऋषि भयऊ।
लखि तिय बृंद अनंद सु भयऊ॥१५३॥
लीला गैंद फागु मिसि[7] दौरी।
हो हो करत उठी बर जोरी[8] ॥
बन अकेलि तिय पुरुष न कोऊ।
लीला अमित देखि दृग दोऊ ॥१५४॥
रंग अपार डारि ऋषि ऊपर ।
कल कल हंस बजत पद नूपर॥
करैं[9] कटाक्ष अनेक सु बाला ।
नैन सैन सर लगि चित चाला ॥१५५॥
अंग अंग गहि फाग[10] सु मग्गै।
परसि गात तब काँम सु जग्गै[11] ॥

---

१ सुनि बादित्र गाँन कल लीला। काँम कोपि सर धनुष सुमीला। २ पुनिच। ३ गुंजार। ४ त्रिबिधि समीर सुहावन जानी। प्रफुलित नूत बैठि धनु पानी। ५ उन्माद। ६ चित। ७ मिलि। ८ कंदुक केलि और मिसि होरी। भोरी निपट लेत चित चोरी। डारि मोहिनिय मोहिव चाला। माया बसि भौ ऋषि तिहिं काला। ६ करत। ११ फाग सुमागै। ११ जागै।

मुख मीँडत[1] अंजन गहि दिन्नौ ।
जग्यौ काँम ऋषि काँम सु भिन्नौ ॥१५६॥
लखि मुसक्यानि भई मति भोरी ।
जीति सरस[2] ऋषि काँमनि हेरी ॥१५७॥

अथ तुलसीदास पूर्व पच्छ[3]

दोहरा छंद

का नहिं पावक जरि सकै, का न समुद्र समाय ।
का न करै अबला प्रबल, किहिं[4] जग काल न खाय ॥१५८॥
कबि लक्खन[5] अबला कहत, सबला जोध कहंत ।
दुबिला[6] तन मैं प्रगट जिहिं, मोहत संत असंत[7] ॥१५६॥
जीति सिसिर बित्तिय[8] तबै, फिरि आयव ऋतुराज ।
मिले उर्बसी पद्म ऋषि, सरे सक्र के काज ॥१६०॥
बिवस भए[9] मुनि अप्छरा[10], भुल्लिय तप व्रत नेम ।
निसि बासर क्रीड़ा करत[11], बढ्यौ जु तन मन प्रेम ॥१६१॥
सुरति बढ़ी चित मैं चढ़ी, मढ़ी मोह मति भूरि ।
छिन छिन तिय ऋषि रजत[12] दोउ, भयउ[13] प्रेम परिपूरि ॥१६२॥
हृदय पुरंदर त्रास गनि, गइय[14] उर्बसी त्यागि ।
बिन माया ऋषिराज तब, मन सुत्तो[15] सो जागि[16] ॥१६३॥
जाय जुहारे इंद्र कौ, काँम उर्बसी संग ।
कज्ज[17] सँबारयौ रावरौ, करयौ कठिन तप भंग ॥१६४॥

---

१ माडत । २ ससिर । ३ अथ तुलसीदास रामायने पूरब पच्छि । ४ को । ५ लाखन । ६ द्विर्बिला, द्रुबिला । ७ अनंत । ८ बीती । ९ भयौ । १० अच्छरिय । ११ करै । १२ राज । १३ भरे । १४ गई । १५ सोवत सो । १६ लागि । १७ काज ।

(वचनिका) वार्त्तिक

तब इन्द्र कामादिक कौ सत्कार कियौ। यहाँ ऋषि पद्म सूतो सो जाग्यौ। मन महँ बिचार करन लाग्यौ। मैं तो माया मैं पाग्यौ तप खोयौ औ कलंक लाग्यौ। और अब दोनौं गईं तपस्या तो खंडित भई, अरू उर्वसी हू जात रही अब यातैं यह सरीर राखनो योग्य नहीं और मन की बासना भौत ठौर भई तातैं एक सरीर सूँ कछू बनि आवै नही। जब ऋषि होम करि सरीर त्यागौ। जहाँ जहाँ बासना रही तहाँ तहाँईं[1] पाग्यौ ॥

दोहरा छंद

तिय वियोग ऋषि तन तज्यौ, ग्यारा सै चालीस।
माघ सुक्क द्वादसि सु तिथि, बार बरनि रजनीस ॥१६५॥

छंद पद्धरी

तन पात किन्न ऋषि पदूम आप ।
उर्बसी विरह तन मन सु ताप ॥
ग्यारा सौ चालोस जानि ।
नृप बिक्रम संबत ताहिं मानि ॥१६६॥
तप[2] सिद्धि मास अरु बहुत पच्छि ।
ऋतु सिसिर द्वादसी तिथि सु रच्छि ॥
सिवबार सोम जान्यौ प्रसिद्ध ।
जित प्रीति योग बिच[3] करन अद्ध ॥१६७॥
रवि अयन[4] अंस अठ वीस मानि ।
ससि जन्म त्रियोदस अंस जानि ॥
सुध मीन लग्न बिगृह सु त्यागि ।
करि हवन जवन सुख हृदय पागि ॥१६८॥

---

१ ही। २ तपसि। ३ बिव। ४ एण।

निज प्रथम अंग पंचांग होम ।
जित रही बासना सरस धोम× ॥
ऋषि मुद्गल गोती सिखाहीन ।
वहि तिलक हृदय आयौ नवीन ॥१६९॥
सिर भयौ पृथ्वीपति जवन ईस ।
जिहिं राज्य कर्‌यौ[1] पूरण दिलीस ॥
वह रह्यौ तिलक दिय परि अनूप ।
तहँ भौ[2] हमीर चहुवाँन भूप ॥१७०॥
दोउ वाद कर्म्म किन्नौ सु चाहि ।
दोउ भए भीर महिमा सु साहि ॥
अरु लग्न उर्वसी चरन संग ।
यह भए पंच ऋषि पद्‌म अंग ॥१७१॥

(वचनिका) वार्तिक

ऋषि पद्म उर्वसी को बिरह तन त्याग्यौ । माह सुक्ल १२ द्वादसी सोमवार आद्रा नक्षत्र प्रीति योग ववकर्ण, सूर्य्य २८ अट्ठाईस, चंद्रमा मिथुन को तेरा १३ अंस, मीन लग्न मैं देह होमी । पाँच अंग होम्याँ जितनी बासना जितनी जायग्ग हुई । ताहीं सों पाँच स्वरूप एक सरीर का हुवा ॥
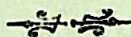
अथ राव हम्मीर को जन्म[3] वर्णन

दोहरा छंद

ससि वेद रुद्र संबत गिनो, अंग खाभ्र षित साक ।
दक्षण अयन सु सरत ऋतु, उपजे गए न नाक ॥१७२॥

---

१ कर्‌यउ । २ भयौ । ३ जन्म समयो, जन्म समय्यो ।

× धोम=धूम्र ।

गजनी गौरो साह सुत, भय अलावदी साय।
ताहीं दिन रणथंभ गढ़, जन्म हमीर सु आय ॥१७३॥
यह हमीर नृप जैत कै, अमर करण आचार।
मीणा भारू बंधु दोउ भई नारि तिहिँ बार ॥१७४॥

छंद पद्धरी

ससि रुद्र वेद संबत सुजाँन।
षट सहस इक्क साको प्रमाँन ॥
रवि जाँम अयन दच्छण सुगोल।
ऋतु सरद सुभ्र सुंदर अमोल ॥ १७५ ॥
तिथि भाँन उंर्ज्ज बल पच्छि जानि।
रवि घटो तोस अरु दोय मानि ॥
हिर वुध्न वेद घटि घटिय साठ।
व्याघात योग मुनि घटी आठ ॥ १७६ ॥
बालव्व नाम सोइ कहत कर्ण।
यहि भाँति कह्यउ पंचांग बर्ण ॥
रवि उदय इष्ट घटिका छतीस।
पल सून्य पंच जान्यूँ सदीस ॥ १७७ ॥
पल षोड़स अष्टावीस दंड।
दिनमाँन जाँन तिहिं दिन सुमंड ॥
इकतीस चवाली रात्रि मानि।
सब घटिय साठि दिन राति जानि[1] ॥१७८॥
भौ[2] जन्म लग्न मिथुनेस आय।
द्वादसह अंस गत्त भए बताय ॥
तुलभाँन सप्तदस अंस मानि।
सरि रुद्र[3] अंस झख रासि मानि[4] ॥१७९॥

---

१ मानि। २ भयौ। ३ सर रूद्र। ४ जानि।

मंगल सुबाल धरि एक अंस।
बुध बारह वृस्चिक मैं प्रसंस ॥
घटि जीव एक अंसह सुसुद्ध।
भृगु कन्या विद्या सुभग लद्ध ॥१८०॥
ससि मीन तीस कटि एक अंस।
तिय रासि कह्यौ सुरभानुतंस ॥
सोइ कहे अंस चौबीस पूर।
यह जन्म लग्न हम्मीर सूर ॥१८१॥
सुनि राव जैत मन हर्ष किन्न।
भंडार अमित सब खोलि दिन्न ॥
गुरु बिप्र मंत्र मंत्री सु बोलि।
बड़ भीर भइय नृप आय पौलि ॥१८२॥
किय स्राद्ध नंदि मुख बेद बृद्धि[१]।
सब जात कर्म किन्नौ सु सुद्धि ॥
गो भुम्मि अन्न कंचन सु दिन्न।
द्विजराज सकल संतुष्ट किन्न ॥१८३॥
लिय बोलि सकल जाचक सु वृंद।
हय हेम सुखासन दीन वंद ॥
वहु भूषन वाहन बिविध रग।
जिहिं चाह लही सो दियौ संग ॥१८४॥
दधि दूब हरद भरि कनक थाल।
वहु गाँन करत प्रबिसंत बाल ॥
दुंदुभि बजंत घर घरन वार।
ध्वज कनक पताका द्वार द्वार ॥१८५॥
औछाह राजमंदिर अनूप।

---

१ बिद्धि।

आनंदमग्न नर नारि भूप ॥
सब दाँन देत घर घर उछाह।
सब भय अजाचि जाचत सु ताह ॥१८६॥
बहु मंगल गावत अति अनूप।
जय जयति कहत चहुवाँन भूप ।१८७॥

वचनिका

राव जैत कै गढ़ रणथंभवर तहाँ जैत घर हम्मीर जन्म्यौ संबत ११४१ साकौ १००६ दक्षणायन सरद ऋतु कार्तिक सुक्ला १२ द्वादसी रविवार घटी ३२ उत्तरा भाद्रपद घटी ६ पल ५६। कछु घर को धर्‍यौ पायौ। एक सेवक लोह पत्र पाथर सों घस्यौ तहाँ लोह सोनो (सुवर्ण) भयौ राव जैत कौं आणि दयौ व्याघात योग घटी १६ पं० बालव कर्ण घटी २८ इष्ट घटी २६ पल ५ दिनमाँन घटी २८ पल १६ रात्रिमाँन घटी ३१ पल ४४ तुला संक्रांति गतांस १७ भोगांऽस १३ चंद्रमा मीन को ११ अंस मंगल

कन्या को १ अंस बुध वृश्चिक को १२ अंस बृहस्पति कुंभ को १ अंस सुक्र कन्या को १४ अंस सनि मीन को २६ अंस राहु कन्या को २४ अंस राव हम्मीर असी घड़ी जन्म लियौ। सब को मनोर्थ पूर्ण कियौ। सर्व वंस मैं हर्ष हुवो और अजमेर चित्तोड़ जु वोलि बिप्र पोष्या जाचक संतोख्या[1] मंगल गाए वधावा[2] बजाया ॥

---

१ सरबस मैं (सर्वस्व मैं) दान दीन्हौं जग जस लीन्हौं। २ भए मन भाए।

अथ हम्मीरराव को और अलावद्दीन पातसाह को बैर समय्यो बर्णन

दोहा

इक्क[१] समय पातसाह बन, मृगया कहि मन किन्न[२] ।
सबै खाँन उमराव चढ़ि, हय गय बृंद सु लिन्न[३] ॥ १८८ ॥
हरम सबै पतसाह को, जो सिकार के जोग ।
साज बाज बनि बनि सकल, अरु अंदर के लोग ॥ १८९ ॥
सुंदरता सुकुमार निधि, वहै अपछरा अंग[४] ।
ताके गुन गन तैं बँध्यौ, निमिष न छाँड़त[५] संग ॥ १९० ॥

छंद भुजंगप्रयात

चले साह आखेट[६] बज्जे निसाँनं ।
सबै भूप सथ्थं सुपथ्थं[७] सुजाँनं ॥
सजे डंबरं अंबरं साज बाजं ।
बनी पख्खरं बाजि साजं समाजं ॥१९१॥
किते बीर बाने अमाने अपारं ।
किते मीर धीरं सजे सार धारं ॥
नफीरी बजी भेरि बज्जे रवद्दं ।
वहै उर्वसी संग लिन्नी समद्दं ॥१९२॥
जके रूप सौं साह बंध्यौ सुजाँनं ।
जथा चंद्र की कांति चक्कोर माँनं ॥
जथा पंकजं[८] वै दुरैफैं लुभाए ।
तथा साह बंध्यौ सनेहं सुभाए ॥१९३॥

---

१ एक। २ कीन। ३ लीन। ४ अच्छरी अंग। ५ छंडहिं। ६ आलादि (अलाउद्दीन)। ७ समथ्थं सुखाँनं। ८ पंकजं पै दुरैफै लुभाए।

चले हयदलं पयदलं सथ्थ रथ्थं[1]।
किते स्वाँन चीता मृगं संग जुथ्थं॥
चले साह गोसं सरोसं सुभाँनं।
वजे नद्द नीसाँन नव्वीन[2] चावं॥१६४॥
उठी रेणु आकास छायौ सुहद्दं।
मनो पावसं मेघ गज्जे सवद्दं[3]॥
चले तेज ताजी सुबाजी अपारं।
सबै खाँन सुलताँन संगं जुझारं॥१६५॥
करैं बीर लीला सुकीली[4] बिधाँनं।
धरैं बाँन कम्माँन संधाँन पाँनं॥
लखे जीव जेते सु केते जिहाँनं।
भ्रमैं जन्त्र तंत्रं सु पावै न जाँनं॥१६६॥
बनै[5] बेहरं गोत्र गंभीर नारी[6]।
वहैं नीर नद्दं सुभद्दं उन्हारी॥
झरैं निज्झरं[7] नाद भारी असारं[8]।
रहे फूलि संकूल बृक्षं अपारं॥१६७॥
जहाँ अंब नीबू भए और केलं।
सवै बृच्छ[9] फुल्ले फले भार मेलं॥
भरी भार साखा[10] रही भुम्मि लग्गी।
लता संकुलं पाद पंतैं उमग्गी॥१६८॥
भ्रमै भृंग पुंजं सुगुंजं अपारं।
मिली बेलि केती महीरूह[11] डारं॥
मनों मार अप्पार ताँने बिताँनं।

---

१ हत्थं। २ वानै सुचावं। ३ सुभंदं, सुसद्दं। ४ सकेली। ५ बनं। ६ भारी। ७ नीझरं, निर्झरं। ८ पहारं। ६ वृक्ष फूले। १० सारं। ११ महीरोह।

तिहूँ काल हेरै लखै नाहिं भाँनं ॥१९९॥
रमै कोकिला कीर नच्चै मयूरं।
कहैं बैन मानो बजै काँमतूरं॥
बहै सीत मन्दं सुगंधं पवन्नं।
करै काँम उद्दीपनं देखि बन्नं ॥२००॥
सुरं[1] सुंदरं पंकजं बन्न फुल्ले।
करैं गुंज भारी भ्रमैं भ्रमर भुल्ले॥
चहूँ ओर कुमोदनी चारु फुल्ली[2]।
महा मोद सोँ भार आनंद झुल्ली ॥२०१॥
किते जीव संमूह देखंत भज्जैं।
मृगं व्याघ्र चीते रिछं जत्र गज्जैं[3]॥
कहूँ कौलपुंजं कहूँ लीलगाहं।
कहूँ चीतलं पांडुलं[4] ब्याघ्र नाहं ॥२०२॥
कहूं भिल्ल बंके[5] बसैं ताऽस्थाँनं[6]।
भखैं सिंह स्यारं ससास्रोन पाँनं॥
करैं सिंह गुंजार-भारी भयाँनं।
सुने प्राँनहारी डरैं जीव हाँनं॥२०३॥
तहाँ साह की सेन किन्हौं प्रबेसं।
तजे खाँन[7] पाँनं लए जो असेसं॥
करैं बीर जेते सु केते उपावं।
हनैं जीव जे साहि को बाज[8] पावं[9] ॥२०४॥
तहाँ साह कै यूँ भए जाय डेरा।
चहूँ ओर को खाँन केते अनेरा॥

---

१ सरं सुन्दरं पंकजं पुंज। २ फूली। ३ मृगं भार चीते वृकंजत्र गज्जैं। ४ पाडलं। ५ भील बाँके। ६ तास स्थानं। ७ जाँन। ८ बाच। ९ उपायं, जपायं (अंत्यानुप्रास)।

कहूँ[1] बीन बादित्र बाजंत ऐसी।
सुने राग मोहं[2] मृगं माल बैसी ॥२०५॥
करैं गाँन ताँनं पसू पच्छि मोहैं।
सुनै जीव आवंत[3] जानैं न को हैं॥
सुने बीन पव्बीन[4] सुर नाय रागैं।
रहे मोहि कै माल डारे न भागे ॥२०६॥
कहूँ राग ऐसो करैं मेघ आवैं।
तबै साह ताको बड़ी मौज द्यावैं॥
असी भाँति आखेट कै रंग भीनो।
निसा द्यौस जातंन काहू न चीनो ॥२०७॥
तिहीं ठौर बित्त्यौ सुसारौ बसंतं।
रमै पातसाहं मनों रत्तिकंतं॥
तिहीं ठौर ग्रीखम्म किन्नौ प्रबेसं।
महा संकुलं बृत्त राजं सुदेसं ॥२०८॥
तहाँ तेज भाँनं न जाँनं न जाँनं।
तिहीं हेत साहं रहे तास थाँनं[5]॥
समौ एक ऐसो तहाँ रौद्र आयौ।
महा पौन परचंड औ मेघ छायौ ॥२०९॥
कहूँ ओर पतसाह खेलैं सिकारं।
करैं केलि जेती जलं बाल लारं*॥
भयौ अंधकारं महाघोर ऐनं।
गई सुद्धि सुज्झै नहीं अप्प[6] नैनं ॥२१०॥

---

१ वहू। २ मोहे। ३ आनंद। ४ पर्बीन। ५ तिहीं तेज भाँनंन जाँनं नं जातं। तिहीं हेत साहं रहे संक बातं। ६ आप।

*लार (लाल)=जो क्रीड़ा में अन्यों के पूर्व विजय प्राप्त करती हो।

फुरयौ[1] साह को सत्थ भोजत्थ तत्थं।
भयौ घोर अंधार सुझ्झै न हत्थं॥
तजी बालक्रीड़ा जलं त्यागि भग्गी।
जहीं ओर दौरी भयौ मुक्ख अग्गी॥२११॥
किहूँ ओर दासी किहूँ ओर खोजा×।
कहूँ ओर हुरमैं कहूँ ओर कोजा॥
जसो होनहारं बन्यौ आय जैसो।
करो लाख कोऊ टरै नाहिं तैसो॥२१२॥
लिखे लेख जो नाहिं मिट्टै सुकोई।
यही बात निस्चै सुनो सव्व सोई॥
सरं त्यागि चल्ली सुहुरमैं सुभीतं।
कँपै गात ताको रह्यौ व्यापि सीतं॥२१३॥
तिहीं ठौर महिमा मिले सेख आई।
महा साहसी सूर उदारताई॥
निजं धर्म साधै तजै नाहिं राचं।
कहै जो कछू[2] तो निवाहंत बाचं॥२१४॥
मिली बाल ताकौ कही दीन बाँनी।
समै[3] वाम सेखं मनों[4] आप जानी॥
डरो ना कहो आप हौ कौन कोई।
कहूँ जो उढ़ावो यहाँ बैठि मोही॥२१५॥
तवै बाजि तैं सेख भू पै जु आयौ।
कछू वस्त्र हो अंग ताको उढ़ायौ॥२१६॥

दोहरा छंद

महिमा उतरे बाजि तैं, दियौ वस्त्र तिहिँ हत्थ।

---

१ फुट्यौ। २ कहूँ। ३ उभै। ४ मनं।

+खोजा=सेवक।

सीत भीत ता ना मिटी, कही हुर्म यह गत्थ ॥२१७॥
पुच्छिय महिमा साहि तब, को तू आप वताय।
मैं घरनी पतिसाह की, रूपबिचित्रा नाय ॥२१८॥
जलक्रीड़ा हम करत सब, आयौ पौन प्रचंड।
तब डेरन को भजि चलीं, तामैं मेघ सुमंड ॥२१९॥
भयौ भयानक तिमिर बन, सबै सत्थ गय भूल।
मै इकली बन महँ यहाँ, डरति फिरति दुख मूल ॥२२०॥

छप्पय छंद

तब महिमा कर जोरि हुरम कूँ सीस नवायौ[1]।
चढ़्यौ अस्व की पिट्ठि दैव पहुँचाव सुभायौ ॥
कहै हुरम सुन सेख देह कंपत है मोरी।
छिनक बैठि यहिं ठौर सरन मैं लिन्नी (लीनी) तोरी।
कहै सेख यह बीत नहिं, तुम साहिब मैं दास तुव।
यह धरम नाहिं उलटी कहो, सरन सदा सेवक सुभुव ॥२२१॥
सेख समो पहिचानि स्वामि सेवग न बिचारौ।
काँम रूप तुम पुरुष बीर बानैत उदारौ ॥
बहुत काल अभिलाष रही जिय मैं यह भारी।
कौन समो वह होय मिलै महिमा गुनवारी ॥
सुइ करिय आज साहिब सहल, सकल मनोरथ सिद्ध हुव।
दै योग भोग संयोग यह, कौन दोस जग देहु तुव ॥२२२॥

चौपाई छंद

कहै सेख तुम बेगम सच्चिय।
ऐसी बात कहो मति कच्चिय ॥
मैं अब लों तिय जग मैं जानत।
भगनी मात सुता सम मॉनत ॥२२३॥

---

१ हुरम कहि कहि सन बोयौ।

ता महिं तुम हजरत की बाला ।
सब कै एक वहै हकताला ॥
तातैं कहा धर्म मैं हारूँ ।
यह तो कबहूँ जिय न बिचारूँ ॥२२४॥
सुनहु सेख बेगम तिय सबहीं ।
तुम हूँ धर्म्म सुन्यौ है कबही ॥
तिय तजि लाज कहत रति जाचन ।
को नहिं धर्म जो पुरुष अराचन ॥२२५॥
तन मन धन जाचे तैं दिज्जिय ।
कह कुराँन पूरन सोइ किज्जिय[1] ॥
पुरुष धर्म यह मूर न होई ।
तिय जाचत को नाटत कोई ॥२२६॥

सोरठा छंद

तब जिय सोचि बिचारि, मनहीं मन महिमा समुझि ।
साँची है यह नारि, धर्म उभै जग महँ प्रगट ॥२२७॥
तब महिमा मुसकाय, कर गहि आलिंगन दियौ ।
इक तरु कौं तर जाय, दियौ तुरंगम बंधि तब ॥२२८॥
जीनपोस तर डारि, सस्त्र खुल्लि रक्खिय निकट ।
करी सुमार सुमार, उत्कंठा तिय मिलन की ॥२२९॥

छप्पय छंद

महा मोद मन बढ़्यौ परस्पर तन मन फुल्लिव ।
मिटिव बंक मन संक निसँक ह्वै आसन भुल्लिव ॥
मानो कोक चकोर चंद लब्भव रबि लंबे ।
घन दामिनि मनु मिलिय काँम रति पति सुख फंबे ॥

---

१ दीजे, कीजे (अंत्यानुप्रास)

दुहुँ ओर सोर स्वातिक सुभो, गाढ़ो आलिंगन दियव।
नख खंड नाहिं परसे सरहिं, सकल कोक केली कियव ॥२३०॥
अंग अंग बिनअंग* रंग बड्ढिव दुहुँ ओरन।
कढिव बिरह तन ताप परस्पर बर सत मोरन॥
हाव भाव रति अंग मुदित बर्षंत अभिलाषै।
करत कटाक्ष प्रकास बैन मधुरै मुख भाषै॥
गहि अंग संग आसन दियव, कोक कला रस बिस्तरिव[1]।
आनंद द्वंद उन्माद जुत, काँम बिबस दोउन भयव ॥२३१॥
तिहिं छिन इक मृगराज आनि तत्काल सुगज्जिव।
प्रज्वलित नयन प्रचंड चँवर सिर उप्पर सज्जिव॥
बिकट दंत मुख बिकट बाहु नख बिकट सुरंज्जै।
तिहिं भय बन के जीव सबै गजराज सुभज्जै॥
आवत्त देखि तिहिं सिंह कौ, ह्वै सभीति तिय इम कहै।
बिधि कौन समै यह का भई, दैव बारि मैं बपु दहै ॥२३२॥
तब तिय कंपि सभीति उछरि महिमा गर लग्गिय।
हे प्राणेश्वर कहा भई रसगत जु उमग्गिय॥
तजहु भजहु अब वेगि, बचहु अब प्राण उबारो।
मैं अब पलटे प्राण तजौं, तुम पर तन वारौं॥
मुसकाय मीर तब यों कहै, न डरि न डरि अबला सुभुव।
तुट्टै जु आब रक्खों भुज न, कहा स्याल डर डरत तुव ॥२३३॥

छंद अर्द्धनाराच

गहे कमाँन बाँनयं, धरंत ताहिं पाँनयं।
तज्यौ न वाल आसनं, गह्यौ सरं सरासनं ॥२३४॥

---

१ बिथ्थरिव। २ प्रफुलित।

* बिनअंग=अनंग।

सु सिद्धि राग बागयं, ढप स धीर पागयं।
कह्यौ हँकारि ब्राचयं, सम्हारि स्वाँन साचयं ॥२३५॥
करी सुगुज्ज पुंजयं, उड्यौं सु क्रोध गुंजयं।
धर्‌यौ सु चौंर सीसयं, भुजा उठाय रीसयं ॥२३६॥
जथा सुक्रोध कालयं, उठ्यौ सु सिंह वालयं।
करं कमाँन लिन्नयं, कसी सतानि[1] दिन्नयं ॥२३७॥
लग्यौ सुवाण मन्थयं, लखी अकत्थ गत्थयं।
लग्यौ सुबाण पार भौ, गिर्‌यौ सु सिंह स्यार भौ ॥२३८॥

दोहरा छंद

सिंह मारि इक बाण तैं, भू मैं दिन्नौ डारि।
फिरि कमान तिहिं हथ्थ[2] तैं, धरी जु भूपर धारि ॥२३९॥
यह साहस किन्नौ प्रगट, सम स्वभाव सम बुद्धि।
गर्व हर्ष हिय नहिं कछू, प्रगटिय प्रेम प्रसिद्ध ॥२४०॥
मिलत मिलत मुसकात मृदु, कंपत हर्षंत गात।
उचकनि लचकनि मसकिबो, सीकर हूकर बात ॥२४१॥

कवित्त छंद

कंचन लता सी थहरात अंग अंग मिलि,
सीकर समूह अंग अंगनि मैं दरसै।
चुंबन कपोल नैन खंडन अधर नख,
गहत पयोधर प्रचंड पानि परसै ॥
आनँद उमंगन मैं मुसकात बाल तुत-
रात बतरात सतरात रस बरसै।
लपटनि झपटनि मसकनि अनेक अंग,
रति रंग जंग तैं अनंग रंग सरसै ॥२४२॥

---

१ तान। २ हाथ।

छप्पय छंद

मिटी पवन परचंड, मिटिव मनमथ मद भारिव।
छटेउ तिमर तिहिँ समय, प्रगट परगा(का)स सुधारिव॥
सकल सत्थ जथ तत्थ, मिले अप्पन[1] थल आइव।
साहि हुरम को सोध करिव तिहिं समय सुहाइव॥
दिन्नी जु सिक्ख तब सेख कौं, अप्प अप्प सिबरन गवय[2]।
पहुँची सु जाय पतिसाह पै, हुरम साह आदार दियव॥२४३॥

तब सु साहि करि कुच्च,[3] सकल दिल्लिय दिसि आयव।
चढ़िव सेन समूह, धूरि उड़ि अंबर छाइव॥
घुमरि घुमरि निस्साँन,[4] घोर दुंदभि घन बज्जिय।
सकल खाँन उमराव, हरष संजुत मग रज्जिय॥
कीन्हौं[5] प्रवेस निज निज घरन, साह महल दाखिल भयव।
सुख खाँन पॉन सौगंधजुत, अप्प अप्प[6] रस वस भयत्र[7]॥२४४॥

इक्क[8] समय पतिसाह, हुरम सँग सेज बिराजे।
दंपति अति रस लीन, काक की कला[9] सुसाजे॥
रमत करत परकार, इक्क[10] आसन रस[11] भीने[12]।
सरस परस्पर मुदित, उदित्त कंद्रप तन चीने॥
तिहिं समय दैव संजोग तै, इक्क आखू+ आवत भयव।
देखंत ताहिं पतिसाहि को, मदन द्वंद उत्तरि गयव॥२४५॥

दोहरा छंद

मूषक हजरति देखि कै, आसन तजि ततकाल।
लै कमाँन संधानि कै, हन्यौ तार लखि वाल॥२४६॥

---

१ आपन। २ दीनी जु सीख तब सेख कौं आय आय डेरन गयव। ३ कूँच। ४ नीसाँन। ५ किन्नौ। ६ आप आप। ७ वसि छ्यत्र। ८ एक। ९ केलि। १० एक। ११ रति। १२ भिन्ने, चिन्ने, भिन्नय, चिन्नय, अंत्यानुप्रास।

+आखू (आखु)=मूसा।

चौपाई छंद

हजरति हरषि तीर तिहिं[१] दिन्नौ।
चूहौ[२] प्राण-हीन तब किन्नौ॥
तबहीं साहि हरषि मुसकाए।
तिय कौं ऐसे बचन सुनाए॥२४७॥
कायर जाति तिया[३] हम जानी।
तातैं यह हम प्रथमहिं ठानी॥
यह करनी अद्भुत तुम देखी।
निज कर करी सु तुम अवरेखी॥२४८॥
हँसी हुरम सुनि हजरति बानी।
पुरुषन की तो अकथ[४] कहानी॥
मारैं सिंह तो न मुख भाखैं।
जाचे नाहिं प्राण वै राखैं॥२४९॥
मैं जग मैं ऐसा सुनि पाऊँ।
कहैं साहि मैं बहुत बधाऊँ॥
बकसो गुनह तो अबै बताऊँ।
तुरत साहि कै पाइ लगाऊँ॥

सोरठा छंद

ऐसा मोहिं बताय, सिंह मारि सिफत न करै।
बकसो औगुन आय, जो उन तात ज मारियौ॥ २५१॥
हुरम तबै कर जोरि, बार बार सिर नाय कै।
सुनहु गुनह[५] अब मोर, हजरति बीत्यौ आपनो॥ २५२॥

---

१ तहँ। २ चूही प्राणहीन तिहिं चीनौ। ३ तीय। ४ अकह।
५ गुनाह जुमोर।

छप्पय छंद

मृगया महँ जिहिं समय, सकल भुल्लिय[1] बन माहीं।
महा घोर तम भयौ, तहाँ[2] बरनी नहिं जाही॥
तदिन सेख संयोग, आनि हमसैं तब मिल्लिव।
नहिंन सेख तकसीर, देखि मन मोरहिं चल्लिव॥
संयोग भोग बिछुरन मिलन, लिख्यौ बिधाता ज दिन जहँ।
नहिं टरै लाख कोऊ करो सुतौ होय वह[3] त दिन तहँ॥२५३॥

दोहरा छंद

मैं सेखहिं जाँनत नहीं, सेख न जाँनत मोहिं।
होनहार संजोग जो,[4] मिटै न उतनी होहि॥ २५४॥
सुरति करत सिंह जु उठ्यौ, लख्यौ सेख सति भाय।
लै कमाँन मार्‌यौ तुरत, तज्यौ न आसन आय॥ २५५॥
सुनू स्वभाव ज सेख के, लच्छिन कहे जु आप।
मैं सभीति भइ सिंह तैं, कहे मोहिं बिन पाप॥ २५६॥

त्रोटक छंद

सुनिये पन सेख करे निज ये।
घर बैठत वाँ जल सों रजए॥
नहिं भोजन सोहि गरस्म करै।
उकरू नहिं बैठत भुंमि भरै॥२५७॥
सरणागत आवत नाहिं तजै।
पर बाँम लखे मन माहिं लजै॥
जहँ जाचत प्राण न राखत है।
नहिं झूठ अकारन[5] भाखत है॥२५८॥

---

१ भूले। २ तहाँ कछु बर्नि न जाही। ३ वहाँ। ४ तैं।
५ अकारथ।

रण मैं नहिं पिट्ठि दई कबहूँ।
लखि आरतिवंतन सों अबहूँ॥
तहँ मेटत आरति वार तिहीं।
त्रिन आसन बैठत हैं कबहीं॥२५६॥
मुख सैं उचरै न टरै कबहीं।
सब तैं मधुरे मुख बैन सही॥
द्रग लाज भरे रिझवार घनैं।
रहनी करनी कविराज भनैं॥२६०॥
महिमा महिमा नहिँ जात कही।
जस चाहक गाहक गाहक ही॥
बरबीर महारणधीर अरै।
खँग खेत गहै अरि खंड करै॥२६१॥
सुनि साहि मनै अचिरज्ज भयौ।
ततकाल जु सेख बुलाय लयौ॥
छिरकाय धरा जल सौँ जु भरे।
बहु भोजन आनि गरम्म धरे॥२६२॥
तर गेरि पटंबर अंबरयं।
करि पालथि छोरिय कंमरयं॥
बहु भाँति सिराहि सुभाय मनं।
करिये तब भोजन आय[1] अनं॥२६३॥
मिलिए सब जो कछु बाल कहे।
महिमा तिय जानि सनेह लहे[2]॥
प्रजुरे पतिसाहि सु कोप कियं।
मनु[3] ज्वाल बिसाल सुघृत्त दियं॥२६४॥
द्रग लाल बिसाल सुबंक भुवं।

---

१ आप। २ लए। ३ जनु।

रद दाबत[1] ओठ सु ओठ दुवं ॥
करि क्रोध तबै पतिसाहि कहै।
उर मैं अति क्रोध [2]प्रचंड दहै ॥२६५॥
सुनि जाँमहिं जो तकसीर परै।
तिहिं कौ न कहो अब दंड धरै॥
कर जोरि उठ्यौ महिमा तबहीं।
हम तो तकसीर भरे सबहीं ॥२६६॥
तुव गर्दन वेग कवूल करो।
है तकसीर जु सेख भरो॥
तब सेख कहै कर जोरि तबै।
करिये मन भावतु है जु अबै ॥२६७॥
तब बोलि हुरम्म कहै मुख तैं।
पहलैं तकसीर परी हम तैं॥
गरदन्न कवूल करी अबहीं।
पहलैं हम तैं तकसीर भई ॥२६८॥
समझे पतिसाह तबै मन मैं।
अबला हठ नाहिं मिटै मन[3] मैं॥
इनकौ सब बेगम लोग कहैं।
मन चाहत सो हठता जु गहैं ॥२६९॥

दोहरा छंद

हुरम बचन सुनि साह तब, मन बिचार तहँ कीन[4]।
बेगम जाति जु तीय की, इन मरवे मन दीन[5] ॥२७०॥
जाहु सेख इत[6] मति रहो, जहँ लगि मेरो राज।
जो राखै[7] ताकौ हनूँ, प्रगट सुसाज़ समाज ॥२७१॥

---

१ दब्बत। २ कोप। ३ तन। ४ किन्न। ५ दिन्न। ६ इह। ७ रक्खै।

कट्टन गरदन जोग तू, कीनौ[1] कुविध[2] खराब।
को रक्खै[3] या भूमि पर, रक्खि[4] करै को ज्वाब ॥२७२॥

छप्पय छंद

यह महि मँडल जितो, आँन मेरी सब मानैं।
खूनी रक्खै कौन, कोउ ऐसा तू जानै ॥
हम तैं बली बताय, ओट जाकी तू तक्कै।
बचै न काहू ठौर, एक बिन गए न मक्कै ॥
कर जोरि सेख इम उच्चरै, बली एक साहिब गिनूँ।
निर्बीज धरा[5] कबहूँ न है,[6] मैं हमीर स्रवनन सुनूँ[7] ॥२७३॥
तब सुसेख सिर नाय, रजा हजरति जो पाऊँ।
जौ न गिनै पतिसाह, सर्न मैं ताकी[8] जाऊँ ॥
तुमहिं न नाऊँ सीस, नहिंन फिरि दिल्लिय आऊँ।
जुद्ध जुरे नहिं टरौं, हत्थ तुम कौ जु दिखाऊँ ॥
यह कहत सेख सल्लाँम किय, तबहिं चला चलचित्त भुव।
निज धाँम आय अप अनुज सों, बिबर बिबर वातैं जु हुव ॥२७४॥

छंद पद्धरी

आए जु सेख घर तब सरोष।
जिय जान्यौ अपनो सकल दोष ॥
मिलिय[9] जु मीर गबरू सुधाय।
चलचित्त देखि तिहिं पूछि[10] जाय ॥२७५॥
किहिँ हेतु आज चितत सुभाय।
किहिँ कियव वैर सो मुहिँ[11] बताय ॥
तिहिँ मारि करूँ ततकाल टूक[12]।

---

१ किन्नौ। २ कुवदि। ३ राखै। ४ राखि। ५ भुंमि। ६ हवै। ७ गिन्यौ, सुन्यौ अंत्यानुप्रास। ८ जाकी। ९ मिल्ले। १० पुच्छि। ११ मो। १२ टुक्क।

हिय क्रोध अग्नि सोँ[1] उठत ऊक[2] ॥२७६॥
को[3] करै बैर बिन कर्म्मबीर।
मिट[4] गये अन्न जल को सु सोर॥
तिहिं[5] कौन रहै रक्खै सु कौन।
यह जानि मर्म तुम रहो मौन॥२७७॥
यह सुनत मीर गवरू सुभाय।
सो[6] पर्‌यौ धर्नि मुच्छा सु खाय॥
तदि कर्‌यौ बोध बहु बिधि सुताहिं।
नहिँ करो सोच रहो[7] निकट साहि॥२७८॥
तब कहै मीर गवरू सु ताहिं।
सब तजो देश मक्के सु जाहि॥
कैं रहो राव हम्मीर पास।
तन रहै खुसी नासै जु त्रास॥२७९॥
तब चलिव सेख तजि साहि देस।
सब[8] सुभट संग लिन्ने[9] सुबेस॥
सत पंच सैन गजराज पंच।
रथ सत्थ लिये निज नारि संच॥२८०॥
सब रखत साज निज संग लीन।
दासी[10] जु दास सुंदर नवीन॥
सजि साज बाज डेरे अनूप।
लदि ऊँट किते सँग चलिय[11] जूप॥२८१॥
चढ़ि[12] सेन सज्यौ निज संग बाँम।

---

१ यों। २ हूक हुक्क। ३ महिमा साहोवाच। ४ मिटि अन्न जहाँ जाके सनीर। ५ तव। ६ सुइ पर्‌यो धरनि मुर्छा सुखाइ। ७ रहु। ८ निज। ९ लीन्हे। १० सब दासि दास। ११ चले। १२ सजि सेख चढ्यौ।

बज्जिव निसाँन गज्जिव सु ताँम ॥
मग चलत करत मृगया अनेक ।
मिलि चलिय[1] सकल बर बीर एक[2] ॥२८२॥
जिहिं मिलै राव राजा सु जाय ।
पतिसाह बैर सुनि रहैं चाय ॥
चहुँ चक्क फिर्यौ महिमा सुधीर ।
नहिं[3] कह्यौ रहन काहू सुबीर ॥२८३॥
ह्वै[4] दीन सेख देखे सुभारि ।
बिन राव दसौं दिसि फिरिव हारि ॥
तब तक्कि[5] सेख हम्मीर राव ।
सोइ आइ सरन परसे जु पाव ॥२८४॥

दोहरा छंद

गढ़ वंका[6] वंको सुधर, वंका[6] राव हमीर ।
लखि प्रतीति मन महँ[7] भइय, हर्षे महिमा मीर ॥२८५॥
देखि जलासय बिटप बहु, उतरि सुडेरा कीन[8] ।
हय गय बंधे तरुन तर, खाँन पाँन बिधि लीन[9] ॥२८६॥
डेरा ड्यौढ़ी करि खरे, करी बिछायति बेस ।
करि[10] मिसलति कौं सलि जुरी, सब भर सरस सुदेस ॥२८७॥
मंत्री मंत्र सुपूछि[11] तब, इक चर लीन सु बोलि ।
जाहु राव के पास तुम, कहो बात सब खोलि[12] ॥२८८॥
प्रथम सलाँम कहो जु तुम, बिरत[13] कहो सु बिसेष ।
हुकम होय जो मिलन कौं, तो हजूर ह्वै सेख ॥२८९॥
इतने मैं जानी परै, पन भ्रम प्रीति प्रतीति ।

---

१ चलै । २ केक । ३ नन कह्यौ । ४ द्वै, दोउ दीन, दोय । ५ तके । ६ बंको । ७ जिय मैं । ८ किन्न । ९ लिन्न । १० करी कचहरी आप तब । ११ पुच्छि । १२ बुल्लि, खुल्लि । १३ वृत्त, वृत्तांत ।

हर्ष सोक यहिँ गति लख्यौ, तुम जानत सब रीति ॥२९०॥
तब सु दूत गय राव पहँ, करी खबरि दरबाँन ।
बोलि हजूरि सुदूत कौ, पूछत कुसल सुजाँन ॥२९१॥
सकल बात सुनि दूत मुख, हर्ष राव बहु कीन[1] ।
तबहिं उलटि पठयौ सु वह, सेख बुलाय सुलीन[2] ॥२९२॥

नाराच छंद

चल्यौ जु सेख राव पहँ बनाय साज कीनयं[3] ।
तुरंग पंच नाग एक साज साजि लीनयं[4] ॥
कमाँन दोय टंकनो सु देस मुल्लताँन की ।
कृपाँन एक[5] बेस देस पालकी सुजाँन की ॥२९३॥
लिये सु दोय बञ्त्र लाल एक[5] मुक्त मालयं ।
कही जु एक[5] दोय बाज स्वाँन दोय पालयं ॥
सवार एक आपही सबै पयाद चल्लियं ।
रहे तनक्क पौरि जाय फेरि अग्ग हल्लियं ॥२९ ॥
सुबेतहार अग्ग[6] जाय राव कौ सुनाइयं ।
हमीर राव बेगि आय[7] रावतं खँदाइयं ॥
चले लिवाय सेख कौ जहाँ जु राव बट्ठियं ।
सभा समेत राव देखि सेख कौ सु उट्ठियं ॥२९५॥
मिले उभै समाज सोँ कुसल्ल छेम पुच्छियं ।
परस्सि पानि पाव सेख हाथ[8] जोरि सुच्छियं ॥
करी जु अग्ग सेख भेंट बुल्लियौ सु बाचयं ।
सरन्नि राव राखि[9] राखि मैं सरन्नि साचयं ॥२९६॥
फिर्‌यौ सु मैं सुदीन दोय खाँन जाँति सव्वयं ।
जितेक राज रावताय छत्र जाति सव्वयं ॥

---

१ किन्न । २ लिन्न । ३ किन्नयं । ४ तुरंग पंच नाग इक्क साज सज्जि लिन्नयं । ५ इक्क । ६ अग्र । ७ आप । ८ हत्थ । ९ रक्खि रक्खि ।

दिसा दसोँ जितेक भूप और बीर बंक जे।
रहो कह्यौ सु कौन हू रहूँ तहाँ सुधीर जे[1] ॥२९७॥
हँसे हमीर राव बात सेख की सुनंतही।
कहा अलावदीन, पातसाह, सोभनंतही॥
रहो यहाँ अभै सदा हमीर राव यों कहै।
तजूँ ज तोहिं प्राण साथि और बात यों[2] कहै॥२९८॥

चौपाई छंद

राव हमीर नजरि सब रक्खिय।
वचन सेख कौ यहि विधि भक्खिय॥
तन धन गढ़ घर ए सब जावैं।
पै महिमा पतिसाह न पावैं॥२९९॥
कहै सेख प्रण समुझि सु किज्जिय[3]।
मेरी प्रथम अर्ज सुनि लिज्जिय[4]॥
दसों दिसा मैं मैं फिरि आयव।
जिते खाँन सुलताँन सु गायव॥३००॥
राजा राँन. राव जितने जग।
दीन होय देखे[5] सु अगम मग॥
बाँध तेग साहस करि कोई[6]।
तजै लोभ जीवन को सोई[7]॥३०१॥
यह जिय जानि बास मुहिं दीजे[8]।
सेख राखि[9] सरनै जस लीजे[10]॥
इतनी धरा सेष सिर होई।
कहै साहि रक्खै नहिं कोई॥३०२॥

---

१ सुतंक जे। २ त्यों। ३ कीजे। ४ लीजे। ५ दिक्खे। ६ कोइय। ७ सोइय। ८ दिज्जिय। ९ रक्खि। १० लिज्जिय।

छप्पय छंद

बार बार क्यों कहै सेख उत्कर्ष वढ़ावै।
एक[1] बार जो कही बहुरि कछु और कहावै[2] ॥
प्रथम बंस चहुवाँन टेक गहि कबहुँ न छंडै।
बहुरि राव हम्मीर हठ न छुट्टै तन खंडै ॥
थिर रहहु[3] राव इम उच्चरै न डरि न डरि अब सेख तुव ॥
उगै न सूर जो तजहुँ[4] तोहिं चलहिं[5] मेरु अरु भुम्मि ध्रुव ॥२०३॥
बकसि सेख कौ बाजि[6] साज कंचन के साजे।
मुक्त माल सिरपेंच जटित हीरा[7] छबि छाजे ॥
सकल सथ्थ सिरपाव साल दिन्नव अति[8] भारिय।
पंच लक्ख को पटौ दियौ आदर भुवकारिय[9] ॥
दिल्ली सुठौर[10] सुंदर इकै[11] तिहिं देखत[12] हिय हर्षियउ।
उच्छाह सहित उठि सेख तब आनँद मंगल बर्षियउ ॥३०४॥

दोहरा छंद

महिमा साह जु तुरतही[13] गए हवेली आप।
देखत ही सब भाँति सुख मिटी सकल तन ताप ॥
महिमानो पठई नृपति, सबै सथ्थ के हेत।
खाँन पाँन लायक जिते, मधु आमिष[14] सु समेत ॥३०५॥
ज दिन सेख दिल्ली तजी, दूत सथ्थ दिय ताहिं।
को रक्खै कित[15] जात यह, लखो जु तुम हूँ वाहि ॥३०६॥
राख्यौ[16] राव हमीर तब, महिमा साहु जु पास।
कहै राव सों दूत तव, मत रक्खो तुम[17] पास ॥३०७॥

---

१ इक्क। २ कढावै। ३ होहु। ४ तजों। ५ चलैं। ६ वाच। ७ हीरन। ८ असि। ९ वहुधारिय। १० जु। ११ यकै। १२ पिक्खत। १३ तुरत तव। १४ अमिषहा। १५ कत जाइ इह। १६ रक्खिउ। १७ निज वास।

अलादीन सू[1] औलिया, फिरत चहूँ दिसि आनि।
निबल सबल के बाद सों, किन सुख पायौ जानि ॥३०८॥

मुक्तादाम[2] छंद

कहै तब दूत सुनो नृप बात।
बड़ो तुव बंस प्रताप सुहात[3] ॥
तजो[4] रतनागर को सर हेत।
रतन्न अमूल्य[5] तजो रज हेत ॥३०९॥
कहो गुन कौन रखे इहि[6] सेख।
जरत्त जु बाल गहो[7] सुबिसेष ॥
अजाँन असी जु करै नहिं राव।
सुनो[8] तुम नीति जु राज स्वभाव ॥३१०॥
तजो अब इक्क[9] कुटुंब बचाय।
तजो गृह इक्क सुग्राम सहाय॥
तजो पुर इक्क सुदेस बचाय।
तजो सब आतम हेत सुभाय ॥३११॥
महा यह नीच अधम्मिय[10] सेख।
टर्यौ नहिं स्वामि तिया गुन देख ॥
बढ़ै पतिसाह[11] दिलीपति[12] बैर।
लख्यौ नहिं आँनन प्रात सुफेर ॥३१२॥
प्रलै जिहिं रोष तजै धर देह।
हमीर सु राव सुनो रस[13] भेव ॥
बढ़ै निति नेह तुमै पतिसाह।
अमीरस मैं बिष घोरत काह ॥३१३॥

---

१ से। २ मोतीदाम। ३ सुतात। ४ तजो सरनागत। ५ अमोल। ६ इह। ७ गही। ८ सुनी। ९ एक। १० अधर्मिय। ११ पुनि साह। १२ दिलीसहिं। १३ इह।

परो[1] फिर आप नहीं दुख आय।
तजो यह जानि प्रथम्म सुभाय॥
जथा वह रावन जित्ति[2] त्रिलोक[3]।
सुरन्नर नाग रहैं तिहिं ओक[4]॥३१४॥
कर्‌यौ तिन बैर जबै रघुनाथ।
मिट्यौ गढ़ लंक सुबंकम पाथ[5]॥
कहो सर[6] कोन करैं पतिसाह।
करै तब जंग बचो नहिं ताहि[7]॥३१५॥

छप्पय छंद

कह हमीर सुनि दूत बचन निज असत भाखौं।
मो बिन[8] और न कोय सेख को सरनै राखौं॥
गहूँ खाग[9] सनमुक्ख दुहूँ अति गर्व सुद्ध द्रढ़।
लहै मुक्ति मग सत्य किधौं रणथंभ महा गढ़॥
कहियो निसंक पतिसाह सों सेख सरनि हम्मीर किय।
सामाँन युद्ध जेते कछू सो अनंत दुग्गह जु लिय॥३१६॥

दातार छंद

सुनि हमीर के बचन, दूत दिल्लिय दिस आयव।
करि सलाँम कर जोरि, साह कौं[10] सीस नमायव॥
पूरब दच्छिन देस और पच्छिम दिसि आयव।
सबै सेख फिरि थक्कि, कहूँ काहू न रखायव॥
तब सेख आय रणथंभ गढ़, दीन बचन इम भक्खियौ[11]।
सुनि हमीर करुणा सहित, सेख बचन दै रक्खियौ[12]॥३१७॥

महरम खाँ वजीरोवाच

समद पार गय सेख, बार हजरत वह नाहीं।

---

१ परै। २ जीति। ३ तिलोक। ४ वोक। ५ माथ। ६ सरि। ७ आहि। ८ मुझ बिन। ९ तेग। १० सों। ११ भाखियौ। १२ राखियौ।

राव शेख क्यों रखै, रहत हजरत घर माहीं ॥
फिर न कहो यह वचन, वृथा[1] कबहूँ[2] अनजानै ।
दूत साह के बचन, सुने सत्कार सुमानै ॥
महरम्म खाँन इम उच्चरै, खबरदार नहिं बेखबरि ।
कहिये जु बात निज द्रगन लखि, असी बात नहिं कहो फिरि ॥३१८॥

दोहरा छंद

महरम खाँ उज्जीर सौं, कहै बैन पतिसाहि ।
इक फरमाँन हमीर कौं, लिखि भेजहु अब ताहिं ॥३१९॥

छप्पय छंद

लिखि हजरति फरमाँन उलटि एलची पठाए ।
हठ मति करो हमीर चौर मति रखो पराए ॥
हम दिल्ली के ईस राव तुमहूँ जु कहावो ।
बढ़ै अलसि जिय माहिं[3] बैर मैं कहा जु पावो ॥
माल मुलक चाहो जितौ, कहै साहि बहु लिज्जिये[4] ।
फरमाँन बाँचि[5] जिय राव तुम, चोर हमारो दिज्जिये[6] ॥३२०॥

दोहरा छंद

बाँचि[3] राव फुरमाँन तब, दियउ सेस तब अंग ।
वचन दिये मैं सेख कौं, करौं शाह सौं जंग ॥३२१॥
दियउ[7] उलटि फरमाँन तब, राव साहि कौ ज्वाब ।
रक्ख्यौ महिमा साहि मैं, तजूँ न तिहिं मैं आब ॥३२२॥
यह फरमाँन जु बाँचि[3] कै, करिव साह तब क्रोध ।
खिज्यौ देखि पतिसाह कौ, कियौ उजीर सुबोध ॥३२३॥

छप्पय छंद

कित्तौ गढ़ रणथंभ रार्व जिस पहँ गर्बाए ।
दसूँ देस बसि किये जीति करि पाँव लगाए ॥

---

१ व्यर्थ। २ कबहुँन। ३ माँझ। ४ लीजिए। ५ बंचि। ६ दीजिए। ७ दियौ।

ईस कहौ अब कोन जुद्ध जो हम सों मंडै।
देत दुनी तैं कढ्ढि गर्व तातैं क्यों मंडै[1] ॥
साहिब्ब बचन इम उच्चरै अली औलिया पीर गनि।
महिमा साह जु रक्खि तुव अजहूँ समुझि हमीर मनि[2] ॥३२४॥

दोहरा छंद

दूजा हजरति का लिख्या, बाँचि राव फरमाँन।
बार बार क्यों लिखत है, तजूँ न हठ की बाँन ॥३२५॥
पच्छिम सूरज उग्गवै, उलटि गंग बह नीर।
कहो दूत पतिसाह सों, तौ हठ न तजै हमीर ॥३२६॥

छप्पय छंद

दियौ पद्म ऋषिराज करौं जब लग मैं सोइय।
जो गढ़ आयौ निमत साह रक्खै नहिं कोइय ॥
अनहोनी नहिं होय होय होनी हैं सोइय।
रंजिक[3] मोति हरि हत्थ डर सु मानव क्यों कोइय ॥
नहिं तजूँ सेख को प्रण करिव सरन धरम छत्रिय तनों।
नन है विचित्र महिमा तनो सत्य बचन मुख तैं भनों ॥३२७॥
चले दूत मुरझाय, दिलिय दिसि कियौ पयानो।
गढ़ रणथँभ हम्मीर साह कैसै कम जानो ॥
हयदल पयदल सेन सूर वर बीर सवायौ।
हठी राव चहुवाँन बंस यहि हठ चलि आयौ ॥
यहि बिधि सु तुमहूँ धर लखै[4] हरे[5] सकल तुम वीर बर।
अब पतिसाह जु एक भुव[6] कै तुम कै जु हमीर बर ॥३२८॥
सुनत दूत कै बचन साहि जब मन मुसकाए।
कितो राज हम्मीर करै हठ मोहिं बुलाए ॥

---

१ तंडै। २ तुव। ३ रिजक। ४ लिखै। ५ हर्‌यौ। ६ भव।

कितेक गढ़ इक्क ठौर किते उमराव महाबल।
किते बाजि गजराज किते भट बंक महाबल[1] ॥
तुम कहो सकल समझाय मुहिं किहिं हेतु इतै[2] गर्वहिं बढ़ै।
हम्मीर राव चहुवाँन कै कितो[3] नृपनि[4] दल सँग चढ़ै ॥३२९॥
हजरति राव हमीर बार बहुतैं समझायव।
सुनि महिमा को नाँम रोष करि राव रिसायव ॥
करौं जुद्ध तिर सुद्ध साह दल खंडि बिहंडौं।
धरौं सीस हर कंठ सुजस तिहिं लोकहिं मंडौं ॥
हम्मीर राव इम उच्चरै गही टेक[5] छाँड़ौं नहीं।
तन जाहु रहै जिय सोच[6] नहिं लाज धरम खंडौं नहीं ॥३३०॥

चौपाई छंद

कहे साहि सुनु दूत सु बैनं।
कहो[7] राव को पन भ्रम एनं ॥
कितोक दल बल सूर समाजं।
कितेक गढ़ सामाँ धर राजं ॥ ३३१ ॥
रहनी करनी प्रजा प्रतापं।
बानी[8] बिरद[9] दाँन द्रव आपं ॥
नीति अनीति ग्राम गढ़ कैसा।
सहर[10] सरोबर बाट जु जैसा ॥ ३३२ ॥
सत्तरि सहस तुरंगम जानो।
दोय लक्ख पयदल भरमानो ॥
सतपंच गजराज अमानो[11]।
होहि कीच मद बहत सुदानो[12] ॥ ३३३ ॥

---

१ बड़ा दल। २ येत। ३ कितका। ४ दसम। ५ तेग। ६ लोभ। ७ कहै। ८ बाना। ९ विर्दं। १० सहस रोष बाग जु जैसा। ११ मानै। १२ दानै।

रनथंभौर ग्वालियर बंका।
नरवल[1] औ चित्तौड़ सु तंका॥
रहै जखोरा गढ़ कै जेता।
अनगिन[2] वस्तु न जानत तेता॥ ३३४॥
तुरी सहस इकतीस सु सज्जै।
अरु गजराज असी मद गज्जै॥
सूर बीर दस सहस अमानो।
इते राव रणधीर के जानो॥ ३३५॥

दोहरा छंद

मेटि मसीत (द) जु सकल तहँ,[3] कीके[4] मंदिर देस।
बाँग निबाज न होय जहँ, स्रवन कथा हरि बेस॥३३६॥
नहिं कुराँन कलमा नहीं, मुसलमाँन नहिं पीर।
च्यारि बरण आस्रम सुखी, देस हमीर सु धीर॥३३७॥
अपनै[5] अपनै धर्म्म मैं, रहैं सबै नर नारि।
राजनीति पन तेजजुत, करैं राव[6] सुखकारि॥३३८॥
कर काहू कै होय नहि, दुखी न कोऊ दीन।
आस्रम किते नबीन[7] है, ऊँचे मंदिर बीन[8]॥३३९॥

पद्धरी छंद

रणथंभ दुग्ग बहु बिकट[9] जानि।
तिहिं दरा च्यारि मग सुगम मानि॥
घाटी सु च्यारि अस्सी सु और।
है गै न चलैं अति कठिन ठौर॥३४०॥

---

१ नरवल मनु (मन) चीतोड़ सुतंका। २ अगणत। ३ तिहं। ४ किन्नै। ५ अप्पन। ६ राज। ७ अनूप। ८ दीस, ईस, अंत्यानुप्रास। ९ दुर्ग बहु विधि सु।

सरवर सु पंच जल्ल अगम सोय।
बहु रंग कमल फुल्ले सु जोय॥
चहुँ ओर नीर को नहिंन छेह।
परबत अनूप जल झरै एह॥३४१॥
सो इहै अगम पहुँचै न खग्ग।
गढ़ चढ़ै कवन जहँ इक[1] मग्ग॥
अरु भरे दोय भंडार अन्न।
दस लक्ख कोरि दस सहस मन्न॥३४२॥
दस लक्ख सूत सन्न धरे संचि।
द्विप[2] दोय लक्ख धरि धातु खंचि॥
घृत सहस बीस मन भरे हौद।
दोय लक्ख पैद चहुँ गढ़न कौद+॥३४३॥
बिन तोल नोन[3] पर्वत सु तच्छ।
दस सहस अमल आफू* सुलच्छ॥
मृगमद कपूर केसरि सुगंध।
भरि रहे भौन सौंधे सुबंध॥३४४॥
नहिँ तोल तेल लोहा प्रमाँन।
बारुद्ध सुद्ध नव लच्छ जाँन॥
अरु पतो जानि सीसो सु सुद्ध।
नव लक्ख धर्यौ संचय सुमुद्ध॥३४५॥
अरु इतौ राव कै नित्त दाँन।
पँच तोलि पंच मुहरैं सुमानि॥
दस दोय धेनु तरुणी सु वच्छ।

---

१ एक। २ द्वप। ३ लवण।

+ कौद (कोद)—ओर। * आफू=अफीम।

सोबरन[1] स्त्रिग स्त्रिगार सुच्छ ॥३४६॥
यह अधिक जानि दीजे[2] सु बिप्र।
उग्गंत सूर दिज्जे[3] सु छिप्र॥
जीमंत बिप्र सब राजद्वार।
लंगर सु अनगिनित वटत सार ॥३४७॥
बहु अंध पंगु अरु बधिर कोय।
सो करैं[4] भोज नृप कै सजोय॥
दस दोय अन्न मन परै और।
खग सकल चुगैं तहँ ठौर ठौर ॥३४८॥
गणनाथ आदि सब लसैं देव।
नृप आप[5] करत करि नमत सेव॥
सिव बसैं नंदि भैरव समेत।
भव भवा सवै परिकर समेत[6] ॥३४९॥
द्रढ़ महा वंक गन्नेस गड्ढ।
विन मग्ग सकै पंछी न चड्ढ॥
वढ़ तोप सतरि गढ़ पै अचल्ल।
तब छुटत सोर पर्वत[7] सुहल्ल ॥३५०॥
छुट्टंत गर्भ सुकंत नीर[8]।
मन वज्रपात सुकत समीर॥
आसा सु नाँम राणी सु एक।
पतिव्रत्त धर्म्म देबी सु टेक ॥३५१॥
रणथंभ नाथ सुत इक्क[9] पूर।
चंड तेज मनूँ ऊगंत सूर[10]॥

---

१ सुवरन्न। २ दिज्जे। ३ दीजे। ४ सुइ करि भोजन। ५ अप्प। ६ सहेत। ७ पव्वय। ८ सूकंत नीर। ९ एक। १० चढ़ि तेज मनहुँ उग्गंत सूर।

रतनेस नाँम जस है बिख्यात।
चित्तोड़ दुग्ग पालै सु तात ॥३५२॥
सँग रहै सुभट थट विकट संग[1]।
को करै तिनहिं तैं रणहिं रंग॥
तप तेज राव बृषभाँन जेम।
पर दुख कट्टन बिक्रम सु तेम ॥३५३॥
देखंत[2] रूप मनु काँमदेव।
सुइ काछ वाछ निकलंक भेव॥
अरु खेत जुरे नहिं देत पिट्ठि।
अरि लखत देखि नहिं परत[3] दिट्ठि ॥३५४॥
वहु बाग चहूँ दिसि सघन हेरि।
गंभीर गह्वर उपवन सु भेरि॥
बहु अंब[4] बृछ फल झुकत भार।
दाड़िम समूह निंबू अपार ॥३५५॥
वहु सेवराज जामुन समूह।
नारंग रंग महुवा समूह॥
खिरनी सकेलि नारेल[5] बृंद।
खीरा कि चिरूँजी मधुर कंद[6] ॥३५६॥
कटहल कदंब बड़हल अनेक।
महुवा अनंत कद्लि बिसेक(ष)[7] ॥
तहँ मोलसिरी सोहैँ गँभीर।
माघी सकेत सोहंत धीर[8] ॥३५७॥
फुलवारि गुंज अति भ्रमर होत[9]।

---

१ विकट थट्ट रह सुभट संग। २ पिक्खंत। ३ परम। ४ आम्र। ५ नरियल्ल। ६ कंज। ७ ऊभरि अनंत धोटा सु एक। ८ मधि किते सरपूँ (सरूं) सोहंत कीर। ९ फुलवारि भौंर गुंजार होत।

प्रफुल्लित[1] गुलाब चंपा उदोत ॥
कहुँ[2] रहे केतिकी बृंद फुल्लि ।
अहि भ्रमर गंध सहि रहे भुल्लि ॥३५८॥
कहुँ रहे केवरा जुह्री जाय ।
संदुप्प[3] और संभो सु आय[4] ॥
आचीन नरगिस औ असोक[5] ।
पाटल[6] सचमोलिय बोलि कोक[7] ॥३५९॥
एला लवंग अंगूर वेलि ।
माधुवन लता माधुरी केलि ॥
तरु ताल तमाल रु ताल और ।
ता मध्य कमल अरु कुमुद भौंर ॥३६०॥
चहुँ ओर सघन पर्वत सुगंध ।
जलजंत्र छुटै उक्चे सबंध ॥
पिक मोर हंस चकवा विहंग ।
सुक चाय(त)क कोकिल रसत संग ॥३६१॥
चहुँ ओर बाग बारी अनूप ।
तिहि मध्य दुर्ग रणथंभ भूप[8] ॥३६२॥

यह दूत के बचन सुनि दरबार कियौ ।[9]

छप्पय छंद

क्या हमीर मगरूर पलक मैं पाय लगाऊँ ।
खूनी महिमा साह उसे गहि दिल्लिय लाऊँ ॥

---

१ फुल्लित । २ बहु । ३ संदूप । ४ सब्बो सु आम । ५ आचीन नगरसा (नरगसा) औ असोक । ६ पाडल । ७ सतवर्ग और श्रीखंड कुंद, किंसुक सुमालती सेवतिहिं मंद । मधुबन बसंत सिंगार हार, मोतिया मदनसर फुल्ले—र । ८ मध्य दुग्ग दुग्गं सुभूप । ९ दूत के बचन सुने तब पातसाह ने दर्बार कर्‌यौ ।

जाति राव हम्मीर तोरि गढ़ धूरि मिलाऊँ।
इती जो न अब करूँ[1] तौ न पतसाह[2] कहाऊँ॥
केतोक राज[3] रणथंभ को इतो कियो अभिमाँन तिहिं।
कोपि[4] साह भेजे जबै दसों देस फर्मान जिहिं॥३६३॥
सुने दूत के बचन साह जिय संका आइय।
चढ़ौ कोपि बिन समुझि वहाँ कैसी बनि जाइय॥
हार[5] जीति रब हाथि[6] आप संमत जग होई।
तातैं मंत्री मित्र मंत्र[7] द्रढ़ किज्जिय[8] सोई॥
यह जानि साह दीवाँन किय खाँन बहत्तरि इक्क[9] हुव।
यह हठ हमीर को सुन्यौ तब रक्खे सेख सरन्न भुव॥३६४॥
आँम खास उमराब सबै पतिसाह बुलाए।
राजा राणा राव खाँन सुलताँन सु आए॥
हठ हमीर मुझि करिव सेख सरनै निज रक्ख्यौ।
दियौ दूत कौ उत्र व बचन बहु अनबन भक्खौ॥
सब तंत मंत जानो सु तुम देस काल बुधि इष्ट धुअ।
जिहिं जाहु[10] जाहु जस बुद्धि हे कहो[11] निन्ति[12] उत्तम सु भुव॥३६५॥
कहैं सकल उमराव ईस तुम सम नहिं कोई।
तेज प्रतापऽरु बुद्धि और दूजो नहिं कोई[13]॥
फिर फिर जो फरमाँन राव कौ कहा जु लिक्खिय।
जो उपजै यहि बार सोइ प्रभु आपनु अक्खिय[14]॥
चढ़िए सिकार गीदड़ तणी तऊ सिंह के बाँधि[15] सर।

---

१ हरौं। २ मैं साह। ३ राव। ४ कुप्पि साह पठए जबै देस देस फुरमाँन जिहिं। ५ हारजित्ति। ६ हत्थ। ७ पूँछि। ८ कीजे। ९ एक। १० जाहि जाहि। ११ कहा। १२ नीति। १३ साहि तुम जानत साई (नहिं होई)। १४ करिय प्रभु अप्पन अक्खिय, लिखिए, अखिए अंत्यानुप्रास। १५ बधि।

फिरि लरो मरो[१] संदेह नहिं तंत मंत यह ही सुबर ॥३६६॥

महरम खाँ उज्जीर साह सौं ऐसैं भाषै[२]।
चहुवाँनन की बात सबै अगली मुख भाषै[३]॥
पहले हसन हुसैंन सयद[४] चहुवाँन सुपेले[५]।
सात वेर प्रथिराज गहे गवरी गहि मेले[६]॥
बीसल दे अरु पित्थ ये जड पीर करे अजमेर हनि[७]।
महरम खान् इम उच्चरै असो वस चहुवाँन गनि[८]॥ ३६७॥

गीदर सिंह सिकार, साह[९] एकौ मति जानो।
रणतभँवर दिस भला[१०], आप मति करो पयानो॥
वहाँ राव हम्मीर, और रणधीर अमानो।
अरु सामंत अनेक, अधिक तैं अधिक वखानों॥
बहु दुग्ग[११] वक रणथंभ गढ़[१२], यह बिचारि जिय लिज्जिए।
तुम अलावदी पीर अति, आप मुहिम्म न किज्जिए॥३६८॥

दोहरा छंद

बहु दुग्ग वक रणथंभ वड़, तुम अलावदी पीर।
दुहूँ करामाति सम गनो, आप और हम्मीर॥३६९॥

छप्पय छंद

कालवूत को[१३] सेख, एक हजरति बनवावो[१४]।
ताहि मारि तजि रोष, कहा जिय क्रोध बढ़ावो॥
लगै प्राण धन दोउ, तबै बाजी कोउ पावै।

---

१ मिलो। २ भक्खै। ३ चहुवाँनन की वत्त सब्व अग्गलि मुख अक्खै। ४ सैद। ५ पिल्लिय। ६ साह गोरी गहि मिल्लिय। ७ बीसल दे अरु पित्थ वड़ पीर करिय अजमेर हनि। ८ पन। ९ सोइ यह इक्क न जानो। १० भुल्लि। ११ दुर्ग। १२ वड़। १३ को। १४ बनवायौ, बढ़ायौ अंत्यानुप्रास।

तजे खेत जस[1] जाय, बहुरि कछु हाथि न आवै ॥
खूनी सरन हमीर कै, रह्यौ दान जानै दोऊ।
किज्जे मुहिम्म नहिं रात्र पै, या मैं तो सुख है सोऊ ॥३७०॥
मिस्र देस खंधार, खरे[2] गज्जिनि[3] दल आये।
अरु काब्लि खुरसाँन, कोपि पतिसाह बुलाये ॥
रूम स्याँम कसमीर, और मुलताँन सु सज्जे।
ईराँ तूराँ कटक, बलक आरब धर गज्जे[4] ॥
सब[5] देस रुहंग फिरंग कै, भवखड़ कै सज्जे सुबल।
अल्लावदीन पतिसाह कै, चढ़े संग टिड्डी सु दल ॥३७१॥
चढ़े हिंद कै देस, प्रथम सोरठ गिरनारी।
दच्छण[6] पूरब देस, लए दल बद्दल[7] भारी।
अरु पहार कै भूप, और पच्छिम कै जानो।
दसौं दिसा कै बीर, कहा कोउ नाँम बखानो ॥
ग्यारा सै अठतीस[8] ये, चैत्र मास द्वितिया प्रगट।
चढ्ढे सुसाह अल्लावदी, कर हमीर पर कटक भट ॥३७२॥

भुजंगप्रयात छंद

चढ़े साहि कोपे[9] सु बज्जे निसाँनं।
चढ़े मीर गंभीर सथ्थ[10] सुजाँनं ॥
उड़ी रेणु आकास सुज्झै[11] न भाँनं।
धरा मेरु डुल्लै सु भुल्ले दिसाँनं ।३७३॥
सहै सेस भारं न[12] पारं न पावै।
डगै कौल दिग्गज्ज[13] अग्गै सुधावै ॥

---

१ सब। २ खड़े। ३ गजनी, गज्जनि। ४ ईरान त्वैर औ बलख ढठा (ठठ) भष्पर से गज्जे। ५ सब देस रुहेलरु फिरँग रूम झगड़ा कै सज्जे सुबल। ६ दक्खिन। ७ बल अति। ८ अठिसिये। ९ कोपं। १० सत्थै। ११ सूझै न नैनं। १२ सम्हारं न पावै। १३ दिग्गं सु अग्गै।

मनो छाड़ि[1] बेला समुद्दं उमंडे
किये[2] है दलं पयदल रथ्थ तंडे ॥३७४॥
चढ़े सत्त लक्खं सु हिंदू सयन्नं।
सबै बीस लक्खं मलेच्छं[3] अयन्नं ॥
तहाँ डाक[4] एकं सहस्सं दुपंचं ।
चले वेलदारं लखं च्यारि संचं ॥३७५॥
चले एक[5] लक्खं सु अग्गं[6] सु सालं ।
अलीखाँन हम्मत्ति दाऊ हरोलं ॥
चले वाणियाँ संग व्यापार भारी।
सु तो दोय लक्ख गिणै संग सारी ॥३७६॥
चली लक्ख च्यार सु सग भिठारो ।
पकावै सुनाँन सबै काँमवारी ॥
खर[7] गोखर यों चले दोय लक्खं ।
फिरैं च्यारि लक्ख गसती[8] सु रक्खं ॥३७७॥
दुआ गीर इक्कं[9] सु लक्ख सु चल्ले ।
सु ता लंगरं सो सदा खाँन मिल्ले ।।
अरब्बी लखं दोइ चल्ले सु संगं ।
रहे तोपखाने सदा जंग जंगं ॥३७८॥
भरे ऊँट बारूद डेरा सुभारी ।
सु तो तीन लक्खं सजे संग सारी ॥
चले सहस पंचं मतंगं सु गज्जं ।
ममो पावसं मेघमाला सु रज्जं ॥३७९॥
लसैं वैरखं सो मनों विज्ज[10] भारी ।

---

१ छंडि । २ कियं, किते । ३ सुमिच्छं । ४ तहाँ पै कड़ाकं । ५ इक ।
६ अग्रं । ७ गोखरं गोरसंगी । ८ गसती । ९ एकं । १० बीज ।

बरै दाँन वर्षा मनो भुम्मि[1] कारी ॥
लसै उज्ज्वलं दंत बग पंक्ति मानो ।
इती साह की सेन सज्जी सुजानो ॥३८०॥
गर्जंत निसाँनं सु सज्जंत भानो ।
मनूँ पावसं मेघ गज्जैं सु मानो[2] ॥
सबै सेन सज्जी चढ्यौ साहि कोपं ।
सबै पंच[3] चालीस लक्खं सु ओपं ॥३८१॥
तहाँ तीस[4] हज्जार निस्साँन[5] बज्जैं ।
सु तो घोर सोरं सुने मेघ लज्जैं ॥
सताईस लक्खं महावीर बंके ।
टरै नाहिँ जंगं भए ताँम हंके ॥३८२॥
परै[6] जोजनं अट्ठ[7] औ दोय फौजं ।
कटे बंक बन्नं हटे नाहिं रोजं ॥
चढ़ं उब्बटं बाट थट्टे[8] सु चल्ले ।
मनो सायर[9] छंडि[10] बेला उगल्ले ॥३८३॥
जले सुक्कियं[11] नीर नाना सुथाँनं ।
बहैं औघट घाट टुट्टंत[12] माँनं ॥
कियौ कूच कूचं[13] चले मीर धीरं ।
परयौ जोर हम्मीर कै देस तीरं ॥३८४॥
भजे भुम्मियाँ भुम्मि चल्लं अपारं ।
गए पब्बतं[14] बंक मैवास * भारं ॥

---

१ भूमि । २ भानो, जानो । ३ पाँच । ४ तीन । ५ नीसाँन । ६ परी । ७ आठ । ८ थाटे । ९ सायरं । १० छाँडि । ११ सोखियं । १२ टूटंत । १३ कुच कुचं । १४ पव्वतं, पव्वयं ।

*मैवास (मेवासा)=किला ।

सबै राव हम्मीर कै देस माहीं।
भए बीर संधीर जुद्धं समाहीं ॥३८५॥
तिहाँ[1]नीचि मलहारणी इक्क[2] गड्ढं।
लरे राव कै रावतं जोर दड्ढं ॥
दिना तीन लौं सो कियौ जुद्ध भारी।
फते[3]पातसा की भई बैनकारी[4] ॥३८६॥
चले अग्ग[5] साहं सु सेना हँकारी।
सुनी राव हम्मीर कुप्पे[6] सु भारी ॥
किये रक्त नैनं भृकुटी[7] करूरं।
लख्यौ रावतं जोर उट्ठे जरूरं ॥३८७॥
परी पक्खरं बाजि राजं सु सज्जे[8]।
बजे नद्द निस्साँन[9] आकास लज्जे[10]॥
तबै राव हम्मीर कौ सीस नाए।
बिना आयुसं साह पै बीर धाए॥३८८॥
जुरे आय जुद्धं न दीजौ बनासं।
चढ़े लक्ख चालीस औ पाँच तासं ॥
इतै राव हम्मीर कै पंच[11] सूरं।
अभयसिंह पम्मार रट्ठोर भूरं ॥३८९॥
हरीसिंह बग्घेल कूरम्म भीरं।
चहूवाँन सद्दूल[12] अजमत्त सीमं ॥
त्रिभागै करी सेन बागैं उठाई।
मिले वीर धीरं अमोरं हटाई ॥३९०॥

---

१ तहीं बिच्चि। २ एक। ३ भते। ४ बनकारी (बन्नकारी)। ५ अग्र। ६ कोपे। ७ भकुट्टी। ८ साजे। ९ नीसाँन। १० लाजे। ११ पाँच। १२ सार्दूल।

दोहरा छंद

पंच[1] सूर हम्मीर के, बीस सहस असवार[2]।
उत सब दल पतिसाह को, बज्यौ परस्पर सार ॥३६१॥
नदी वना सज उप्परै, रत्ति[3] बसिय पतिसाह।
प्रात कुच्च[4] नहिं करि सके, आय जुटे[5] नरनाह ॥३६२॥

पद्धरी छंद

चढ़ि चले[6] साह हरवल सभीर।
तिहिं जुटे राव कूरम सबीर[7] ॥
बग्घेल हरीसिंह अनिय बंधि।
चंदे(दो)ल पयादे भिरिव सधि ॥३९३॥
बिच गोल साह को जितो सुद्ध।
त्रिन सूर राव कै करि[8] न जुद्ध ॥
यहि भाँति पंच रावत अभंग।
पतिसाह सेन सौं जुटे जंग ॥ ३९४॥
कम्माँन स्रवन लगि करि कसीस।
मनु प्रगट पथ्थ भारथ्थ सीस ॥
सर बरसत पावस मनो नीर।
बहु बेधि कवच धर परत धीर ॥३९५॥
लगि सेल अंग नहिं पार होत।
ससि कारि[9] घटा मैं करि उदोत ॥
किरवाँन बहैं करि करिव क्रोध।
धर परत सीस धर उठत[10] जोध ॥३९६॥

---

१ पाँच। २ अस्वार। ३ राति बसे। ४ कूँच। ५ जुटिय, जुटिग। ६ चलिय। ७ तहँ जुटिउ (जुटिग, राव कूरंम वीर। ८ करे। ९ कोरि। १० उठित, पुठत।

लगि होत कटारिय अंग पार।
प्रासाद उच्च कै खुले द्वार॥
बहु खंजर पंजर करत पार[1]।
ऊँची जु उठी सु तो रुहिर[2] धार॥३९७॥
मनु पब्बत तैं, गेरू पनार।
बहि[3] चली[4] अंग तैं सोन[5] धार॥
बहु घायल घुम्मत बहुत घाव।
मनु केसिव[6] किंसुक तरु सुहाव॥३९८॥
चल परी साह दल मैं अपार।
हा हंत सद्द[7] भौ दल मँझार॥६९९॥

दोहरा छंद

भगिय[8] सेन पतिसाह की, लुटी जु रिद्धि अपार।
तब मरहम खाँ साह सौं, अर्ज करी[9] तिहिं बार॥४००॥
हजरति देस हमार को, निपट अटपटो जानि।
भिल्ल कौल तस्कर सबै, और किरात सुमानि॥४०१॥
सजग रहा निसि द्योस सब, गाफलि रहो न सूर।
हनिय सेन सब अप्पनिय[10], तीस[11] हजार सपूर॥४०२॥
घायल कौ लेखो नहीं, हथ्थिय[12] परे सु बीस।
परे बाजि सब ड्योढ़[13] सत, सुनि जिय अचरिज दीस॥४०३॥
परे राव कै वीर दस, घायल पंच पचीस।
अभय[14] सिंह पम्मार कैं, भयौ घाव दस सीस॥४०४॥
जाय जुहारे राव कौ, कही चमू की बात।
तब हमीर सब तैं कही, बाहर लरो न तात॥४०५॥

१ फार। २ रुधिर। ३ बहु। ४ चलिय। ५ रुधिर। ६ के सुव। ७ सब्द। ८ भगी। ९ करी अरज। १० आपनी। ११ तीन। १२ हाथी। १३ ड्योढ़ सौ। १४ अभय साहि पम्मार इक।

छप्पय छंद

तब सु साह करि कुच्च[1], चले[2] रणथंभहिं आए।
सकल सु संकित हियैं[3], मीर उमराव सुभाए।
जल थल पाधरि सैन ऐन[4] चहुँ ओर सु दिक्खिव।
चढ़ि अगार इक उच्च[5] राव बहु भाँति न लक्खिव॥
चहुवाँन राव हड़ हड़[6] हँस्यौ[7] हेरि सैन इम उच्चर्‌यौ[8]।
पतसाह किधौं सोहा जुगर मानो एक टाँडो पर्‌यौ[9] ॥४०६॥

दोहरा छंद

फिरि पतिसाह हमीर कौ, लिखि पठए[10] फरमाँन।
अजहूँ[11] हिंदू समुझ तुव, मिलि तजि सब अभिमाँन॥ ०७॥

छप्पय छंद

मैं मक्के[12] को पीर दिली पतिसाह कहाऊँ।
हिंदू तुरक दुराह[13] सबै इक सार चलाऊँ॥
बीर च्यारि अरु पीर रहैं मुझ पर[14] चौरासी।
महिमा साहि न रक्खि राव मति करै जु हाँसी।[15]
तुम समुझि सोचि[16] जिय अप्पनै[17] कहा तोहिं फल ऊपजै।
परचँड लाय उठठे जु सिर इक्क[18] सेख कौ नहिं तजै ॥४०८॥
फिर हमीर फरमाँन साहि कौं उलटि पठायौ।
हजरति छत्री धर्म्म सुन्यौ नहिं स्रवनन गायौ॥
तुम मक्के कै पीर सूर सुरलोक कहाऊँ।
तुम सरभर नहिं हसम साहि पल मैं[19] जु नसाऊँ॥

---

१ कूँच। २ दुग्ग। ३ हीय। ४ एन। ५ ऊँच। ६ हर,हर। ७ हँसिव। ८ उच्चरिव। ९ परिव। १० भेजिय। ११ अबहूँ। १२ मक्का का। १३ दाउ राह। १४ पै। १५ महिमा साहि हमीर राखि मति करै जु हाँसी। १६ देखि। १७ आपनै। १८ एक। १९ माँझ।

नहिं तजौं टेक छंडूँ[1] न पन यह बिचार निहचै[2] धर्‍यौ[3]।
छिन भंग अंग लालच कहा सुजस खोय जीवन कर्‍यौ[4] ।४०९।

दोहरा छंद

जैत छाँडि जोगी कहा, सत छंडै[5] रजपूत।
सेख न सौंपौं साह कौं, जब[6] लग सिर साबूत ॥४१०॥

छप्पय छंद

हजरति नई न करूँ करूँ जैसी[7] चलि आई।
मुसलमाँन चहुवाँन सदा ऐसी[8] बनि आई॥
ख्वाजे मीराँ पीर खेत अजमेरि खिसाए।*
असी सहस इक लक्ख बहुरि[9] मक्का न दिखाए[10]॥
बीसल दे अजमेर गढ़ सो नगरा साकौ कियव।
नन बरिय सुंदरी कँवरि सो साह बहुत लालच दियव ।४११॥
प्रथीराज बर सात साहि गवरी गहि छंड्यौ।
कर चूरी पहिराय दंड करि कछुव न मंड्यौ॥
ता पिच्छै गढ़ दिल्ली साहि गौरी चढ़ि[11] आयव[12]।
रेण[13] कुमार अपार जुद्ध करि सुर पुर धायव[14]॥
चहुवाँन बंस अवतंस जो खग्ग[15] त्यागि नाहिंन मुर्‍यौ[16]।

---

१ त्यागूँ। २ निश्चय। ३ धरिव ४ करिव। ५ छाँड़ै। ६ जौलौं। ७ ऐसी। ८ तैसे। ९ उलटि। १० खिदाए। ११ चलि। १२ आए। १३ रमण। १४ धाए। १५ खाग। १६ मुर्‍यय।

* असुर मारि अजपाल चहूँ दिसि चक्र चलाए।
बीसल दे अजमेरि पाय मँडलीक लगाए॥
बीरम दे जालोर गढ़ सो नगरै साकौ कियव।
नन बरी जीभ सुंदरि कुँवरि साहव हौत... ॥

छंडूँ[1] न टेक यह बिरद मम सेख रक्खि[2] जंगहिं करयौ[3] ।४१२।
तजै सेस जो भुम्मि मेरु चल्लै[4] धर उप्पर।
उलटि गंग बह नीर सूर उग्गै[5] पच्छिम भर॥
ध्रुव चल्लै आकास समद मरजाद सुछंडै।
सतीसंग पति कढै बहुरि घर आय[6] सुमंडै॥
थिर रह्यौ न यह संसार कोइ सुनो साहि साखी सु ध्रुव[7]।
दसकंध धरणि अज्जुन जिसा स्वप्नहिं[8] सम दिक्खंत[9] भुव॥४१३॥

दोहरा छंद

कलि मैं अमर जु कोइ[10] नहिँ[11], हसम देखि नहिं भूल।
तुम से किते अलावदी, या धरती[12] पर धूलि[13] ॥४१४॥
अपने कौ सूर न गिनै, कायर गिनै न और।
अपनो कीरति आप[14] मुख, यह कहबौ नहिं जोर ॥४१५॥
लिखे लेख करतार कैं, हजरति मेट[15] न कोय।
को जाणै रणथंभ गढ़, अब यह कैसो[16] होय ॥४१६॥

चौपाई छंद

लिखे हमीर साहि सब[17] वंचे।
करि मन कोप जंग कौं नंचे॥
तीन सहस नीसाँन सु बज्जे।
धर अंबर मग[18] सोर सु गज्जे॥ ४१७॥
रणतभँवर चहुँ ओर सु घेरिव।
दल न समात पुहमि सब हेरिव॥

---

१ छाड़ूं। २ राखि। ३ मुरौं, करौं अंत्यानुप्रास। ४ चल्लहि। ५ उग्गहि। ६ आपु। ७ सुनो साखि यह साखि ध्रुव। ८ सुपन। ९ दीखंत। १० को। ११ नहीं। १२ धरनी। १३ धूरि। १४ अप्प। १५ मौति। १६ साको। १७ सो। १८ मधि।

किन्न[1] निरोध क्रोध करि बुल्लिव।
देखो कुबुधि हमीर सु भुल्लिव ॥ ४१८ ॥
जब हमीर हर मंदिर आए।
वहु बिधि पूजि सु वचन सुनाए ॥
धूप दीप आरती उतारी।
संकर की अस्तुति उच्चारी ॥ ४१९ ॥

नाराच छंद

नमामि ईस संकरं, जटी पिनाकयं हरं।
सिवं त्रिसूल[2] पाणियं, बिभुं प्रभुं सुजाणियं ॥ ४२० ॥
त्रिनैन अग्गि[3] भालयं, गलै[4] सु मुंडमालयं।
भवानि[5] बाम भागयं, ललाट चंद्र लागयं ॥ ४२१ ॥
धरैं[6] सु सीस गंगयं, कपूर गौर अंगयं।
भुवंग[7] संग फुंकरैं, सु नीलकंठ हुँकरैं ॥ ४२२ ॥
गणं गणेस सांबुयं, कि बीरभद्र जांवुयं।
प्रसीद नाथ बेगयं, करो कृपा सु मे जयं ॥ ४२३ ॥
सहाय नाथ किज्जिए, अभै सुदाँन दिज्जिए।
अलावदीन आययं, मलेच्छ[8] संग ल्यायथं ॥ ४२४ ॥
सुलक्ख बीस सातयं, चढ़े सु कुप्पि[9] गातयं।
प्रताप तेज आपकै, मिटे कुकर्म्म पाप कै ॥ ४२५ ॥
सरन्न सेख आययं, करो सहाय पाययं।
उमा सु नाथ नाथयं, गहो सु मोर हाथयं।
छुटंत लाज गड्ढयं, सत्रन्न द्रड्ढय[10] ॥ ४२६ ॥

---

१ कीन। २ त्रिलोक। ३ अग्नि। ४ गरे। ५ भत्रा सुवाम भागयं। ६ दरैं। ७ भवंग। ८ मलेच्छ वंस भाइयं। ९ कोपि। १० दिड्ढयं।

दोहरा छंद

सिव स्वरूप उर धारि कै, मूँदि[1] नयन धरि ध्याँन।
यह अस्तुति नृप की सुनी, भय प्रसन्न बरदाँन॥ ४२७॥
कहैं संभु हम्मीर सुनि, कीरति जुग जुग तोर।
चौदह वर्ष जु साहि सौं, लरत विघ्न नहिं और॥ ४२८॥
बारै अरु[2] द्वै बरष परि, सुदि अषाढ़ सनि सोइ।
एकादशी जु पुष्य कौ, साको पूरन होइ॥ ४२९॥
यह साको अरु जस अमर, फबै तोहिं कलि माहिं।
छत्री को जुग जुग धरम, यह समाँन कछु नाहिं॥ ४३०॥
हरष सहित[3] हम्मीर तब, ईस चरण दिय सीस।
तब मंदिर तैं निकसि कै, करी जुद्ध कौं रीस॥ ४३१॥
संकर कह्यौ हमीर सौं, सुनहु राव ध्रुव साखि।
सहस सूर तेरे जहाँ, परैं मलेच्छ सु लाख[4]॥ ४३२॥

चौपाई छंद

राव हमीर दिवाँन कराए।
मंत्री मित्र[5] बंधु सब आए॥
सूर बीर रावत भट[6] वंके।
स्वामि धर्म्म तन मन तिन हंके॥ ४३३॥
काछ बाछ द्रढ़ बज्र सरीरं।
माया मोह न लोभ अधीरं[7]॥
अमृत बचन सबन तैं भक्खे[8]।
जाचत आपुन प्राँन[9] न रक्खे[10]॥ ४३४॥
नाना[11] बिरद बंदि बिरदावैं।

---

१ मुदि। २ बारा सै। ३ सहीत, सहित्त। ४ आखि। ५ मंत्र। ६ भड। ७ अभीरं। ८ माखे। ९ जीव। १० राखे। ११ बाना।

लक्ख लक्ख[1] कै पटा जु पावैँ ॥
काको वीर राव रणधीरह।
कर्‍यो जुहार राव हम्मीरह ॥ ४३५ ॥
आयस होय करव मैं सोई।
देखो[2] राव हाथ[3] मम जोई ॥
काकै कन्ह[4] करी जस आगै।
कनवज कमध्वज सों रँग[5] पागै ॥ ४३६ ॥
कहै हमीर धीर सुनि वानी।
तुम जु कहो सो मोहिं न छानी ॥
अब गढ़ कोट हसम पुर जेते।
तुम रक्षक[6] हम जाँनत तेते ॥ ४३७ ॥

दोहरा छंद

मैं पहलै पतिसाह सों, कही बात[7] करि टेक।
सो अब चौरै[8] साहि सों, करौं जंग अब एक ॥ ४३८ ॥

त्रोटक छंद

चढ़िए करि कोप हमीर मनं।
करि दिड्ढ सगड्ढ सम्हारि पनं ॥
बहु तोप सुसिद्ध सँवारि[9] धरी।
बुरजैं बुरजैं धर धूम परी ॥४३९॥
बहु कंगुर कंगुर बीर अरे।
सब द्वारन द्वारन धीर[10] परे ॥
सब ठौरन ठौरन राखि[11] भरं।
चढ़िए गजपै चहुवाँन नरं ॥४४०॥

---

१ लाख लाख । २ देखहु । ३ हथ्थ । ४ कहूँ । ५ रिस पागै ।
६ रच्छक । ७ बत्त । ८ चौरह । ९ सँवार । १० बीर धरे ।
११ रक्खि ।

बहु बीर हमीर सुसंग चढ़े ।
गजराजन उप्पर द्वंद बढ़े ॥
करि डंबर अंबर सीस लगे ।
मनु सोवत धीर सबीर जगे[1] ॥४४१॥
बहु चंचल बाजि करत्त खुरी ।
तिन उप्पर पक्खर सोंज परी ॥
नर जाँन जवाँन लसैं दल मैं ।
रन मैं उनमत्त लसैं बल मैं[2] ॥४४२॥
बहु दुंदुभि बज्जत[3] घोर घनं ।
निकसे तब राव करन्न रनं ॥
बहु बारन बारन बीर कढ़े ।
गज बाजि सु सिंदन* जान चढ़े ॥४४३॥
लखि साह सनम्मुख कोप कियं ।
रणथंभ चहूँ दिसि घेर लियं ॥
मिलि राव हमीर सु साहि दलं ।
बिफरे बर बीर करंत हलं ॥४४४॥
सर छुट्टत फुट्टत पार गजं ।
सु मनों अहि पच्छय[4] मध्य रजं ॥
तरवारि बहैं कर पानि बलं ।
धर मध्य धरैं धर हक्क खलं[5] ॥४४५॥
मुख अग्ग[6] बढ़े रणधीर लरैं ।
तिनसों पतिसाह के बीर अरैं ॥

---

१ गजे । २ नर धीर मनं दरसैं बल मैं । ३ बाजत । ४ पब्बय ।
५ धर सीस परैं सिरहाँक खलं । ६ अग्र ।

*सिंदन=स्यंदन, रथ ।

अजमंत[1] महुम्मद इक्क अली ।
तिन संग असीसु सहस्स चली ॥४४६॥
तिहिं द्वंद अमंद बिलंद कियौ ।
रणधीर महा रण झेलि लियौ ॥
करि कोप तबै रणधीर मनं ।
वर बैन कहै पन धारि घनं ॥४४७॥
महिमंद[2] अली मुख आय जुर्‍यौ ।
दुहुँ बीर तहाँ तव जुद्ध कर्‍यौ ॥
अजमंत कमाँन लई कर मैं ।
रणधीर कै तीर कढ्यौ उर मैं ॥४४८॥
रणधीर सु कोपि कै साँगि लई ।
अजमंत कै फूटि[3] कै[4] पार गई ॥
परियौ अजमंत सु खेत जबै ।
महमंद अली फिरि आय[5] तबै ॥४४९॥
रणधीर सु कोपि कै वैन कहै ।
कर देखि अबै मति भुल्लि[6] रहै ॥
किरवाँन सु धीर के अंग दई ।
कटि टोप कछू सिर माँझ[7] भई ॥४५०॥
तव कोप कियौ रणधीर मनं ।
किरवाँन दई महमंद तनं ॥
परियौ महमंद अमंद बली ।
तब साहि कि सैन सबै जु हली ॥४५१॥
लुथि[8] लुत्थि परैं बहु बीर अरैं ।
बहु खंजर पंजर पार करैं ॥

---

१ अजमत्ति । २ महमद्द । ३ फुट्टि । ४ रु । ५ आयौ । ६ भूलि ।
७ माँहि । ८ जुथि ।

धर सीस परै करि रीस मनं।
　　कर पाँव कटै बहु कीन पनं ॥४५२॥
यहि भाँति भिरे चहुवाँन बली।
　　मुरि साह की सेनि सु भग्गि चली[१]॥
बलखी जु परे जु हजार असी।
　　लखि कालिय अट्ट सु हास हँसी ॥४५३॥
चहुवाँन परे इक जो सहसं।
　　सुरलोक सबै बर बीर बसं ॥४५४॥

दोहरा छंद

असी सहस[२] बलखी परे, महमद अजमत खाँन।
तहाँ राव रणधीर कै, परे सहस इक ज्वाँन ॥४५५॥
भजी[३] फौज सब[४] साह की, परे मीर दोइ बीर।
करे याद पतिसाह तब, गज्जनि गढ़ कै पीर ॥४५६॥

चौपाई छंद

भज्जिय[५] फौज साह की जबहीं।
　　फिरो फिरो बानी कह सबहीं॥
तहाँ साह करि कोप सु बुल्लिव।
　　समर भुम्मि अब छंडि सुचल्लिव ॥४५ ॥
सरबसु खाय भोग करि नाना।
　　अबै परम प्रिय लागत[६] प्राना॥
समर बिमुख तैं जानब जोई।
　　हनूँ[७] आप कर तजौं न सोई ॥४५८॥
सुने साह कै कोप[८] सु बैनं।
　　फिरिय सैन इम मंत्र सु ऐनं[९] ॥

---

१ हली। २ हजार। ३ भगी। ४ जब। ५ भागी, भाजी। ६ लग्गत। ७ हनौं। ८ कोपि। ९ फिरी सैन इक मत्त सु ऐनं।

बगतर पक्खर टोप सु सज्जिय ।
जुरे जंग बहु मीर सु गज्जिय ॥४५६॥

दोहरा छंद

बादित[1] खाँ पतिस्याह सों, करी सलाँम सु आय ।
हजरत देखहु[2] हाथ[3] मम, कैसी करूँ[4] बनाय ॥४६०॥

पद्धरी छंद

करि[5] कोप बादित खाँ जुरे जंग ।
मनों प्रलै पावक उठे अंग ॥
गुंजत निसाँन फहरात धुज्ज ।
जुटि जिरह टोप तन नैन सज्ज[6] ॥४६१॥
किए[7] हुक्म साह तन मैं रिसाइ ।
किन्हौ सु जंग फिर बीर आइ[8] ॥
छुटंत[9] तोप मनु वज्रपात ।
जल सुक्कि धरा छुटि गर्भ जात ॥४६२॥
बहु बाँन चलत[10] दोउ ओर घोर ।
अररात[11] अमित मच्यौ महा सोर ॥
भए अंध धुंध सुज्झै न हथ्थ ।
बीर चहुवाँन तहाँ[12] करि अकथ्थ ॥४६३॥
रणधीर उतै बाद्यत्ति खाँन ।
बजरंग अंग जुट्टे सुयाँन ॥
हज्जार बीस वादित्य साथ[13] ।

---

१ वदितखाँ । २ पिक्खहु । ३ हथ्थ । ४ करौं । ५ करि कोप जुरे, जुरिव, जुर्यउ, जुरिग बादित्य जंग । ६ जुटि जिरह जिरै तहँ नैन सुज्झ । ७ किय । ८ सहनाय भरै बज्जे तबल्ल । बहु वोर (चहुँ ओर) सोर कै करत हल्ल । ६ छुट्टंत । १० छुट्टि दुहुँ । ११ अरांत (ट) अमित मच्यौ सु सोर । १२ जुज्झ कीनौ । १३ सत्थ ।

सब जुरे आय रणधीर हाथ[1] ॥४६४॥
बज्जंत सार गज्जंत अब्भ ।
रणधीर सथ्थ आये स सब्भ[2] ॥
करि क्रोध जोध बाहंत सार ।
टूटंत[3] अंग फूटंत[4] पार ॥४६५॥
करि खेल सेल दोउ[5] ओर बीर ।
बाहंत बीर किरवाँन धीर ॥
हज्जार बीस बग्गत साह[6] ।
धर परे बीर करि अकथ गाह[7] ॥४६६॥
रणधीर मीर दोउ भिरे आइ ।
वाद्यत्त गहि गुर्ज तब रोस बाइ ॥
लग्गी सुढाल भू टूटि[8] ताँम ।
फिर[9] दई सीस किरवाँन जाँम ॥४६७॥
लग्गी सु सीस धर पर्‍यौ जाय ।
दुइ टुक्क[10] होय भुमि[11] अद्ध काय ॥४६८॥

दोहरा छंद

भयौ सोच जिय साह कै, जीतिय[12] जंग हमीर ।
बादित खाँ से रन परे, बीस हजार सु बीर ॥४६९॥
महरम खाँ कर जोरि कै, करै अर्ज तिहिं बार ।
लै कर सेख हमीर अब, किसो(?) मिल्यौ यहिं बार ॥४७०॥
गही तेग तुम सोँ अबै[13], हठ नहिं तजै हमीर ।
सेख देय मिल्लै नहीं, पन सच्चो[14] बर बीर ॥४७१॥

---

१ हत्थ । २ सब्ब । ३ टुट्टंत । ४ फुट्टंत । ५ दुहुँ । ६ साथ सत्थ । ७ गाथ, गत्थ । ८ तुट्टि, फुट्टि । ९ फिरि धीर दई । १० टूक । ११ भुंमि । १२ जित्यौ, जित्यउ, जीत्यौ । १३ तबै । १४ साँचो ।

छप्पय छंद

कर कुराँन गहि साह सीस साहिब कौ नायौ[1]।
गढ़ दिस[2] दल चहुँ ओर घेरि रज अंबर छायौ॥
देखि अलावदि साह कहै दल वद्दल भारी।
अब हमीर की अद्दलि[3] आय पहौंचीह सुसारी॥
महरम्म खाँन इम उच्चरै अदलि हाथ[4] साहिब तनै।
होनहार[5] ह्वैहै अबै को जानै कैसी बनै ॥४७२॥

दोहरा छंद

हजरति अपने इष्ट पर, पावक जरत पतंग।
यह हमोर कबहुँ न तजै, सेख टेक रणथंभ[6] ॥४७३॥
साह दसों दिसि जित्ति कै, अब आए[7] रणथंभ।
कहै[8] राव रणधीर सों, जुरौ सूर रण रंग ॥४७४॥
अप्पन[9] धर्म न छंडिए, कहै बात[10] रणधीर।
निसि बासर अब साह सों, किज्जिय जंग हमीर ॥४७५॥

छप्पय छंद

को कायर को सूर द्यौस[11] बिन द्रष्टि[12] न आवै।
बिन सूरज की साखि सार छत्री न समावै॥
बीर गिद्ध[13] अरु संभु सकल पलहारी जेते।
धर पर धरैं न पाँव रैन मैं छिनचर जेते[14]॥
इम कहै राव रणधीर सौं मैं अधर्म्म नाहिन[15] कहूँ।
अब अलावदी साह सौं रैन सार कबहुं न गहूँ ॥४७६॥

---

१ नाये । २ देसल । ३ अदलि रही चँद रोज सुसारी । ४ हत्थ । ५ का होनहार । ६ गढ़ जंग । ७ आइय । ८ कहै राव हम्मीर तैं बीर जुड़न रणथंभ । ९ अपणो । १० बत्त । ११ दिवस । १२ दिस्ट । १३ ग्रद्ध । १४ तेते । १५ नहींन ।

दोहरा छंद

घाटी घाटी साह कै, माटी मिलत अमीर ।
राव जंग दिन मैं करै, राति लड़ै रनधीर ॥४७७॥
तारागढ़ कै पीर कौ, करै याद पतसाह ।
रणतभँवर की फते[1] दे, कदमूँ आऊँ चाह ॥४७८॥

छप्पय छंद

जबहीं मीरा सयद साह की मदत पठाए ।
सिर उतारि कर लिये राव परि सम्मुख धाए ॥
जब हमीर की भीर च्यारि सुर सुद्ध सु आए ।
... ... ॥
गणनाथ संभु दिनकर अवर छेत्रपाल मन रञ्जिए[2] ।
रणथंभ खेत दुहुँ ओर सों बीर पीर दुव सञ्जिए ॥४७९॥

छंद भुजंगप्रयात

लरै नो सयद्दं रणथ्थंभ[3] देवा ।
करै क्रोध भारी पिलै हर्ष भेवा ॥
गरज्जंत[4] घोरंत आतंक भारी ।
घंनै घोर[5] बर्षंत बर्षा करारी ॥ ४८० ॥
कभू हल्लवै भुम्मि गज्जंत बीरं ।
कभू घोर अंधार बर्षंत पीरं ॥
गणन्नाथ हथ्थं लिये तिक्षि फर्सी ।
पिनाकी पिनाँकं किये आप दर्सी ॥ ४८१ ॥
धरे मुद्गरं हथ्थ[6] भैरव अमानो ।
इसे देव जुट्टे सु कट्टे अमानो ॥
इतैं पीर हजरत्त कै सथ्थ[7] पिल्ले ।

---

१ विजय । २ रंजिए । ३ सयदं रणथम्भ । ४ गर्जंत, गज्जंत । ५ घाय । ६ हाथ । ७ साथ ।

अबद्दल्ल एकं[1] हुसैनं सुमिल्ले ॥ ४८२ ॥
रहीमं सयदं सुलत्ताँन जक्की।
अहमद्द् कानीर सूलं सु मक्की ॥
इतैं बीर जुट्टे सु कट्टे पुराँनं।
भयौ जुद्ध भारी सु भूले[2] कुराँनं ॥ ४८३ ॥
परे खेत नो सैद[3] दट्ठे धरन्नी।
हँसे संकरं भैरवं की करन्नी ॥
परे पीर यूं नौ रसूलं सु अल्ली।
पर्‌यौ पीर दूजो कुतब्बं सु चल्ली ॥ ४८४ ॥
पर्‌यौ जो हुसैनं कर्‌यौ जुज्झ[4] भारी।
परे हेरि हिम्मत्ति अल्ली सुधारी ॥
सयदं सुलत्ताँन आयौ 'जु मक्का।
अदल्ली परे और तुक्की सु बंका ॥ ४८५ ॥
पर्‌यौ दूसरो जो रसूलं सु खेतं।
तबै बादस्याहू भयौ सो अचेतं ॥
परे मीर नौ सैद जानंत साहं।
लरे अट्ठ वीरं इटै वैन काहं ॥ ४८६ ॥
अजंमत्त भारी हमीरं सु जाना।
तबै कुच्च किन्नौ दरै छाड़ि कानी ॥
उलट्टे परे जोय किन्नौ दिवाँनं।
जुरे खाँन जेते सु तेते अमाँनं ॥ ४८७ ॥
वजीरं अमीरं सबै खाँन बुल्ले।
सबै वात मंत्रं सु संत्री सु खुल्ले ॥ ४८८ ॥

दोहरा छंद

मरहम खाँ उज्जीर तव, अरज करी सब खोलि[5]।

---

१ इक्कं। २ भुल्ले। ३ सयद, सद्द। ४ जुद्ध। ५ खुल्लि।

लख बलखी उमराव तो, सदकैं भए हरोल ॥४८९॥
अरु बकसी के वचन सुनि, साह कियौ[1] अति सोच।
निवहीं राव हमीर की, गिनौ हमैं सब पोच[2] ॥४९०॥
महिमा सांह हमीर गढ़, ये तीनों[3] साबूत।
बाजो रही हमीर की, मैं कायर[4] जु कपूत ॥४९१॥

छप्पय छंद

महरम खाँ कर जोरि साह[5] कौं ऐसैं भाख्यौ।
इक हिकमत तुम करो नीक जानो तो राखो[6] ॥
महल[7] छाड़ि करि फते बहुरि गढ़ सों जुध[8] किज्जिय।
तोरि छाड़ि रणधीर मारि कै पकरि सु लिज्जिय[9] ॥
आतंक संक गढ़ मैं परै मिलै राव हठ छडि[10] कै।
गहि सेख देय मिलि सुत्तवै करो कुच जब उलटि कै ॥४९२॥

चौपाई छंद

कहै साह महरम खाँ सुनियो।
यह मत खूब किया तुम गुनिथो[11] ॥
छाड़ि दरा कौ प्रथम दिली[12] जे।
चंद रोज महँ फतह जु कीजे[13] ॥४९३॥

दोहरा छंद

मरहम खाँ पतसाह को, हुकम पाय तिहिं बार।
सकल सेन तजबीज करि, घेरी छाड़ि हँकार ॥ ४९४ ॥

छंद बियक्खरी

कोप पतिसाह गढ़ छाड़ि लग्गै।

---

१ कियव। २ सोच। ३ तीन्यू, दोऊ। ४ कातर। ५ तवै हजरति सों भाख्यौ। ६ रक्खौ भक्ख्यौ, रक्ख्यौ अंत्यानुप्रास। ७ पहल पहलै। ८ जंग कीजे। ९ लीजे। १० छाड़ि। ११ सुनिए, गुनिए अंत्यानुप्रास। १२ दिलिजिय। १३ किज्जिय।

सहस[1] सब तीन नीसाँन बग्गै ॥
सहस[2] दस सात आरब्ब छुट्टै ।
गरज गिरि मेरु पाषाण फुट्टै ॥४९५॥
उठत गुब्बार महि तोप लज्जौ ।
गए बन छंड़ि[3] मृग सिंह भग्गै ॥
लक्ख[4] पच्चीस दल ओर फेर्‌यौ ।
यह भाँति पतिसाह गढ़ छाड़ि घेर्‌यौ ॥४९६॥
कहै पतिसाह नहिं बिलम[5] किज्जे ।
चंद दिन[6] बीचि गढ़ छाड़ि लिज्जे ॥
कहै रणधीर मन धीर धरिए ।
आय चहुआण[7] सफजंग[8] करिए ॥४९७॥
निस्साँन[9] सें सद्द[10] सुंदर सुवज्जै ।
रोब रणधीर आयुद्ध[11] सज्जै ॥
बीर रस[12] राग सिंधू स[13] वज्जै ।
सहस इकतीस दल संग लिज्जै[14] ॥४९८॥
सहस दस सूर कुल तेग[15] खेलैं[16] ।
अप्प जिय रक्खि परमाल[17] पेल्लैं[18] ॥
यह[19] भाँति रणधीर चौगाँन आए ।
गरद उड़ि जमी असमाँन छाए ॥४९९॥
अबदल्ल[20] कीरम्म[21] पतिसाह दिल्लै[22] ।

---

१ तीन सहस नीसाँन दल माहिं बग्गै । २ दो सहस आरबौ तेज छुट्टै । ३ छाड़ि । ४ लाख । ५ विलबन्न (बिलंबं) । ६ रोज । ७ चौगाँन । ८ सफरजंग । ९ नीसाण सों साज सुर सद्द गज्जै । १० सब्द । ११ आवद्ध । १२ रण । १३ सिंधूल । १४ लज्जै । १५ तत्थ । १६ खिल्लैं । १७ परमार । १८ चिल्लैं । १९ इस । २० अवदुल, अवदुल्ल । २१ करीम, करींम । २२ पेले ।

मीर रणधीर चौगाँन खिल्ले ॥
बहै बाँन किरवाँन[1] औ चक्क[2] चल्लैं।
रणधीर कह सूर तुम होहु भल्लैं ॥५००॥
साह सों सूर संमुक्ख जुरिए।
हवस के मीर दस सहस परिए ॥
टुट्टि[3] सिर मीर धड़ पहुमि[4] लक्खै।
पंच सत सूर लड़ि गिद्ध[5] भक्खै ॥५०१॥
राव रणधीर अप्पन[6] सिधारे।
अबदुल्ल[7] कीरंम खाँ पुहमि पारे ॥
साह रणधीर सफजंग[8] जुरिए।
साह दल उलटि दो कोस परिए ॥५०२॥
कहै रणधीर नहि बिलँम किज्जै[9] ।
बीति चँद रोज गढ़ छाड़ि लिज्जे[10] ॥
गढ़ कोटहू भाँति[11] नहिं हथ्यि[12] आवै।
यूं ही[13] पतिसाह दल क्यों खिसावै ॥५०३॥

दोहरा छंद

बर्ष पंच[14] गढ़ छाड़ि को, नहिं संबत् पतिसाह।
द्वादस वर्ष रणथंभ सों, निधरक लरि अन[15] साह ॥५०४॥

छप्पय छंद

धनि सु राव रणधीर साह मुख्ख आप सराहै।
मुक्ख दिसि सम्मुख आय कोप करि सार समाहै ॥

---

१ कैयार। २ चक्क। ३ टूटि। ४ पौहम। ५ गिरध, गिर्ज। ६ आपन। ७ अबदुलकरीम खाँ पौहुमि पारे। ८ सपरजंग। ९ कीजे। १० लीजे। ११ कबहूँ। १२ हाथि। १३ कोपि। १४ पाँच। १५ पति।

साह बचन इम कहै मीर महरम खाँ सुनिजे[1]।
जीति[2] जंग रणधीर धन्य वह राव सुभनिजे ॥
पतसाह राडि सफजंग[3] की मनै करिय आपन[4] सबै।
चहुँ ओर जोर उमराव सब किये मोरचा द्रढ़ अबै[5] ॥५०५॥
जबै[6] राव रणधीर कहै हम्मीर सुणिज्जे[7]।
सबै[8] हिंद को साथ बोलि[9] रणथंभ सु लिज्जे[10] ॥
लिखि फर्माँ नहुँ[11] राव बंस छत्तीस बुलाए।
जुरे जंग चौगाँन उमंग दल बद्दल छाए॥
कर जोरि सबै हाजिर भए[12] राव बचन या[13] विधि कहै।
मैं गही तेग पतिसाह[14] सों घरि जाहु जौन जीवौ चहै ॥५०६॥
कह काकौ रणधीर राव सुन बचन हमारे।
अबै छंडि[15] कित जाहिं[16] खाय करि निमक तिहारे॥
अलीदीन सौं जुद्ध छंडि गढ़ चौरै मंडौं।
जिती साहि की सेन मारि खंग खंड बिहंडौं॥
चाहूँ[17] सुनीर या वंस को अकथ गथ्थ[18] ऐसी करूँ।
रबि लोक भेदि भेटूँ सुभट अप्प[19] सीस हर हिय धरूँ ॥५०७॥

दोहरा छंद

कहै राव हम्मीर सौं, मंत्रि एक[20] रणधीर।
जमीति गढ़ चित्तौर की, अजहुँ[21] न आइय[22] बीर ॥५०८॥
लिखि फर्मान हमीर तब, पठए गढ़ चित्तौर।
वंचि[23] खाँन बल्हन[24] कुँमर, हर्ष[25] कीन नहिं थोर ॥५०९॥

---

१ सुनिए। २ जित्ति। ३ सफरजंग। ४ अप्पन। ५ सबै। ६ जब सुराव। ७ सुणीजे। ८ सभै। ९ राण। १० लीजे। ११ फुरमाना। १२ अहै। १३ इम। १४ हजरत्ति। १५ छाड़ि। १६ जायँ। १७ चाहूँ। १८ गाथ। १९ आप। २० इक। २१ अजों। २२ आए। २३ बाँचि। २४ वाल्हन। २५ हर्ष न किन्यउ।

चौपाई छंद

हर्षे उभै कुँमर चौहाँनं।
चतुरँग कै तुरंग सजि आँनं॥
सोला सहस चमूँ सजि सारी।
सजे खाँन बल्हन[1] सी भारी॥५१०॥
सहस तीन[2] कमध्वज्ज सु जानो।
सहस अट्ठ[3] चहुवाँन बखानो॥
सहस पंच पम्मार[4] अमानै।
सोला सहस सजे करिवानै[5] ॥५११॥

मोतीदाम छंद

मिले तब आय कुमार सु दोय।
हमीर सुचाव कियौ बहु जोय॥
बढ़्यौ हिय हर्ष दुहूँ[6] उर सोय।
कहै[7] तब बैन सु राव सु होय॥५१२॥
कियौ सनमाँन सुराव अपार।
मिलंत कुँवार[8] दयौ सिर भार॥
रख्यौ तुम सेख भए जग धन्य।
रहै नहिं कोय सदा जग अन्य॥५१३॥
रहै जग कित्तिय[9] नित्ति अभंग।
सदा यह देह कहैं[10] छिनभंग।
जिते हम सेवक ज्यों अब ठड्ढ[11]।
रहो निहचित्त[12] अभै यह गड्ढ[13] ॥५१४॥
करैं हम जंग लखो अब हथ्थ।

---

१ वाल्हन। २ तीस। ३ आठ। ४ पँवारन आनो। ५ किरवानो। ६ दहूँ। ७ कियौ सु जुहार मिले वर दोय। ८ कुँमार। ९ कीरति। १० नहीं। ११ अवटल्ल। १२ रहै निश्चिंत। १३ गल्ह।

उठे दुहुँ बीर कही यह गथ्थ ॥
चढ़े चतुरंग कियौ तन कोप।
मनों अरुनोदय भाँन सु ओप[1] ॥५१५॥
बजे रणतूर सु भेरि रबद्द।
भए पद गोमुख बीर सु सद्द ॥
चढ़े कुँवरेस तबै चतुरंग।
वढ्यौ हिय हर्ष करै रणरंग ॥५१६॥
कहै तब खाँन सु बाल्हन सीह।
करे सफजंग अबैदल[2] वीह ॥
रतन्न कुमार रखो गढ़ ओर।
नरव्वल ग्वालिर ओर चितोर[3] ॥५१७॥
उठै तब अन्न करो सफजंग।
तजो मति टेक लरो[4] अनभंग ॥
असो सुनि बैन हमीर सुभाय।
भरे[5] जल नैन रहे मुरझाय ॥५१८॥
कही[6] तब कौर नहीं थिर कोय।
चले गिर मेरु नहीं थिर सोय ॥
मिले सुरलोक ससोक सकौन।
सुनी यह राव रहे गहि मौन ॥५१९॥
गए रणबास जहाँ दोउ[7] बीर।
कियौ परणाम जुहार सुधीर ॥
सबै[8] रणवास भरे जल नैन।
कही[9] तदि आसमती यह बैन ॥५२०॥
करो तुम[10] उच्छह हैं यह बार।

---

१ चढ़ै तन नूर वढ़ै मुख ओर। २ अबद्दल। ३ औ चित्तोर ४ लरो न अभंग। ५ ढरे। ६ कहे। ७ दुव। ८ सभे। ९ कहे। १० बहु।

कहे तदि[1] बैन हँसे जु कुमार ॥
धरो तुम सीस हमारे जु[2] मोर।
लरैं सिर सेहर बाँधि[3] सजोर[4] ॥५२१॥
बँध्यौ तब मौर कुमारन सीस।
दई बहु भाँतिन आस असीस ॥
कियौ बहु हर्ष कुमार अपार।
गए हर मंदिर सो तिहिं बार ॥५२२॥
गनेसुर संकर पूजि[5] सुभाय[6]।
करे बहु ध्याँन गहे जब[7] पाय[8] ॥
चढे बरबीर बढ्यौ हिय चाव।
बजे बहु बाजि[9] निसाँनन घाव[10] ॥५२३॥
गजे असमाँन धरा हुब भाय[11]।
गजे[12] घनघोर घटा मनु छाय[13] ॥
तुरंग अनेक सुफेरत सूर।
बनी तिन उप्पर पक्खर पूर ॥५२४॥
झलक्कत नूर चमक्कत सेल।
चढ़े मुख ओप[14] बढ़े मुख मेल ॥
उड़े[15] रज अंबर सुज्झ न भाँन।
हँसे हर देखत[16] छुट्टिव ध्याँन ॥५२५॥
चली सँग अच्छरि जुग्गनि ताँम।
मिली बहु पंखनि[17] गिद्धनि जाँम ॥
मिले बहु भूचर खेचर हूर।
चले पल चारिय भूत सुभूर ॥५२६॥

---

१ तब। २ सु। ३ वंधि। ४ मोर। ५ पुज्जि। ६ सुभाइ। ७ तव। ८ पाइ। ९ बादि। १० हाव। ११ भाइ। १२ गज। १३ छाइ। १४ नूर। १५ उठी। १६ दिक्खत, पिक्खत। १७ पक्खनि।

करे सु जुहार हमीरहिं ध्याय[1] ।
करो यह बात[2] परस्सि[3] सुपाय ॥
मिले भव आनि[4] सुनो चहुवाँन ।
करै कल रीति तजै नहिं बाँन ॥५२७॥
तजो[5] धन धाँम रु लोभ सु[6] मोह ।
धरो[7] मनु टेक सरन्न सुजोह ॥
इती कहि सीस नवाय हमीर ।
कियौ रणथंभहिं वंदन[8] धीर ॥५२८॥
चले सन्मुक्ख उभै कुमरेस ।
सजे चतुरंग तनय करि रेस ॥
जहाँ पतिसाह अलावदि और ।
चली[9] बर बीरति[10] बाँधि[11] सुमौर ॥५२९॥

दोहरा छंद

करि असुवारी कुमर दोउ, उतरे पौलि सु छाण ।
डेरा करे उछाहजुत, बजि नोबति नीसाण[12] ॥५३०॥
सुणि नोबति के नाद[13] तब, बहु उछाह गढ़ जाँन ।
तब अलावदी हसम दिसि, चाहत भयौ निधाँ(दा)न ॥५३१॥
बोलि खाँन सुलताँन तब[14], मसलति करी जु[15] साहि ।
गढ़ मैं कहा उछाह अति, कहा (कौन) सबब यह आहि ॥५३२॥
हैं यह राव हमीर के, लघु भय्या[16] के पूत ।
लरन काज[17] इन सेहरो, सिर बाँध्यौ[18] मजबूत ॥५३३॥
भइय संक पतिसाह[19] उर, कीनौ[20] बहुत बिचार ।

---

१ करे जहाँ राव हमीरहिं ध्याम (धाम)। २ बत्त। ३ पस्सि। ४ मिलै भव आन। ५ तजै। ६ रु। ७ धरै। ८ चंदन। ९ चले, चढ़े। १० बीरसु। ११ बंधि। १२ अप्रमाण। १३ नद्द। १४ सब। १५ सु। १६ भ्राता। १७ कज्ज। १८ बंध्यौ। १९ अति। २० किन्नौ।

जौ न सिंह के मुख चढ़ै, सो भिल्लै इन सार ॥५३४॥

चौपाई छंद

कहै वजीर साह सुनि बत्तं।
मीर अरब्बिय[1] जानि सु तत्तं॥
मर्कट बदन[2] सूकर सम[3] कानं।
द्रग मंजार बेसू खल जानं[4] ॥५३५॥
तुम[5] साँमत प्रथ्विराज सु अग्गैं।
गढ़ गज्जनि आए[6] गहि खग्गैं॥
तुमहिं दिली के तख्त बसाए[7]।
गौरीसा कै भए सहाए ॥५३६॥
वै[8] दोउ कुमर पकरि अब लावैं।
सन्मुख होइ तो[9] मारि गिरावैं[10] ॥
सुनि वजीर के बचन सुहाए।
मीर जमालखाँन बुलवाए[11] ॥५३७॥
कहै साह सुनि मीर जमालं।
है यह काम तुम्हारे हालं॥
आगै[12] तुम गहियो प्रथिराजं।
त्यों[13] तुम गहो कुँमर दोउ आजं ॥५३८॥

छप्पय छंद

सुणि जमाल खाँ मीर हथ्थ[14] धरि मुच्छ सँवारिय[15]।
पाव परसि कर जोरि कवन बड़ काज[16] निहारिय[17] ॥

---

१ आरबी। २ मुख। ३ सुक्कर इव। ४ द्रगमजार बपुष (कू) खल जानं (जानहु)। ५ तिहिं सामत। ६ गजनी लाये। ७ बैसाये, बठाये। ८ वै दुव कुँमर पकरि गहि ल्याऊँ। ९ तोयसो। १० गिराऊँ। ११ बुल्लाए। १२ अग्गै। १३ तिम। १४ हाथ। १५ बकारिय। १६ कज्ज। १७ निकारिय।

जौ आयुस अनुसरौं सकल हिंदुव गहि लाऊँ ।
सम्मुख गहै[1] जुसार मारि तिहिं धूरि मिलाऊँ ॥
इम[2] कहि सलाँम कीनो[3] तुरत सज्जि[4] सथ्थ सव[5] अप्पवल ।
सजि कवच टोप कर खग्ग गहि उभै ओर किन्निय सुहल[6] ॥५३६॥

भुजंगप्रयात छंद

इतैं कुमर[7] चत्रंग[8] कै जंग जुट्टे ।
उतैं मीर आरब्ब कै बीर छुट्टे ॥
दुहूँ ओर घोरं निसाँनं सु बज्जं ।
मनों पावसं मेघ घोरं सु गज्जं ॥५४०॥
दुहूँ ओर खंडं प्रचंडं सुभारी ।
छुटे नाल गोला बँदूकं सुभारी ॥
भयौ सोर घोरं धुँवा घोर घोरं ।
गई सुद्धि सुज्झै नहीं[9] नैन ओरं ॥५४१॥
करैं सेल खेलं महावीर वंके ।
फुटैं अंग अंगं करैं दोय हंके ॥
बहैं तेग अंगं करैं टुक[10] दोई[11] ।
हँसी कालिका देखि[12] कौतुक सोई[13] ॥५४२॥
बहैं[14] जम्म दंड्ढं करैं बाहु जोरं ।
कढैं[15] अंत अंतं[16] कहूँ सीस तोरं ॥
कहूँ हथ्थ मथ्थं परे वीर वंके[17] ।
उठैं रुंड मुंडं करैं जोर हंके[18] ॥५४३॥

---

१ गहूँ । २ यह । ३ किन्नी । ४ सजे । ५ सह । ६ बज्जे सुबीर सिंदुर, (सिंधुर) बदन उभै ओर किन्निय (कीनी, कीन्ही) सुलह । ७ कौंर । ८ चतुरंग । ९ मही । १० टूक । ११ दोऊ । १२ दिक्खि, पिक्खि । १३ सोऊ । १४ चहैं । १५ गहैं । १६ अंतैं । १७ बक्के । १८ हक्के ।

उतैं मीर जम्मील ध्यायौ हँकारं।
इतैं खाँन धायौ भिर्‌यौ इक्क[1] बारं॥
उतैं मीर तीरं चलायौ हँकारी।
लग्यौ बाजि कै सो भयौ वारि पारी॥५४४॥
पर्‌यौ खाँन को बाजि फुट्टौ[2] सु अंगं।
चढ़े और बाजी कर्‌यौ फेरि जंगं॥
दई खाँन जम्मील[3] कै अंग बच्छी।
पर्‌यौ भुम्मि मीरं सुतो आय मुच्छी॥५४५॥
दोउ सैन देखैं भिरे बीर दोई।
भए लथ्थ वथ्थं कुमारं सु सोई॥
पर्‌यौ जोर भारी कुमारं सु जान्यौ।
तबै राव हम्मीर उप्पर सुठान्यौ॥५४६॥
लियौ बोलि संखोदरं सूर सोऊ[4]।
करो ऊपरं[5] जाय कुम्मार दोऊ[6]॥
महाबीर[7] अज्जाँन बालग्घु (बालक्क) सूरं।
महायुद्ध[8] जानैं इतो बै करूरं॥५४७॥
चले सूर संखोदरं खेत आए।
उतै आरबीसेन[9] द्वै[10] लक्ख धाए॥
उड़ैं बाँन गोला गजं बाजि फुट्टैं[11]।
वहैं बाँन कम्माँन ज्यौं मेघ बुट्ठैं॥५४८॥
धरैं[12] आयुधं[13] बीर सों बीर बुल्लैं।
परैं सीस भू मैं[14] किती[15] सीस झल्लैं॥

---

१ एक। २ फूट्यौ। ३ जम्माल। ४ सोई। ५ उप्परं। ६ सोई। ७ महाबीर अज्जाँन बाहू लघु सुसूरं। ८ कहा। ९ सेख। १० दोउ, है (अश्व)। ११ फूटैं। १२ झरैं। १३ आवच। १४ भुम्मी। १५ किती धूम झुललैं।

कहै खाँन कुम्मार वैनं हँकारी ।
सुनो सर्व सथ्थं करो जुद्ध भारी ॥५४९॥
रहै नाँम लोकं महा मुक्ति मिल्लै ।
रहै नाहिं कोई सदा आय[1] भिल्लै ॥
चलाए गजं कोपि[2] कुम्मार सोई ।
उतै आरबी मीर जम्माल[3] होई ॥५५०॥
तबै वीर बालन्नसी कोप किन्नौ ।
महा[4] तेग जम्माल कै मथ्थ (सीस) दिन्नौ ॥
कट्यौ टोप ओपं लगी जाय मथ्थं ।
तबै मीर बालन्न भय लुथ्थ वथ्थं ॥५५१॥
कटारं कुमारं चलायौ[5] सु भारी[6] ।
पर्‌यौ मीर जम्मील भू मैं[7] सु थारी ॥
सबै सथ्थ जम्माल की कोपि[8] धायौ ।
तहाँ बालन्नं मारि धरनी गिरायौ[9] ॥५५२॥
तबै खाँन कुम्मार धायौ[10] रिसाई ।
घनी सेन आरब्ब धरनी मिलाई[11] ॥
तबै बीर संखोदरं जंग[12] कीनौ ।
किते आरबी खेत पार्‌यौ नबीनौ ॥५५३॥
किते सेल खेलं करैं वार पारं ।
भभक्कैं घटैं घाव छुट्टैं पनारं ॥
बहैं तेग वेगं परे[13] सीस भारी ।
उड़ैं घोर रुंडं परैं मुंड कारी ॥५५४॥

---

१ आप । २ कुप्पि । ३ जम्मीर । ४ तबै तेग (खग्ग) जम्मील कै अंग दीनौ । ५ लगायौ । ६ भुम्मिः । ७ धारी । ८ कुप्पि, जम्मील को देखि । ९ मिलायौ । १० धाये । ११ गिराई । १२ जुद्ध । १३ परी ।

परे दोय कुम्मार किन्नी[1] अकथ्थं।
बरी अच्छरी सूर लोकं सु मथ्थं॥
परे मीर आरब्ब कै पोन लक्खं।
तहाँ हिंद की भीर सौरा सुभक्खं[2] ॥५५५॥
परे दो कुमारं महावीर वंके।
परे एक[3] संखोदरं कीन[4] हंके॥
तहाँ आठ[5] हज्जार चहुवाँन जाँनं[6]।
परे तीन हज्जार कमध्वज्ज[7] माँनं॥५५६॥
पँमारं परे पाँच[8] हज्जार सोई।
परे बीर सोला सहस्रं सुजोई॥
परे स्वामि कै कज्ज[9] कुम्मार दोई।
सुनी राव हम्मीर जीते सु सोई॥
भजे आरबी ज्यों बचे[10] जंग तेयं।
कहै साह देखो सु हिंदू अजेयं॥५५७॥

दोहरा छंद

परे सहस सत्तरि तहाँ, मीर अरब्बिय[11] संग।
हय गय पाँच हजार परि, सत जमाल से अंग[12] ॥५५८॥

छप्पय छंद

तब सु राव रणधीर साहि पै[13] तेग समाही।

---

१ कीनी । २ सोरा सुसत्थं । ३ इक्क । ४ किन्न । ५ अट्ठ । ६ ज्वाँनं । ७ राठ्यौर, रठौर । ८ पंच । ९ काँम । १० रहे । ११ आरब्बी ।
१२ तहाँ परे सोरह सहस दुहूँ कुँवर कै सत्थ।
वरी इते तहँ अप्छरा (अच्छरी) धरे हार हर मत्थ।
पाँच वरस गढ़ छाड़ि कै लरे राव रणधीर।
तब अलावदी कोपि कै कहे बचन तजि नीर।
१३ साहि सों।

समो[1] सु पहोँच्यौ आय सु तो मिट्टै नहिं काही ॥
चढ़े खेत रणधीर साहि दोनू[2] बतराए ।
तजै न हठ हम्मीर कहा जो तुम सत[3] आए ॥
रणधीर राव इम उच्चरै समुझि साहि चित लिज्जिए ।
गढ़ रणथंभ हमीर को हजरति हट्ठ न किज्जिए ॥५५९॥
कहै साहि रणधीर राव कौ किन समझावो ।
करो राज रणथंभ सेख[4] कौ कदमौँ लावो ॥
होनहार सो भई मिटे मेटी न मिटाई ।
घटै हटै हठ राव तबै हमारी पतिसाई ॥
नहिं तजै[5] राव हठ मैं तजौँ कौन[6] साह मो सोँ कहै ।
यह प्रगट बत्त[7] संसार[8] महिं भिरैँ दोय एकै[9] रहै ॥५६०॥
कहै राव पतिसाह सुणो रणधीर अमानो ।
इतो राज तुम करो जितो हम सोँ नहिं छानो ॥
ये[10] गढ़ च्यारि सु धीर हुकुम किसकै तुम पाए ।
कबहुँक[11] फिरे रकेब सीस कबहूँ नहिं[12] नाए ॥
गिरि सूरज पलटै पहुमि कोटि (रि) बचन कह कोय[13] ।
सेख छाड़ि उलटौ फिरै यह कबहूँ नहिं होय[14] ॥५६१॥

दोहरा छंद

चढ़े साहि दल बिपुल जब, छेकिव[15] गढ़ रणधीर ।
तब चहुवाँन रिसाय कै, संमुख जुड़े[16] सु बीर ॥५६२॥

---

१ संमत । २ दोउ । ३ बतराए । ४ सेख गहि कद्दमु लाओ ।
५ नन तजै । ६ कै सहाय मोसौं (हमसन) । ७ बात । ८ सारी मही ।
९ इक्कै । १० यह । ११ कब्बहुँन । १२ ननवाए । १३ कोऊ कहो ।
१४ सेख छंडि उलटौ फिरौं तौ मोहिं साहि जग को कहो । १५ छिकिव ।
१६ जुट्टिग, जुट्टिय ।

छंद त्रोटक

रणधीर चढ़े करि कोप मनं ।
सब सामँत सूर सजे अपनं ॥
गजराजन उप्पर डंबरयं ।
उछले[1] लगि बीर सु अंबरयं ॥५६३॥
बहु चंचल बाजि सु बग्ग[2] लियं ।
किय अग्ग[3] सु पैदल लाग कियं ॥
गढ़ तैं बहु भाँति[4] सु तोप चली ।
पतिसाह[5] समेत सु कोप चली ॥५६४॥
रणधीर सु बंधन[6] दुग्ग[7] कियं ।
करि मंगल बिप्रन दाँन दियं ॥
रबि कौ परणाम सु कीन[8] तबै ।
कर जोरि सु आयसु माँगि[9] जबै ॥५६५॥
अरु राव हमीर जुहार कियं ।
हर्षे[10] चहुवाँन सु मोद हियं[11] ॥
बहु दुंदभि ढोल सुभेरि बजें ।
कसि आयुध सायुध बीर सजे ॥५६६॥
हलका करि बीर बढ़ै दल पैं[12] ।
मनु राघव कोपि कियौ खल पैं[13] ॥
उत साहि हुकम्म कियौ रिस मैं ।
सब सेन जु आय जुर्‌यौ छिन मैं[14] ॥५६७॥
बिफरे सब बीर सुधीर मनं ।
सब स्वामि सु धम्र्म सु कीन[15] पनं ॥

---

१ उससे । २ बाग । ३ अग्र । ४ भाँतिन । ५ पतिसाहि सुसैन सुकंप हली । ६ बंदन । ७ दुर्ग । ८ किन्न । ९ मंगि । १० बरखे । ११ दियं, जियं । १२ मैं । १३ पल मैं । १४ जुर्‌यौ निस मैं । १५ किन्न ।

दुहुँ ओर सु तोप सु कोप[1] छुटे।
गढ़ कोट न रूँधत[2] पार फुटे ॥५६८॥
वरषै धर आगि[3] सु धूम उठा।
झर अंबर भुम्मि कराल बुठी ॥
बहु गोलन गोलन गोल परे।
गजराजन सौँ गजराज जुरे[4] ॥५६९॥
हय सौँ हय पयदल पयदल सौँ।
जुरे[5] बहु जोध महाबल सौँ ॥
बहु[6] बाँन दुहूँ दल माँझ परैं।
धर सीस कहूँ कर पाँव झरैं ॥५७०॥
बहु सोर अँधार सु घोर भयौ।
निसि बासर काहु न जानि[7] लयौ ॥
कर कुंडिय[8] बीर कमाँन कसैँ।
गज बाजिन फुट्टत पार लसैँ ॥५७१॥
बरषैं मनु पावस बुंद अयं।
बहु फुट्टत पक्खर[9] कंगलयं ॥
तहँ लागत[10] सेल सु पार हियं।
मनु श्रोन पनारन तैँ बहियं ॥५७२॥
लगि तेग करैँ दुव टुक्क[11] तनं।
जिमि[12] सीस परैँ तरबूज मनं ॥
तहँ साह सु सेन मुरक्कि चली।
चहुवाँन तबै करि कोप बली ॥५७३॥
मुरकी पतसाह तनी जु अनी।

---

१ कोपि। २ रुकत। ३ अग्गि। ४ भिरे। ५ जुरिये, जुटिये। ६ चहुवाँन। ७ ज्ञान लह्यौ। ८ कुंडल, कुंडलि। ९ पाखर। १० लगत। ११ टूक। १२ जिन, जिहिं।

मुख[1] बात सबै पतसाह भनी ॥
करि कोप तबै पतिसाह कहै ।
मुहिं जीवत सेन सु भज्जि[2] चहै ॥५७४॥
बकसी तब आय सलाँम कियं ।
लख रूमिय अप्प[3] सु संग दियं[4] ॥
रणधीर तबै सनमुक्ख पिले[5] ।
बकसी करि कोप सु ओप मिले ॥५७५॥
गुरजैं रणधीर कै सीस दई ।
तिन ढल्ल सु उप्परि[6] ओट लई ॥
बरछी रणधीर सु अंग दियं ।
धर फुट्टि[7] सु बाजि[8] कौ पार कियं ॥५७६॥
हय[9] तैं बकसी धर माँहि पर्‌यौ ।
तिहिं[10] संग सु मीर पचास गिर्‌यौ[11] ॥
इक रूमिय धीर सूँ आय जुर्‌यौ ।
फिर वाँन लिये मन नाहिं मुर्‌यौ[12] ॥५७७॥
रणधीर इतैं उत खाँन बलं ।
लथ वत्थ भए दुख देखि दलं ॥
रणधीर कटार सूँ पार कियौ ।
बलखाँन सु तेग जु कंध दियौ ॥५७८॥
सिर टुट्टत[13] धीर उठ्यौ धड़यं ।
बलखाँनहिं आय गह्यौ करयं ॥

---

१ मुख वाह सुवाह सु साह भनी। २ भाजि । ३ आप । ४ सनमुक्ख सुई द्विय (सुहिंदुव) पिल्लि दियं (पैपिलियं) । ५ लियं । ६ ऊपर । ७ फूट । ८ सुबाज कै । ६ गज तैं । १० तब सोंगि (संगि) सुधीर सु मीर अर्‌यौ । ११ परे, गिरे—अंत्यानुप्रास । १२ लख पाँच लिये मन माहिं मुर्‌यौ । १३ टूटत ।

भरि बथ्थ सु हथ्थ पछारि बलं।
हिय पार कटार किये सु खलं ॥५७९॥
लख एक स रूमिय खेत परे।
रणधीर सुरुंड भरे खपरे ॥५८०॥

चौपाई छंद

पर्‌यौ खेत बकसी बड़ भारी।
और संग दल बीस हजारी ॥
मीर पचास संग तहँ सूते।
इक लख रूमि बिहस्त[1] पहूँचे[2] ॥५८१॥
तीस सहस रणधीर सु[3] संगी।
परे खेत वर बीर उमंगी ॥
धीर[4] रुंड द्वै पहर सु नच्यौ।
एक सहस हनि गज जस संच्यौ ॥५८२॥
टूट्यौ गढ़ सु छाड़ि को सोई।
सुनी स्रवण हम्मीर सु जोई ॥
तब आपन तन मन पन जान्यौ।
छत्री मंगल मरन बखान्यौ ॥५८३॥

दोहरा छंद

पक्ख ऊजरो[5] चैत्र सुदि, तिथि नौमी सनिवार।
बीस सहस छत्री परे, अबला जरीं हजार ॥ ५८४ ॥
जो कनवज काकै करी, करी छाड़ि रणधीर।
हरष सोच सम करि दोऊ, चक्रत भए[6] जु मीर ॥ ५८५ ॥
गज इकसठि दो लष तुरी, छप्परि[7] बीस अमीर।
जो कहता सोई करी, धन्य राव रणधीर ॥ ५८६ ॥

---

१ मिस्ति। २ पहुंचे। ३ कै। ४ धीर जुद्ध करि रुंड न नच्यौ।
५ पाख उजारी। ६ भयउ। ७ छपरि।

छप्पय छंद

इते मीर रण परे साहि षट मास सम्हारे।
तबै दूत इक आय साहि सौँ बचन उचारे॥
जिते देव हिंदवाँन डिंगत को धीर बँधावै।
जिनकौ पूजन करै राव निस दिन मन लावै॥
बर दियव राव हम्मीर कौं आपन मुख संकर सरिस।
टूटै न गढ़ढ रणथम्भ सुनि अभै किये चौदह बरिस॥५८७॥

दोहरा छंद

दल लख सत्ताइस तहाँ, धर(न)नि समावत मीर।
सूखत[१] सर सरिता बिमल, कूप बावरी नीर॥५८८॥
तिथि नौमी आसोज सुदि, कर गहि तेग रिसाइ।
सुरमंदिर करि कोप सब, चढ़ढि[२] अलावदि साइ॥५८९॥
हाथ जोरि गन्नेस कूँ, कहै राव हम्मीर।
करो मदति चाहत जवन, अलादीन दलभीर॥५९०॥

चौपाई छंद

सुनत[३] बचन हमीर कै सोई।
कोपे[४] जुद्ध देव कौं जोई॥
जब संकर काली हरषानी।
निज[५] समाज बोले मृदु बानी॥ ५९१॥
चौंसठि जोगनि भैरव नच्चैं।
कर धरि चक्र त्रिसूल सु रच्चैं॥
बाजे[६] डिमरु बीर चढ़ि[७] आए।
तबै साहि सौँ जंग रचाए॥ ५९२॥

---

१ सुक्कत। २ चढ्यव। ३ सुन तब वत्त राव की सोई। ४ कुप्पिय देव जुद्ध कौं जोई। ५ निज मुक्ख सुबुल्लिय मृदु वानी। ६ बज्जिय, बज्जिवं। ७ जुरि।

चल्लै चक्र त्रिसूल सु नेजा।
सक्ति पास धनु बाँन धरेजा॥
हल मूसल अंकुस मुद्गर बर।
परिघ सेल लै धाए परिकर॥ ५९३॥
कीनौ जुद्ध बीर सब सज्जे।
संकर सरस कतूहल[1] सज्जे॥
सबै साहि की सैन सुभाई।
सबै परस्पर करैँ लराई॥ ५९४॥
बजि बाजंत्र अनेक स बीरं।
डैरव संख भेरि पट हीरं॥
मार मार चहुँ दिस सुनि बानी।
कटे लाख[2] आल्हन पुर जानी॥ ५९५॥

छप्पय छंद

तब सब देव गणेस बिघ्न बड़ दल मैं किन्नव।
कितौ म्लेच्छ को संग सस्त्र अप अप्पसु[3] किन्निव॥
उठे सकल ललकारि कीन्ह घमसाँन[4] सुभारिय।
रुंड मुंड परि दंड सेन दो लक्ख सँघारिय॥
देखंत नयन पतसाह तब अति अद्भुत कौतुक भयउ।
हिम्मत्त बहादुर अली पर उभै लक्ख सेनह हयउ॥५९६॥
यह चरित्र लखि साहि कूँच[5] आल्हनपुर[6] तैं करि।
तब फिर पलटे आय घेरि रणथम्भ सरिस भरि॥
करि देवन से दोष कहो कौने सुख पाए।
आगे[7] लख दल किते मारि हरि असुर खिपाए।

---

१ कुतूहल। २ लक्ख अल्हन। ३ आपस मैं। ४ घमसाण।
५ कुञ्च। ६ अह्लणपुर। ७ अग्गै।

अब लरै मनुस मानुसन सोँ देव दैत्य आगे[1] किते।
यह जानि साहि सिर नाय करि आय[2] किए[3] डेरा उते ॥५९७॥

दोहरा छंद

हठ[4] हमीर छाड़ै नहीं, हजरति तजै[5] न टेक।
सात मीर पतसाह कै, गए बिसरि करि तेक ॥५९८॥
महरम खाँ तब इम कही, अब पिछतावति साहि।
हम बरजत रणथम्भ गढ़, चढ़ि आए तुम चाहि[6] ॥५९९॥
हजरति हिमति न छाड़िये, धरिये मन मैं धीर।
गढ़ नरगह चहुँ दिसि करो, कब लग लरै हमीर ॥६००॥

पद्धरी छंद

महरम्म आपनो[7] तजि सुसाहि।
ध्याए सुदेव हिंदवाँन जाहि॥
बहु बोलि विप्र पूजा कराहिं।
करि धूप दीप आरति बनाहिं[8] ॥६०१॥
पद परसे दरसे सकल देव।
नैबेद्य पुज्य नाना सु भेव॥
करं जोरि साहि बंदन सुकीन[9]।
यह भाँति गवन डेरा सु लीन[10] ॥६०२॥
करि आल्हण[11] पुर तैँ कूँच ध्याय।
रण कै पहार डेरा कराय॥
गढ़ की निगाह कीनी[12] सु साहि।
आसंग नाहिं कीनी[13] सताहि ॥६०३॥
करि मंत्र पलची दिय पठाय।

---

१ अग्गै। २ आनि। ३ किन्न, कियउ, किते। ४ हट्ठ हमीर न छंडही। ५ तजी। ६ साहि। ७ अप्पनो। ८ कराय, वनाय अंत्यानुप्रास। ९ किन्न। १० दिन्न। ११ अल्हण। १२ किन्नी। १३ किन्नौ।

तुम कौ सुकहत समुझाव[1] राय ॥
दै सेख छाड़ि[2] हठ मिलि सुराव ।
परसो सुआय पतसाह पाँव ॥६०४॥
इम सुनत राव प्रजरयौ सु अंग ।
व्रत टरै केमि छत्री अभंग ॥
तुव कहा कहूँ दूतै सुजानि ।
नन टरै वैन छत्री सुबानि ॥६०५॥
नहिं देहु सेख घन[3] करै केमि ।
पसु पंछी जे तजि सरण जेमि ॥
रणधीर कुँवर दोउ अति उदार ।
बालणसी तीजो खाँन सार ॥६०६॥
ते परे खेत रावत अभंग ।
अब कोन मिलि[4] राख्यौ प्रसंग ॥
तब दूत द्रव्य लै जाहु ओर ।
कहँ[5] रही बात[6] फरमाँन तोर ॥६०७॥
मति आव फेरि भेजे सुसाहि ।
अब बिना जुद्ध नहिं उचित ताहिं ॥
लै चल्यौ दूत ये खबरि ऐन ।
जा कहे साहि सों सकल बैन ॥६०८॥
सुनि बचन बाँचि फरमाँन सोइ ।
कहि साहि राव समुझै न कोइ ॥
उज्जीर देखि तजबीज कीन[7] ।
रण को पहार अपनाय लीन[8] ॥६०९॥
चढ़्ढाय तोप तिहिं पर प्रचंड ।

---

१ समुभाव । २ छंडि । ३ प्रण(न) । ४ मिल्लि, मील, मेल ।
५ कहा । ६ बत्त । ७ किन्न । ८ लिन्न ।

कीनी तयार गढ़ कौ अखंड ॥
पतसाह कहै महरम सुवत्त ।
तुम सुनो एक हम करी[1] चित्त ॥६१०॥
हम्मीर राव की तोप देखि ।
दग्गो सु आपनी तोप लेखि ॥
यह तोप फुटे गढ़ फत्ते होय ।
संदेह कौन या मैं न सोय ॥६११॥
गोलम्मदाज तब करि सलाँम ।
दागी[2] सुतोप लखि ताव ताँम ॥
लग्यौ सुतोप कै गोल जाय ।
नुकसाँन भयौ तिहिं कछुक जाय[3] ॥६१२॥
यह सुनी स्रवण हम्मीर राय[4] ।
ततकाल तोप पै गयौ धाय ॥
देखी सुतोप साबूत जानि ।
तब कह्यौ राव तुम सुनो कानि ॥६१३॥
पतसाह तोप खंडै सुकोय ।
हौं करौं बड़ो ताकौ रसोय[5] ॥
गोलम्मदाज कीनौ[6] जुहार ।
पतसाह तोप फूटी[7] सुपार ॥६१४॥
तब कही साह महरम सुदेखि ।
गढ़ विषम बीर छंडै न टेक[8] ॥
अब करो[9] क्यों न तजबीज और ।
किहिं भाँति हाथि आवै सुजोर ॥६१५॥
कर जोर कही महरम्म खाँन ।

---

१ धरी । २ दग्गी । ३ ताय । ४ राव, धाव अंत्यानुप्रास ।
५ सजोय । ६ किन्यउ । ७ फुट्टी । ८ पेखि । ६ करै कौन ।

पुल बाँधि[1] तोरि गढ़ करो आँन ॥
तव महरम खाँ तजवीज कीन।
इक राह बाँधि गढ़ को जु लीन ॥६१६॥
पुल[2] बाँधि कीन गढ़ की जु राह।
सुनि राव चित्त चिंता सु आह ॥
नहिं रह्यौ मरम[3] गढ़ को सकोइ।
बहु फिकर राव कीनौ[4] सु जोइ ॥६१७॥
तिहिं रैन पदम सागर सुआय(इ)।
दीनौ सुसुप्न हम्मीर धाय(इ) ॥
नहिं करो कोन चिंता हमीर।
सब नदी समुद्रन कौ सुसीर ॥६१८॥
तुम रहो अभै गढ़ अभै[5] आय।
इक छिन्न माहिं पुल द्यों बहाय ॥
तब प्रात राव जग्गे हमीर।
फूटि गयौ सकल बंध्यो सुनीर ॥६१९॥
सुनि साह बात[6] अचरिज्ज मानि।
टूटै न गढ्ढ जिय बिषम जानि ॥
पुच्छिउ[7] उजीर तबै सुबोलि।
कीजे इलाज किम कहों खोलि ॥६२०॥
रण[8] कै पहार कहा कीन आय।
डेरा सुकीन्ह उज्जीर थाय[9] ॥
मजबूत मोरचा तहाँ कीन्ह।
बहु परी रारि दुहुँ ओर चीन्ह[10] ॥६२१॥

---

१ बंधि। २ पुल बंधि किहूँ गढ़ को सराह। ३ मगज। ४ किवौ। ५ अवै। ६ वत्त। ७ पुच्छी सुतवै उज्जीर बोलि। ८ रण को पहार परि साहि आय (आप)। ९ थाप। १० किन्ह, चिन्ह अंत्यानुप्रास।

हम्मीर राव ऊपरि[1] प्रसाद ।
तहाँ करयौ अखारौ इंद्रबादि ॥
तहाँ चंद्रकला पातुर प्रबीन ।
सो नृत्य करै सुंदर नबीन ॥६२२॥
बाजत मृदंग बीना सितार ।
कट तार तार सहनाइ सार ॥
महुवरी सु खंजरि तास संग ।
स्रीमंडल सुर औ जलतरंग ॥६२३॥
षट तीस राग रागनि सुसुद्ध ।
सो सुनै नृपति[2] चहुवाँन उद्ध ॥
गंधार देव भैरव सुजाँन[3] ।
अरु राँम कली बिम्भा समाँन[4] ॥६२४॥
बजि ललित बिलावल गिरी देव ।
सुर आसा टोडी सकल भेव ।
हिंडोल और सारँग अनूप ।
नट और स्रीयुत राग भूप ॥६२५॥
करि गौरी को अलाप आनि ।
तब दीपग अरु सगरे कल्याँन ॥
सुर गावत पंचम अति प्रबीन ।
सुनि केदारो मारो सुभीन ॥६२६॥
खंभाच रू मारू परज पाइ ।
सुम सोर उड़ैसी जैत गाइ ॥
अड्याणी[5] कन्हर बहु सुभेव ।
बंगाल गौड़ मालव सुदेव[6] ॥६२७॥

---

१ उप्पर । २ भूप । ३ सुजानि । ४ मानि । ५ अड्याणो । ६ एव ।

सिंधुव बिहाग षट राग पेखि।
काफी अनूप सुर मधुर लेखि॥
सब कला जीति संगीत रीति।
नृतंत बाल गावंत गीति॥६२८॥
सुर सप्त ग्राँम तीनूँ सु भेव।
इक्कीस मूर्छिना करत[1] एव॥
बहु लागडाक[2] गावत प्रबंध।
तिहिं सुनै होत आनंद फंद॥६२९॥
हम्मीर राव राजत मसंद।
दुहुँ ओर चौंर ढारैं[3] असंद॥
यहि[4] देखि साहि गरि गयौ गब्ब।
हम्मीर इंद्र पदवी सु सब्ब[5] ॥६३०॥
अभिमाँन तजत नहिं[6] मिल्यौ मोहिं।
नहिं सेख देय[7] संका न कोहि॥
यह चंद्रकला पातुर सुभेव।
बहु हाव भाव हस्तक सुदेव[8] ॥६३१॥
बर्षत कटाक्ष ऊपरि सुराव।
मोहिं[9] गिनत नाहि कछु [10]रहत चाव॥
तब ताँन गाँन[11] गावंत मानि[12]।
एड़िय सुबाल मोहिं फिरत[13] बानि॥६३२॥
अपमाँन बाल कीन्हौ अनंत।
एड़ी दिखाय मुझ[14] कौ हसंत॥
करि कोपि कहै पतिसाह एम।

---

१ धरत। २ डाढ। ३ ठोरैं। ४ तिहिं। ५ गर्व, सर्व अंत्यानुप्रास। ६ मिल्यौ न मोहिं। ७ देत। ८ सुभेद। ९ मुहिं। १० जनु। ११ ताँन माँन। १२ जानि। १३ करत। १४ मुहिं सौं।

मैं करौँ बड़ो[1] जिस कौ सुप्रेम ॥६३३॥
जो हनै बाल कहि तीर पाहि।
रसभंग करै मैं गिनौं ताहिं[2] ॥
सुनि बचन मीर गभरू सुसेख।
कर जोरि कीन्ह[3] बानी बिसेष ॥६३४॥
यह धर्म्म पुरुष को कितहु[4] नाहिं।
तिय ऊपर ऊँचो करत[5] बाँहि ॥
तब कहत साहि थम सजो बाँन।
नुकसाँन होय अरु बचै ज्याँन ॥६३५॥
सुनि बचन स्रवन कम्माँन लीन।
सो ऐंचि स्रवण तिय चरण दीन ॥
तब परी बाल ह्वै बिकल भूमि।
रसभंग भयौ सब लखत घूमि[6] ॥६३६॥
लगि तीर सभा मैं परी[7] जाव।
तब बढ्यौ सोच हम्मीर राव[8] ।
अब लों न तीर दुग्गहिं पहुँच्चि।
यह कौन औलिया आय सच्चि[9] ॥६३७॥

दोहरा छंद

देखि तीर अचिरज हुए,[10] गढ़ मैं आवत सीर।
चक्रत चहुँ दिस चाहि कै, रह्यौ[11] राव हम्मीर ॥६३८॥
मुर्छि त्रिरिय[12] धरणी परी, भए राव चित भंग।
राव कहै[13] ऐसे बली, किते साह कै संग ॥६३९॥

---

१ बड़ा जिसकौ रतेम। २ पाय, साय अंत्यानुप्रास। ३ कही। ४ कहत। ५ करस बाँहि। ६ भुम्मि, घुम्मि अंत्यानुप्रास। ७ परयौ। ८ जाय, राय अंत्यानुप्रास। ९ उँचि। १० भयौ। ११ रहे। १२ त्रिया। १३ कहह।

महिमा साहि हमीर सैं, कही बात कर जोर।
सकल साह कै हसम मैं, है लघु भैया मोर ॥६४०॥
नहिं दूजो कोउ साह कै, सबरे[1] दल मैं और।
मीर गभरू अनुज मम, जामैं इतनो जोर ॥६४१॥

छप्पय छंद

नाहिं जती बिन जोग सूर बिन तेग[2] न होई।
इते साह कै संग मीर सरभर नहिं कोई॥
करो हुकम मोहि राव साह कौ हनौं ततच्छिन।
मिटै सकल उतपात भाज सब सेन जाय बिन[3]॥
हँसि कही राव हम्मीर तब यह खुदाय दूजो दुनी।
सिर बचै साह छत्र जु उड़ै यह कौतुक कीजे गुनी ॥६४२॥
करि[4] साहिब कौ याद सीस हम्मीरहिं नायौ।
कियौ हुक्म तब[5] राव कापि कै बाँन[6] चलायौ।
अनल[7] पंख मनु परिय टूटि[8] आकास धरन्निय[9]।
भयौ सोर बर सद्द परयौ महि छत्र बरन्निय[10]॥
मुरझाय साह भू मैं परे[11] उड्यौ छत्र आकास दिस।
तब कही उजीर पतसाह सौं तजी ज्याँन परिहरि सु रिस ॥६४३॥
पिछले निमक[12] की दोस्ती, करी जाँन बकसीस।
जो दूजो सर छंडिहै, हनिहै[13] बिस्वा बीस ॥६४४॥
जा गढ मैं महिमा रहै, किम आवैं वह हथ्थ।
अहि ज्यूँ गही छछूँदरी, यों हजरत की गथ्थ ॥६४५॥

छप्पय छंद

कह महरम खाँ बात इसी[14] हजरति सुनि आवै।

---

१ सिगरे। २ तेज। ३ धन। ४ करि जगदीसहिं याद; इष्टदेव निज सुमिरि। ५ हम्मीर। ६ परसु। ७ अनिल। ८ द्रुट्टि। ९ बरन्निय। १० धरन्निय। ११ भुम्मी गिर्‌यउ। १२ निमष। १२ हनै जु। १४ इती।

वह[1] महिमा बर बीर राव का हुकम जु पावै ॥
गहै तुम्हैं ततकाल पाँव लंगर गहि मेलै :
उसै दिली बैठाय जोर मरजात सु पेलै ।
हठ छाड़ि साहि रणथंभ का करो कूच चलिये दिली ।
जै रही राव हम्मीर की पतिसाही मारी गिली ।६४६॥

तब[2] सु साह हठ छाड़ि उलटि दिल्ली दिस आए ।
पिता बैर करि याद साह सुरजन पछिताए ॥
रतन पंच लै संग[3] साह कै पाँव सु लग्गौ ।
तात बैर हिय जानि कोप उर मैं अति जग्गौ ॥
कर जोरि साह सुरजन कहै सुगम दुग्ग मो हथ्थ गनि ।
यह जितो राज[4] रणधीर को मोहिं दैन की बाच भनि ॥६४७॥

दोहरा छंद

हँसि हजरत ऐसे कही[5], सुरजन आगे[6] आव ।
दियौ राज रणधीर कौं, करूँ बड़ा उमराव ॥६४८॥
करि सलाँम सुरजन तबै, बीरा खायौ कोपि ।
आप[7] भवन हिकमति रची, स्वामि धम्म सब लोपि ॥६४९॥
जौंरा भौंरा खास में[8], भरे जु कोरे चाँम ।
फजरिण आनि हाजरि भयौ, सुरजव करी[9] सलाँम ॥६५०॥
हाथ[10] जोरि हम्मीर सों, सुरजन कही सुजाँन ।
मिलो राव पतिसाह सों, गढ़ बीत्यौ[11] सामाँन ॥६५१॥
बिनती[12] सुनत[13] हमीर तब, कियौ कोपि रत नैन ।
छंडि टेक छत्री तनी, रे कपूत गनि[14] ऐन ॥६५२॥

---

१ यह । २ तब अलावदी छंडि हठ दिल्ली दिसि आए । ३ भेंट । ४ राव हम्मीर को । ५ कहै । ६ अग्गु, अग्गै । ७ आय । ८ द्वै । ९ किन्न । १० हथ्थ । ११ बित्यौ । १२ बिन्नति । १३ सुनि । १४ गति ।

चौपाई छंद

कहैं राव हँसि सुरजन सुनिजै ।
मिलो छाड़ि[1] पन[2] यह न गुनिजै ॥
सुनि कापुरुप कपूत अयानै ।
छाड़ि[3] टेक को[4] छत्री जानै ॥६५३॥
फिर हमीर सुज्जन सों पूछी[5] ।
तेरी बात लगत मुहिं छूछो[6] ॥
जौंरा भौंरा खास सु दोई ।
कैसै निबरै जानत सोई ॥६५४॥
कहै साह यह तो है[7] छानी ।
प्रगट देखि निज नैनन जानी ॥
पाथर[8] डारि खास मैं ज़ोई[9] ।
सुनिए स्रवण सद्द[10] सब कोई ॥६५५॥

दोहरा छंद

पाथर[11] डार्‌यौ खास महँ, खुड़क्यौ चाँम[12] अपार[13] ।
जिंस सब्र[14] नीचै रही, राव यहै[15] निरधार ॥ ६५६ ॥
खुड़क्यो[16] सुनि दुव[17] खास को, चढ़्यौ सोच उर राव ।
तब महिमा हम्मीर सों, कहै बचन गहि पाँव ॥ ६५७ ॥

छप्पय छंद

कहै[18] जु महिमा सेख राव मुहिं हुकुम सु दीजै[19] ।
मिलो साह कौ जाय फिकर इतनो नहिं कीजै[20] ॥

---

१ छंडि । १२ प्रन । ३ छंडि । ४ नहिं । ५ पुच्छी । ६ छुच्छी । ७ नहिं । ८ पत्थर । ९ सोई । १० सब्द । ११ पत्थर । १२ चर्म्म । १३ अधार । १४ सबै । १५ येह । १६ खुड़को । १७ दोउ । १८ कह महिमा तब सेख । १९ दिज्जै, दिजिय । २० किज्जै, किजिय ।

अब[1] दिल्ली कौ कूँच[2] साहि कौ तुरत कराऊँ।
तुम राजो रणथंभ जुद्ध मैं सकल सिराऊँ॥
हम्मीर राव हँसि यों[3] कहै[4] सदा कोन जग थिरि रहै।
छिन[5] भंग अंग लालच कहा सुजस एक[6] जुगजुग रहै॥६५८॥

दोहरा छंद

अलादीन पतिसाह सों, गही[7] खग्ग[8] करि टेक।
दुख मैं बिरले मित्त[9] हैं, सुख मैं मित्त अनेक॥ ६५९॥
हठ तौ राव हमीर को, औ[10] रावण की टेक।
सत राजा हरिचंद को, अर्जुन बाण अनेक॥ ६६०॥
गही टेक छाड़ै नहीं, जाभ चौंच करि जाय।
मीठो[11] कहा अँगार कौ, ताहिं चकोर चुगाय[12]॥ ६६१॥

छप्पय छंद

सब[13] बातैं यह कही सेख अपनै घर आयौ।
भई[14] राति सुरजन्न निकट हजरति कै आयौ[15]॥
हाथ[16] जोरि सिर नाय कह्यौ छल राव भुलायौ।
द्वादस कै सामाँन रक्खि गढ़ तोरि हलायौ॥
ये[17] कहिय बात[18] सुर्जन सकल रणत भँवरट्टूट्यौ[19] अबै।
हजरति प्रताप महा बंक गढ़ सहल भयौ[20] सदकै सबै॥६६२॥

दोहरा छंद

चंदकला देवलि कँवरि[21], पारसि महिमा साह।
माँगत साह अलावदी, अबै लै मिलयौ आय[22]॥६६३॥

---

१ अबै दिली। २ कुच्च। ३ इमि। ४ कह्यौ। ५ त्रण। ६ इक्क। ७ गहिय। ८ तेग। ९ मीत जुग। १० अरु। ११ मिट्ठौ। १२ जु खाय। १३ राव बात (वत्त) ये (इमि) कहिय सेख अप्पन घर आयव (आयउ)। १४ भइय रत्ति। १५ धायौ। १६ हथ्थ। १७ यह। १८ बत्त। १९ टुट्यौ। २० लयौ। २१ कुँमरि। २२ साय, आय अंत्यानुप्रास।

छप्पय छंद

सुनि हजरति कै बचन राव हम्मीर रिसाए।
कह्या अलावदी साहि गर्ब्बो कै बचन सुनाए॥
मैं हमीर चहुवाँन साह सौं हम कछु चाहैं।
चिमना बेगम एक[1] और चिंतामणि साहैं॥
पाइक च्यारि पीराँ[2] सहित कहै[3] साह ये दिज्जिये।
छुटै न हठ्ठ हम्मीर को कुच्च दिली कौ किज्जिये॥६६४॥
ये हमीर कै बचन[4] वाँचि[5] पतिसाह रिसानौ।
रे हराँम कमबख्त किसो गढ़ फते करानौ[6]॥
सुरजन झूठौ कहै राव हम्मीर न मानै[7]।
नहिं महिमां कौ देइ[8] मिलै नहिं हठी अमानै॥
यह कही साहि सुरजन्न[9] तब्ब देखिय[10] अब्ब कैसी बनै।
रणथंभ राव हम्मीर जुत मिटै होहि[11] कौतुक घनै॥६६५॥
जब करि बदन मलीन राव रणवासहिं आए।
उठि राणी कर जोरि राव कौं सीस नवाए॥
गढ़ बीत्यौ[12] सामाँन भयौ भंडार सु रीतौ।
* टेक छाड़ि[13] करि सेख देहु अब्ब माँगु न बीत्यौ[14]॥
बिलखाय बदन राणी कहै द्वादस बर्ष जु तुम लरे।
बिप्रीति बुद्धि कौने दई हीन बचन[15] मुख निक्करे॥६६६॥

---

१ इक्क। २ पीरन। ३ कहत राव। ४ ज्वाब। ५ वंचि। ६ करि जानौं। ७ मन्ने। ८ देय। ९ सुरजन तब्बै। १० देखो। ११ हूहि। १२ बित्यौ। १३ छंडि। १४ बीतो; रित्तौ, बित्तौ अंत्यानुप्रास। १५ बत्त।

* कहो देउँ सेख महि मागु न बीत्यौ।

चौपाई छंद

राणी कहै सुनो महरावं।
ऐसे बचन उचित नहिं भावं॥
या तन बचन सार स्तुति भाखै[1]।
तन मन धन दै बचन जु राखै[2] ॥६६७॥
तन धन भ्रात पुत्र अरु नारी।
हरि बिधु त्यागि बचन प्रतिपारी॥
राज पाट अनित्य[3] सु जानो।
रहै नित्य इक सुजस बखानो ॥६६८॥
केकइ ध्वज अधविग्रह दीनौ।
विद्या भवन जोति जस लीनौ॥
भव जो कही सत्य वह जानो।
और न होय कोटि बुधि ठानो ॥६६९॥

दोहरा छंद

कब हठ करै अलावदी, रणतभँवर गढ़ आहि।
कबै सेख सरणे रहै, वहुरौ[4] महिमा साहि ॥६७०॥
सूर सोच मन मैं करो[5], पदवी[6] लहौ न फेर।
जो हठ छंडो राव तुम, उतन लजै अजमेरि ॥६७१॥
सरण राखि सेख न तजो, तजो सीस गढ़ देस।
राणी राव हमीर को[7], यह दीन्हौ उपदेस ॥६७२॥

छप्पय छंद

कहाँ पँवार जगदेव सीस आपन कर कट्यौ।
कहाँ भोज विक्रम सु राव जिन पर दुख मिट्यौ॥

१ भक्खै। २ रक्खै। ३ अनित्त (त्य)। ४ वहुरयौ। ५ करै। ६ पदई। ७ की।

सबाभार नित करन[1] कनक बिप्रन कौं[2] दीनौं[3]।
रह्यौ न रहिए[4] कोय देव नर नाग सुचीनौ॥
यह बात[5] राव हम्मीर सूँ राणी इम आसा कही।
जो भए चक्कवै मंडली सुनो[6] राव दीखै नहीं[7]॥ ६७३॥

दोहरा छंद

धन जोबन नर की दसा, सदा न एक बिहाय।
पाख[8] पाँच ससि की कला, घटत घटत[9] वढ़ि जाय*॥ ६७४॥
राखि सरण सेख न तजो, तजो सीस गढ़ बेगि।
हठ न तजो पतसाह सौं, गहि कर तजो न तेगि॥ ६७५॥
जितो ईस तुम्ह वर दियौ, अब फिर चाहत काय।
करो जंग पतसाह सौं, सनमुख सार समाय॥ ६७६॥
जीवन[10] मरन संजोग जग[11], कौन मिटावै ताहिं।
जो जन्मै संसार मैं अमर[12] रहै नहिं आहि॥ ६७७॥
कोउ सदा नहिं थिर रहै, नर तरु गिरवर ग्राँम।
कर्यौ राज रणथंभ को[13], अपना[14] तन परमाँन॥ ६७८॥
कहाँ जैत कहँ सूर कहँ, कहँ सोमेस्वर राण।
कहाँ गए प्रथिराज जे, जीति साह दल आण। ६७९॥
कहाँ जैत कहँ सूर प्रथि, जिन गहे गौरी साह।
होतव मिटै न जगत मैं, किज्जिय[15] चिंता काह॥ ६८०॥
होतव मिटै न जगत मैं, कीजे चिंता कोहि।

---

१ प्रथि। २ कहें। ३ दिन्नव। ४ रहिहैं। ५ बत्त। ६ कहो। ७ कहीं। ८ पख, पक्ख, पाखि। ९ बढ़त। १० जाँमण। ११ जे। १२ अमर न कोई आहि। अमर न कोउ रहाहि। १३ गढ़। १४ हम अपनै (अप्पन) तप नाँम। १५ कीजे।

* पाखि पाखि ससि कला ज्यों घटत बहुरि बढ़ि जाय।

आसा कहै हमीर सोँ, अब चूको मति सोहि ॥ ६८१ ॥
बिछुरन मिलन सँजोग जग, सब मैं यह बिधि सोह।
आसा कहै हमीर सह, हम तुम भया बिछोह ॥ ६८२ ॥
धन्य बंस जिहिं जन्म तव, राव सराहत ताहिं।
और कौन तुम विन त्रिया, बचन कहै समुझाय ॥ ६८३ ॥
धन्नि पतिव्रता नारि तू, राव सराहत आप।
अवर कौन तुझ बिन त्रिया, कहै बचन बिन पाप ॥ ६८४ ॥
राखि सेख सरणौ तजों, कुल लाजै चहुआंण।
तुम साकौ गढ़[1] कीजियौ[2], निरखि साह नीसाण ॥ ६८५ ॥
लीन[3] परिक्षा बहुत मैं, तू छत्री कुलबाल।
तुव[4] मत मैं देख्यौ[5] सुदृढ़, यही बात[6] यहि काल ॥ ६८६ ॥
सुने राव कै बचन तब, परी धरनि[7] मुरझाय।
निठुर बचन मुख तैं जु कहि, तजि रणवास रिसाय ॥ ६८७ ॥
हम पतिभरता पुरुष बिन, कौन दिसा चित कौ धरैं।
आसा कहै हमीर सोँ, तुम पहला साकौ करैं ॥ ६८८ ॥

छप्पय छंद

खोलि सकल भंडार तुरत[8] जाचिक सु बुलाए[9]।
विप्र भली विध पूजि[10] दिये वंदी मन भाए ॥
भवन तिरिया[11] गढ़ ग्राँम तजे हम्मीर मोह बिन।
मन क्रम बचन सु त्यागि भए निज धर्म्म लीन छिन ॥
ततकाल राव रणबास तजि सभा आय दरबार किय।
आये जु मित्र[12] मंत्री सु बुध सूर बीर आदर सुदिय ॥ ६८९ ॥
कहै राव हम्मीर सुणो चतुरंग महा बर।

---

१ गढ़ मैं करौ। २ क्रिज्जियौ। ३ लिन्न। ४ तुममन। ५ दिख्यौ। ६ बत्त। ७ भुम्मि मुज्झाय। ८ सत्रै, सव्व। ९ बुल्लाए। १० पुज्य। ११ त्रिया। १२ मंत्र।

तुम्हैं रतन की लाज जुद्ध[1] हम करैं नियम करि ॥
तुम सब वात समत्थ[2] करो जैसी तुम भावै ।
रणतभँवर[3] को लोग तहाँ कछु दुःख न दुख नहिं पावैं ॥
गढ़ सजो जाय चित्तोड़[4] को प्रजापालि सुख दिज्जिये ।
सब साँम दाँम दंडह सहित भेद नित्य[5] सब किज्जिये ॥ ६९० ॥
कहत तबै[6] चतुरंग उचित[7] यह हम कौं नाहीं ।
आप[8] रहो हम[9] रहैं लरैं हम जस कै ताहीं ॥
कहे राव यह प्रजा सकल चित्तोड़[10] समावै ।
यह परिकर सब जितो राखि[11] आपन[12] जु सुहावै ॥
चतुरंग राव ले रतन कौं गढ़ चित्तोड़[13] सुचल्लिये ।
प्रथम जाय अल्हण सुपुर करुणाजुत डेरा किये ॥ ६९१ ॥

दोहरा छंद

पंच सहस चतुरंग लै, चले[14] रतन कै साथ ।
तब हमीर दरबार किय, कही सबन यह गाथ[15] ॥ ६९२ ॥
जीवै सो घर भुग्गिवै[16], जुझ्झे[17] सुरपुर वास ।
दोऊ जस कित्तो[18] अमर, तजो मोह जग आस ॥ ६९३ ॥
जीवन चाहत जो कोऊ ते सुखैन घर जाहु ।
कहै राव सबकै सुनत, हम सँग मरन उछाह ॥ ६९४ ॥

छप्पय छंद

सुनत बचन ये सेख भवन अपने कौ आए[19] ।
कुटम[20] सेख करि खेस करद लै अदल पठाए ॥

---

१ बुद्ध । २ समर्थ । ३ यह परिकर सब जितौ, राखि आपन जु सुहावै । ४ चीतोड़ । ५ नीति । ६ तब्ब । ७ उदित । ८ अप्प । ९ सब । १० चीतोड़ । ११ रक्खि । १२ अप्पन । १३ चीतोड़ । १४ चलिय, चल्यउ । १५ सत्थ, गत्थ, अंत्यानुप्रास । १६ भोगिवै । १७ जूझै । १८ कीरति । १९ कै धायौ । २० कुटम खेसि सब सेख ।

कहै राव सों बचन नैन जल सों भरि आए।
सुख संपति रणथंभ त्यागि करिये मन भाए ॥
सुर नर कायर[1] सूरमा कहै सेख थिर नहिं कोइ।
हम्मीर राव चहुवाँन[2] अब करै साहि सों जँग सोइ ॥ ६९५ ॥

दोहरा छंद

जीवन कौ सब कोउ कहैं, मरन कहै नहिं कोय।
सती सूरमा पुरुष को[3], मरतहिं मंगल होय ॥६९६॥

छप्पय छंद

केसर सौंधै बसन सकल उमरावन सज्जैं।
अलादीन पतिस्याह फेरि कहि कब कब गज्जैं ॥
सहस गऊ करि दाँन राव सिर मौर सु बंध्यौ।
करथव[4] जुद्ध को साज छत्र कुल सुजस सु संध्यौ ॥
निस्साँन[5] पाँन वज्जे सु घन हर्ष[6] वीर बानै पढ़े।
चहुवाँन राव हम्मीर तब जुद्ध काज चौरै चढ़े[7] ॥ ६९७ ॥

दोहरा छंद

पंच सहस रतनेस सँग, गढ़ चीतोड़[8] पठाय।
पंच सहस रणथंभ गढ़, द्रढ़ रावत रह आय ॥ ६९८ ॥
असी सहस सेना सकल, चढ़ी राव कै संग।
माया मोह बिरक्त मन, जुरन साह सों जंग ॥ ६९९ ॥

छप्पय छंद

कमध्वज कूरम गोड़ तँवर परिहार[9] अमानो।
पौरच बँस पुँडीर वीर चहुवाँन सु जानो ॥
जद्दव[9] गोहिल धीर चढ़े गहिलोत गरूरं।

---

१ कातर। २ पतिसाह सों करो जँग अद्भुत सोइ। ३ कै।
६ करिव। ४ नीसाँन। ५ हरषि। ६ कढ़े। ७ चित्तोड़। ८ पड़िहार।
६ जादम।

सैंगर और पँवार भिल्ल[1] इक भोज मरूरं॥
छत्तीस वंस छत्री चढ़े जिम पावस बद्दल बढ़े।
हम्मीर[2] राव चहुवाँन तव जंग कज्ज[3] चौरै कढ़े॥ ७०० ॥
जेठ मास बुधबार सप्तमिय पक्ख[4] अँध्यारी।
करि सूरज को नमन राव कर खग्ग[5] सम्हारी॥
हरषे सुर तेंतीस और हरषे जु कपाली।
नारद सारद हरषि वीर बावन जुत काली॥
हरषी जु हरषि[6] अच्छर[7] हरषि[8] जुग्गिन वृंद सु नच्चियव।
जंबुक कराल गिद्धनि हरषि सूर हरषि हिय रच्चियव ॥७०१॥

हनूफाल छंद

सजि सूर राव हमीर। बिरदाय[9] वीर सु धीर॥
जनु छत्र कुल का लाज। रन सिंधु की मनु पाज॥ ७०२ ॥
दातार सूर सु अंग। निस द्यौस जुट्टत जंग॥
धरि स्वामि धर्म्म सुरंग। वढ़ि[10] रहै तिल तिल अंग॥ ७०३॥
गढ़ कोट औटत एक। तोरंत करि करि टेक॥
सिर खौरि चंदन सोह। रबि वंदि वंदि सुलोह॥ ७०४॥
गति उद्ध[11] कुद्दत भट्ट। ज्यौँ[12] खेलन उतरे नट्ट॥
अँग बर्म्म चर्म्म सु कीन। सिर टोप औप सु दीन[13]॥ ७०५॥
दस्ताँन रच्चि सु हत्थ। करि चहै गत्थ[14] अकत्थ[15]॥
बहु न्हाँन दाँन सु कीन। गो स्वर्ण बिप्रन दीन[16]॥ ७०६॥
रबि संभु विष्णु सुपुज्जि[17]। मन साह सैं करि दुज्जि[18]॥

---

१ भील। २ दल हरषि राव हम्मीर कै साह जीव अचरिज बढ़े। ३ काज। ४ पाख। ५ तेग। ६ हूर। ७ अच्छरि। ८ सकल। ९ रन। बिरदार। १० रहिव। ११ उर्ध। १२ जिम खेल खिल्लिउ। १३ किन्न, दिन्न अंत्यानुप्रास। १४ गत्थ। १५ अगत्थ। १६ किन्न, दिन्न अंत्यानुप्रास। १७ पूजि। १८ दूजि।

आचार भार फवंत । दोउ पच्छ सुद्ध सुभंत ॥ ७०७ ॥
बहु बंदि बिरदत जाय । बढ़ि द्वंद हर्ष सु आय[1] ॥
असमाँन लगि[2] सु सीस । झलहलैं तेज सु दीस ॥ ७०८ ॥
सँग चढ्यव[3] वंस छतीस । संग्राँम अचल सु दीस ॥ ७०९ ॥

दोहरा छंद

स्वामि धर्म्म धारैं[4] सदा, माया मोह बिरक्त ॥
दाँन कृपाँन उदारमति, अचल अद्रि हरभक्त ॥ ७१० ॥
साजत साज सुबाजि सजि, कीन[5] बनाव सु ऐन ॥
चंचल चपल बिचित्र गति, राग बाग लखि सैन ॥ ७११ ॥

छंद हनूफाल

तब[6] साहनी नृप बोलि । हय सहस सोलह खोलि ॥
सब वंस उच्च सु बाज[7] । लखि[8] रूप मोहत राज[9] ॥ ७१२ ॥
मनु उच्चस्त्रव कै बंधु । आबर्त्त चक्र सु कंधु ॥
तुरकी हजार स पाँच । मग चलत करत सु नाच[10] ॥ ७१३ ॥
ताजी हजार सु रुद्र । गुन सील रूप समुद्र ॥
सब वीर ताजि[11] कुलीन । नृप बंटि[12] बाजि सु दीन ॥७१४॥
बनि जीन जटित जराव । नग हीर पन्न सुहाव ॥
सिर बनिय कलँगिय ऐन । मनु सजे बाजि सु मैन ॥ ७१५ ॥
गजगाह बाह अथाह । जो करैं[13] जल पर राह ॥
नग मुक्त माल सुयाल । गुम्फी[14] सु रुचि[15] बहु काल ॥ ७१६ ॥
मखमलिय सिगरे साज । मनु[16] सबै रबि को[17] बाजि ॥
जिन परिय पक्खरि अंग । लख भ्रमत दिट्ठि[18] अभंग ॥ ७१७ ॥

---

१ जाहिं आहिं, अंत्यानुप्रास । २ लग्गिय । ३ चढ़े । ४ धारहिं । ५ किन्न । ६ तब साह लिय नृप बुल्लि । ७ बाजि । ८ लख । ९ राजि । १० पच्च, नच्च अंत्यानुप्रास । ११ धीर । १२ बाँटि । १३ करहिं । १४ गूँथी । १५ सरचि । १६ सव्व । १७ कै । १८ दीठि ।

बहु सिरी सीसन सोहि । उड़ि चलैं भरि जो कोहि[1] ॥
गति चलैं[2] चंचल एमि । जिनि पवन पहुँचै केमि ॥ ७१८ ॥
धर धरत सुम यों मानि । मनु जरत अग्गि[3] सुजानि ॥
जल चलैं थल जिमि वट्ट[4] । लखि उड़ैं ओघट घट्ट[5] ॥ ७१९ ॥
मृग गहत डार कमाँन । नहिं पच्छि पावहिं[6] जाँन ॥
गति पवन देखि लजात । जनु मुकुर क्रांति सगात[7] ॥ ७२० ॥
दोउ बंस सुद्ध प्रकास । बड़ि डील पील सु जास ॥
यहिं त्रिधि सु लिन्ने[8] मौलि । नग हेम सर भर तौलि ॥ ७२१ ॥
कोउ वने कच्छिय ऐन । सब[9] उड़ै पच्छिय गैन[10] ॥
ऐराक बंस सुसील । गुन भरे झलकत डील ॥ ७२२ ॥
खंधार उपजि स सुद्ध । जनु लखत रूप सु उद्ध ॥
काबलिय डील अनूप । तिहिँ देखि[11] मोहत भूप ॥ ७२३ ॥
अरू चीन कै जु नवीन । ताजी सगुन गन लीन ॥
बर[12] बीर अनक जु डील । जो लिये साटैं[13] पील ॥ ७२४ ॥
रँग रंग अंग बनाव । सो लिये पंकति[14] दाव ॥
सिरगा सुरंग समंद । संजाफ सुरख अमंद ॥ ७२५ ॥
कुम्मैत कुमद कल्याँन । मोती सु मगसी आँन ॥
सञ्जारु[15] सब रँग भौंर । चंपा सु चीनिय चौंर ॥ ७२६ ॥
अबलख सु गरड़ा रंग । लक्खी जु अतिहि[16] उमंग ॥
हंसा हरेई बाजि । तीतुरिय ताँबी साजि ॥ ७२७ ॥
भिन भिन्न टुकड़ी साजि । चढ़ि चलिय रावत गाजि ॥
चहुवाँन राव हमीर । रँग रंग रचन सुधीर[17] ॥७२८॥

---

१ सोह, कोह अंत्यानुप्रास । २ चलहिं । ३ अग्नि । ४ बाट । ५ घाट । ६ पावैं । ७ सतात । ८ लीने । ९ सँग । १० औन, गौन, अंत्यानुप्रास । ११ दिक्खि, पिक्खि । १२ अब्बिय (अरबिय) अनोखे डील । १३ सट्टैं । १४ लगे पंकज । १५ सु । १६ ऐरि । १७ रण रंग रच्चन धीर ।

छंद त्रोटक

गजराज सबै सत पंच सजे ।
गिरगात[1] मनो घन भद्द गजे ॥
सु महावत जंत्रन मंत्र रजे ।
करि बंधन[2] पीर सुधीर कजे ॥७२९॥
परि पांय सजाय निकट्ट खरे ।
पग[3] खोलि जंजीर सुबीर अरे[4] ॥
बिरद्दाय भले मन हत्थ कियं ।
असनाँन कराय सिँगार लियं ॥७३०॥
तन तेल सिँदूरन चित्र कियं ।
सिर चंद अमंद सुरंग दियं ॥
जनु कज्जल बद्दल पावसयं ।
तड़िता घन[5] चंद कि मावसयं ॥७३१॥
सजि डंबर अंबर सो लगियं ।
घन घोर घटा सु पटा गिनियं[6] ॥
कसियं हवदा ध्वज धार वली ।
मनु पंगति पब्बय की जु चली ॥७३२॥
बर्षा घन घोर सु जानि परै ।
कवि रूप स्वरूप समाँन करै ॥
बहु बद्दल बारन बृंद बढ़े[7] ।
ध्वज वैरख लाल निसाँन कढ़े ॥७३३॥
तड़िता घन मैं दमकंत मनो ।
वगपंति सुई गजदंत भनो ॥
गरजै बहु गाज सु गाज मनं ।

---

१ गिररात । २ बंदन । ३ पदपाय सुजाय ४ खुल्लि । ५ धनु । ६ गजिय । ७ चढ़े ।

मिलियौ ससि सूरज गौंन भनं ॥७३४॥
बर्षें हद मद्द सुभद्द सदा ।
सु बहैं बहु भाँति सुभद्द[1] मुदा ॥
सिर ढाल ढलक्कत एमि लसैं ।
ससि जीव धरासुत एक बसैं ॥७३५॥
अधधुंध चलै मग उम्मगयं ।
मनु काल कराल उठे जगयं ॥
चरखी बहु थाँन जु नेज लियं ।
धरि सेन सुअग्र[2] सुभाय कियं ॥७३६॥
पद लंगर ओर जँजीर[3] जुटे ।
नहिं खुल्लत आदुव न्याय लुटे[4] ॥
बल रासि अमाँन[5] सुकोहभरे ।
नन चालत[6] मग्ग अमग्ग अरे ॥७३७॥
बहु दुंदुभि घोर सुनैं स्रमनं[7] ।
बिरदाय सुनंत करैं गमनं ॥
सिर चौंर दुरंत इसे दरसैं ।
तम दाबि[8] दिनेस मरीचि लसैं ॥७३८॥
चतुरंगनि राव हमीर तनी ।
सब भाँतिन सोभ अनंत बनी ॥
सब रावत आय जुहार कियं ।
चहुवाँन सबै सिर भार दियं ॥७३९॥
धरि अग्र[9] सु पिल्लन[10] डिल्ल[11] पिले ।
बहु चंचल बाजिन लाज[12] खिले ॥

---

१ नद्द । २ अग्ग । ३ जंजिर जोर जटे । ४ लुटे । ५ अमावन । ६ चल्लत । ७ स्रवनं । ८ दब्बि । ९ अग्ग । १० पीलन । ११ डील । १२ साज ।

बहु दुंदुभि बाजत[1] घोर घनं ।
पट गोमुख भेरि सु चंग मनं[2] ॥७४०॥
सहनाइय सिंधुर राग ररं ।
बिरदावत बंदि कबिंद भरं ॥
उमगे चहुवाँन बिकट्ट दलं ।
अप अप्प सु बीर कराय हलं ॥७४१॥
चहुँ ओर कितेक सु पुंगल कै ।
करिहा[3] सजि संग चले बलकै ॥
तिनकी सज मानव चित्र रचे ।
धरि दूर नजीक करै सु रचै ॥७४२॥
असवारिय सज्ज बनी तिनतैं ।
खबरैं बहु लेत घने बन तैं ॥
बहु तोप जलेबिन[4] अग्र बनी ।
सब सिंदुर लेप करी जु घनी ॥७४३॥
तिन ऊपर बैरख बृंद सजी ।
जम की मनु जीभ अनेक गजी ॥
बलि देत चलै अरिबृंद भखै ।
मद बक्कर भक्खर[5] कोप धखै ॥७४४॥
हथनारिं जँबूर सु च्चहरयं ।
छुटिया तुबकै बहु अद्दरियं ॥
धरि अग्र सबै चहुवाँन चढ़े ।
बहु बंदि कबिंद सुछंद पढ़े ॥७४५॥
इहिं भाँति उभै दल कोप कियं ।
हरखे बर वीर सुधीर हियं ॥७४६॥

---

१ बजत । २ हनं । ३ करहा (ऊँट) । ४ जलेवय, अग्ग । ५ भक्खत ।

दोहरा छंद

स्रवण सुनै बर बीर रस, सिंधव राग अपार ।
हरखि उठे दोउ तिहिं समें, मिलन बीर स्त्रिंगार ॥७४७॥

छंद हनूफाल

मिलनै सुबीर स्त्रिंगार । दुहु हरष हिये अपार ॥
बर बीर हरखेउ अंग । उत अच्छरी[1] सु उमंग ॥७४८॥
तन उभै मज्जन कीन । भये दाँन माँनस लीन ॥
तहाँ कौच वीर नवीन । रचि बाल बसन प्रबीन ॥७४९॥
इत टोप बीरन सीस । कसि कंचुकी तिय रीस ॥
बहु अस्त्र बंधि सु बीर । अच्छरि सु भूषण हीर ॥७५०॥
इत सूर खड्ग सु लीन । उत बाल अंजन दीन ॥
इत ढाल बीरन बंधि । ताटंक श्रवणनि संधि ॥७५१॥
सामंत बंधि कटार । अच्छरी तिलक सुढार ॥
मुख पाँन ज्वाँन सुभाव । तिय चंप दंत जराव ॥७५२॥
इत कसी सूर कमाँन । दृग बाम चमक निदाँन ॥
धरि बीर कर दस्ताँन । अच्छरिय महँदी पाँन ॥७५३॥
बरच्छी सु लीनिय सूर । बर माल कीनिय हूर ॥
सिरपेच सूर जराव । तिय सीस फूल सुहाव ॥७५४॥
इत तबल तौरा नेत । तिय हाव भाव समेत ॥
रचि सूर सेलिय अंग । अच्छरिय हार उमंग ॥७५५॥
कसि तून वीर स जंग । अच्छरिय नैन अपंग ॥
कर केहरी नख सूर । उत पानि पानि सहूर ॥७५६॥
लिय बीर तुलसिय माल । बर माल लीन स बाल ॥
कसि सूर मोजा पाँय । नूपूर सु बाल सुहाय ॥७५७॥
कसि सूर बाजि सु तंग । बिम्माँन बाल उमंग ॥
इहि भाँति सूर सबाल । उतकंठ मिलन तिकाल ॥७५८॥

१ अपछरी ।

दोहरा छंद

उमगि उमगि हम्मीर भट, चले सकल करि चाव।
च्यारि अनी चतुरंग की, चढ़े संभरी राव ॥७५९॥
उतै साह कै मीर भर, खाँन ओर उमराव।
रणतभँवर छिक्किय[1] हरषि, नाना करिव बनाव ॥७६०॥
च्यारिं दरा घाटी जिती, कीने घाटारोह।
कालं रूप कोपे[2] तुरक, बाँन बिकट जंसोह ॥७६१॥

भुजंगप्रयात छंद

चढ़े बीर कोपे दुहूँ ओर धाए।
मनो काल कै दूत अद्भुत्त आए॥
इतै राव हम्मीर कै बीर छुट्टे।
उतै मीर धीरं गहीरं सु जुट्टे ॥७६२॥
उड़ी रैन सैनं न दीखंत भाँनं।
दुहूँ ओर घोरं सु बज्जे निसाँनं॥
छुटै[2] तोप बाँनं दुहूँ ओर जोरं।
धरा अंमरं बीच मच्चे सु सोरं ॥७६३॥
उठी ज्वाल माला धरा पै उपट्टे।
धुवाँ धोर घोरं सु जोरं प्रगट्टे॥
मनो दोय सिंधू तजैं आय वेला।
प्रलेकाल कै काल कीनो समेला ॥७६४॥
दुहूँ ओर घोरं सु गोलं बरक्खैं।
मनो मोघ[3] बोला अतोलं[4] करक्खैं॥
उड़ैं अग्रपब्बय ढहैं गड्ढ कोटं।
परैं गज्ज बाजं धरा धूरि लोटं ॥७६५॥
प्रलै पावकं जानि उट्ठी लपट्टैं।

---

१ छेकिय, छिक्यउ। २ कुप्पिय। ३ मेघ। ४ अतुल्लं।

जरं उज्झरं सूझरं[१] यों झपट्टं ॥
लगे गोल मैं गोल गोला सु गज्जैं ।
भए वार पारं उपम्मा सु रज्जै ॥७६६॥
मनो स्याँम कै वास है वारपारं[२] ।
चहूँ ओर राजंत है चारु वारं ॥
रहे गिद्ध तामैं घने बैठि अद्दं ।
करै ध्यान बैठे गुफा मैं मुनिद्दं ॥७६७॥
उड़ै साथि गोलाँन कै बीर ऐसैं ।
मनो फाटिका[३] तैं उड़ै नट्ट जैसैं ॥
चलै तोप जोरं करैं सोर भारी ।
परै बिज्जुरी सी घने[४] एक वारी ॥७६८॥
छुटै एक वारै[५] घनी चादरं[६] यों ।
मनो भार भूजै बनै यों घनै यों ॥
बँदूकैं हजारं चलैं एम्भि राजैं ।
मनो मेघ गोला परैं भूमि गाजैं ॥७६९॥
चलैं बाँन बेगं मचै सोर भारी ।
मनो आतसंबाज खेलंत कारी ॥
छुटैं बाँन कम्माँन ज्यों मेघ धारा[७] ।
लगैं बाज गज्जं हुवै वारपारा ॥७७०॥
मनो नाग छौना उड़ैं होड मंडी ।
डसैं अग अंग करैं[८] सेन खंडी ॥
बहैं तोमरं सेल औ सक्ति ऐनं ।
करैं वार पारं बहैं[९] उच्च वैनं ॥७७१॥
वहैं खड्ग[१०] बेहद्द देखंत सूरं ।

---

१ सुज्झरं । २ आरपारं । ३ फाटिकं । ४ घनी । ५ बारं । ६ चद्दरै । ७ धारं, पारं अंत्यानुप्रास । ८ अरी सेन । ९ बकैं । १० खग्ग ।

करैं दोय टूकं सझुक्कै[1] समूरं ॥
बहैं तेग कंधं परैं गज्जराजं ।
लगे आयुधं यों झरं सर्ब साजं ॥७७२।
कटैं कंगलं अंग ओ जीन वाजी ।
तबै सूर[2] रीझैं करैं मालसाजी ॥
कटारी बहैं वारपारं निहारैं[3] ।
मनो स्याँम उर माँझ कौस्तुभ सम्हारैं ॥७७३॥
कहूँ षंजरं पिंजरं बेगि फारं ।
मनो हाथ वाला अहारी निकारं ॥
छुरी हत्थ जोरं करैं सूर हाँकैं ।
कहूँ मल्ल युद्धं करैं बीर खाँकैं ॥७७४॥
परैं सीस भूमैं[4] उठैं रुंड[5] घोरं ।
दुँहू सेन देखंत कौतुक्क जोरं ॥
किती अंत उरझंत लटकंत[6] भूमैं ।
किते घायलं घाव लग्गे सु भूमैं[7] ॥७७५॥
भरे योगनी[8] पत्र पीवंत पूरं ।
परैं ज्यों मलेच्छं बरैं आय हूरं ॥
किलक्कैं जु काली हँसैं वार वारं ।
करैं भैरवं घोर सोरं अपारं ॥७७६॥
भगी साह की सेन देखंत दोई ।
कहैं बैन कोपं बकं सीस सोई ॥
किते भागि जैहो अरे मूढ़ आजं ।
जिते[9] बीर चहुवाँन हम्मीर गाजं ॥७७७॥

---

१ टूकैं सु भूकैं, टुक्कं सु झुक्कं । २ शंभु रीझैं । ३ बिहारैं । ४ भुम्मी । ५ सीस । ६ लरकंत । ७ घूमैं । ८ जुग्गनी । ९ जितैं चाहुवाँनं हमीरं सुगाजं ।

भ्रम्यौ साह संगं तज्यौ जंग भारी ।
कहै साह उज्जीर सोँ जो हँकारी ॥७७८॥

दोहरा छंद

कहा राव हम्मीर कै, सूर वीर बलवाँन्न ।
सबै[1] सु खाय हमारिये, जग समै प्रिय प्राँन ॥७७९॥

छप्पय छंद

कहै साह उज्जीर सुनो आपन[2] मन लाई ।
जिते राव कै बीर सबै[3] छत्री प्रन[4] पाई ॥
लरत भिरत नहिं टरत करत अद्भुत रस सीतो[5] ।
करत जंग अनभंग अंग छिन भंग है नीतो[6] ॥
नहिं सहत सार आपण[7] सपन[8] सबै मीर उमराव मर ।
किज्जे सु कौन मत तंत अब कहो बुद्धि आपन[9] समर ॥७८०॥
कहै उजीर[10] कर जोरि सुनो हजरत यह किज्जे ।
च्यारि सेन चतुरंग संग नामी कर[11] दिज्जे ॥
एक[12] सेन दिवान्न[13] एक बकसी भड़ वंके ।
एक[14] गोल सोहिं जानि आप[15] एकन कर हंके ॥
यह भाँति सेन चतुरंग के अनी च्यारि करि जुट्टिए ।
हम्मीर राव चहुवाँन[16] तैं फते आप लहि हट्टिए[17] ॥७८१॥

दोहरा छंद

करि करि मंत्र उजीर[18] तब, चढ़े संग लै मीर ।
च्यारि अनी करि साहि दल, जुरे जंग सब[19] बीर ॥७८२॥

---

१ सर्वसु । २ अप्पन । ३ धर्म । ४ पन । ५ जीते, जित्ते, सीत्तो । ६ नित्ते, जित्तो । ७ अप्पन । ८ सयन । ९ अप्पन । १० कह वजीर । ११ नर । १२ इक्का । १३ दीवाण, दिब्बाँन । १४ इक । १५ अप्पन इक्कन करि हंक्के । १६ के । १७ खुट्टिए । १८ वजीर । १९ फिरि ।

त्रिभंगी छंद

करि मंत्र असेसं सूर सु देसं, बंके वैसं सज्जायं।
हय गय[1] चढ़ि बीरं फिरे सुमीरं, धरि धरि धीरं लज्जायं॥
गजराजन सब्जे अग्गौ रज्जें, बीरं गब्जे लखि लज्जैं।
नीसाँन[2] फरक्कैं धीर धरक्कैं, हर हर बक्कैं गलगज्जैं॥७८३॥
दोउ[3] ओर उमग्गैं[4] समर सु रड्डुं[5], बढ़ि बढ़ि तडैं नख[6] खडैं।
बहु तोपन छुट्टैं बीर अहुट्टैं, फिरि फिरि जुट्टैं बल चंडैं॥
बाजे बहु बज्जैं जनु घनु गज्जैं, सूर समज्जैं बल रज्जैं।
पद रुथ्थ[7] पतालं अरि उर सालं, उट्टत[8] भालं रण सज्जैं॥७८४॥
छुट्टैं बहु बाँनं संधि[9] कमाँनं, अरि उर प्राँनं बहु कढ्ढैं।
लग्गैं उर सेलं अरि दल पेलं, बिग्रह झेलं बल ठढ्ढैं॥
किरवाँन दुधारं हय गय पारं, सूर सँहारं उर फारं।
करि जोर कुठारं बहुत[10] करारं, भिरत जुझारं रनभारं॥७८५॥
गिद्धिय[11] पल भक्खैं रत[12] बहु चक्खैं, जंबू अक्खैं हिय हर्षे।

... ...

बहु पत्र भरावैं मिलि मिलि गावैं, धरि धरि धावैं मन भावैं।
पल अस्ति चचोरैं बसन निचोरैं, लुथ्थि टटोरैं गुन गावैं॥७८६॥

दोहरा छंद

यहिं बिधि दुहुँ दल आहुरे, भिरे[13] दोउ दल ऐन।
रहे अहल चहुवाँन हू, खाँन सकल हठि सैन॥७८७॥
अबदल मीर जु साहि कै, परे खेत मैं[14] धाय।
पकरै राव हमीर कौ, पकरै[15] अस पति पाय॥७८८॥
ल्याऊँ गहि हम्मीर कौ, रीझ दिज्जिए मोहिं।

१ गज। २ निस्साँन। ३ दुहुँ। ४ उमड्डैं। ५ डट्टैं। ६ तंडैंतन खंडैं। ७ रूथ, रुप्पि। ८ उद्दत। ९ संगि। १० बहत। ११ गिद्धनि। १२ रत्तहु। १३ भिरंग, भिरिउ। १४ पै। १५ परसै।

जितनो हिंदू को वतन, पाऊँ अब कर जोहिं ॥७८९॥
बीस सहस अबदल पिले, इत हमीर - कै - वीर।
आप[1] आप जय स्वामि की, चाहत मंगल धीर ॥७९०॥

छंद रसवाल

मीर पिल्ले तवैं, वीर अवदुल जवै।
कहै बैन वाहं, सुनो आप साहं ॥७९१॥
गहूँ राव ल्याऊँ, रणत्थंभ पाऊँ।
कमाँनस्सुग्रीवं, गरै डारि जीवं ॥७९२॥
लगूँ साह पग्गैं, उठै कोपि जग्गैं।
हजारं सु बीसं, नमाए सु सीसं ॥७९३॥
गजं साज[2] तीसं, करै जीव रीसं।
उतैं राव कोपे,[3] पिले बीर ओपे ७९४॥
उठी बंक मुच्छं, लगी जाय चच्छं।
मनो बीर मग्गै, अकासं सु लग्गै ॥७९५॥
मिले बीर दोऊ, करैं जोर सोऊ।
भिरै गज्जि गब्जं, बजे बीर बब्जं ॥७९६॥
तुरंगं तुरंगं, मचे जोर जंगं।
पयद्दं पयद्दं, बकै कोप वद्दं ॥७९७॥
भभक्कंत बाँनं, उड़ै लग्गि ज्वाँनं।
लगै तेग सीसं, उभै फाँक दीसं ॥७९८॥
लगै जम्म दड्ढं, करै पाँन गड्ढं[4]।
परी लुत्थि जुत्थं, करी जो अकत्थं ॥७९९॥
करी जूह लोटैं, पवै जानि कोटैं[5]।
तुरंगं धरन्नी, सु लड्ढै बरन्नी ॥८००॥

---

१ अप्प अप्प । २ सज्ज । ३ कुप्पे । ४ दाढं, गाढं अंत्यानुप्रास ।
५ लुट्टैं, कुट्टैं ।

नच्चैं रुंड[1] बीरं, धरन्नी सरीरं[2]।
सिरं हक्क[3] मारैं, धरैं अत्र धारैं ॥८०१॥
उरज्झंत अंतं, मनो ग्राह तंतं।
गहैं अंत चिल्ली[4], अकासं समिल्ली ॥८०२॥
मनो बाल मड्डी[5], उड़ावंत गुड्डी।
उड़ैं[6] स्रोण छिच्छं, फुँवारे[7] सु अच्छं ॥८०३॥
बहै स्रोण नद्दं, मनो नीर भद्दं।
भरैं पग्ग हथ्थं, तरब्बूज मथ्थं ॥८०४॥
पलक्की चमची, उठैं बीर नच्ची।
कियौ अट्टहासं, सुकाली प्रकासं ॥८०५॥
जहाँ छेत्रपालं, गुहैं संभु मालं।
भखै गिद्ध बोटी, फटै तासु पोटी ॥८०६॥
षट सहस सूरं, बरे जाय हूरं।
गजं तीस पारे, पहारं करारे ॥८०७॥
सतं दोय बाजी, परे खेत साजी।
तहाँ पद्म सैनं, रहे देखि[8] नैनं ॥८०८॥
तबै सेख सीसं, नवाए सरीसं।
हमीरं सुरावं, कहैं बैन चावं ॥८०९॥
दुहूँ सैन मध्ये, महिम्मा सु बध्ये।
कहैं उच्च बाचं, सुनो राव साचं ॥८१०॥
लखो हथ्थ मेरे, बदे बैन टेरे।
सुनो साहि बैनं, लखो अप्प[9] नैनं ॥८११॥
खरो मैं जु खूनी, रहे क्यों ज मूनी।
गहो क्यों न अब्बं, कहैं बैन तब्बं ॥८१२॥

---

१ रुद्र। २ सुजीरं। ३ हाका। ४ चिल्हीं, मिल्हीं-अंत्यानुप्रास। ५ लड़की। ६ उढैं। ७ फुहरैं, फुहारैं। ८ दिक्खि, पिक्खि। ९ आप।

यहीं सेस सीसं, रह्यौ मैं जु दीसं ।
करो सत्य बाचं, ततो आप साचं ॥८१३॥
तबै पातसाहं, खुरासाँन नाहं ।
करे[1] कोप पिल्लं, तहाँ सेख मिल्लं ॥८१४॥
कहैं साह बैनं, सुनो सर्ब सैनं[2] ।
गहै सेख ल्यावै, इतो हस्म पावै ॥८१५॥
जु बारा हजारं, मनं[3] सब्ब भारं ।
नोबति निसाँनं, अरू तेग माँनं ॥८१६॥
सुने बैन ऐसे, खुरासाँन रैसे ।
हजारं सतं स, निवाए[4] सु सीसं ॥८१७॥
सदक्की जवाँनं, पिले सेख पानं ।
तबै सेख धाए, राव कौ सीस नाए ॥८१८॥

दोहरा छंद

करि सलाँम हम्मीर कौं, सेख लई बड़ बग्ग ।
दुहूँ[5] सेन देखत[6] नयन, रिस करि कड्ढे[7] खग्ग ॥८१९॥

चौपाई छंद

कहे साहि सुनि सदक्की बैनं ।
यह कुट्टन[8] कौ गहो सु ऐनं ॥
जीवत पकरि याहिं अब लीजै[9] ।
मनसब द्वादस सहस करीजै[10] ॥८२०॥
सद्दकि[11] संग मीर खुरसानी ।
तीस सहस चढ़ि चले अमानी ॥
गहन सेख महिमा कै काजै ।

---

१ करी कुप्पि । २ एनं । ३ मनो । ४ नमाए । ५ दोउ । ६ दिक्खत, पिक्खत । ७ कड्ढिय, कढ्ढे । ८ कुट्टम । ९ लिज्जिय । १० करिज्जिय, जुकिज्जिय । ११ सदकी ।

कुप्पिय[1] मीर खेत चढ़ि बाजै ॥८२१॥
इतै सुसेख राव पद बंदे ।
गहै तेग मन माहिं अतंदे ॥
इतै सेख सदको उत आए ।
आप[2] आप जय सद्द सुनाए ॥८२२॥
कहै[3] सदक्कि सुनि साह सुजाँनं ।
ठठा भखर वसि करिए पाँनं ॥
कहा सेख हम्मोर सु रावं ।
उठे युद्ध कौं करि जिय चावं ॥८२३॥

छप्पय छंद

जुट्टे बीर दुहुँ जंग अंग अनभंग महाबल ।
चढ़े जाँन आमाँन बढ़े निस्साँन[4] बरद्दल ॥
करि कमाँन करि पाँन काँन लौं करिखह रक्खे ।
धरि नराच गुन राखि धाव करि वेगि बरक्खे ॥
निज संग बीर सत पंचजुत सेख भेखरो यह धरिव ।
खत खुरासाँन षट सहस ल सदकी सद हांकी करिव ॥८२४॥
तेग वेग बहु कढ़ी मनो पावक्क लपट्टो ।
करी बाज नर जुट्ट[5] कटे सिर पात्र उपट्टो ॥
परै धरनि धर नचै उदर काट अंत भभक्कै ।
चली रक्त धर धार लुत्थ परि लुत्थ धधक्कै ॥
षट सहस खिसे षुरसाँन दल लिय निसाँन बानै सुबर ।
किए नजर राव हम्मीर कै फबी फते महिमा समर ॥८२५॥
आइ सेख सिर नाय राव कूं बचन सुनाए ।
धनि छत्री चहुवाँन सरन पन जग जस छाए ॥

---

१ कोपे । २ अप्प अप्प । ३ कहै सदक्की साह सुजाँनं ।
४ नीसाँन । ५ जुट्टि कट्टि ।

तेज राज धन धाँम तात तिय हठ नहिं छंडे।
राखि[1] धर्म्म द्रढ़ सत्य कीर्ति जस जुग जुग मंडे॥
अरि नीर नैन महिमा कहै अब जननी कब जन्म दे।
जब मिलों राव हम्मीर तुम बहुरि समै हैहै कदे॥८२६॥
कहै राव हम्मीर धीर नहिं हीन उचारो।
सूर न करैं सनेह देह छिन भंग विचारो॥
बिछुरन मिलन संजोग आदि ऐसी चलि आई।
ज्यों जीवन[2] त्यों मरन सकल[3] बेदन यह[4] गाई॥
कीजे[5] न भम[6] अनभंग चित मिलैं सूर कै लाक सब।
इम तुम जु साह बहुरों[7] तथा ह्वैहि एक[8] तन तजि सुअब॥८२७॥
तज्जथ स्वारथ लोभ मोह काहू नहिं करिये।
देह धरे परमाँन[9] स्वामि का[10] कारज सरिए॥
को इतसों लै जात कहा उतसा लै आयौ।
रहै अमर कीर्त्ति पाप नरदेह सु गायौ॥
सुनि सेख दोख थिर नाहि कछु तन मट्टी मिलि जाइये।
का सोच मरन जीवन तना यह लाभ सुजस सों पाइये॥८२८॥
सुनि हमीर कै बचन साह पर सनमुख धाए।
मीर गाभरू बीर आनि निन[11] सीस नवाए॥
अलादीन पतिसाह इतै सिर ऊपरि[12] राजै।
तुम सिर राव हमीर स्वामि आपन[13] कुल लाजै॥
नन तजो नोन की सरत दोउ यह तन तिल तिल खंडिये।
मिलिये जु भिस्ति[14] मैं जाय अब धर्म न अपना छांडये॥८२९॥
हँसि अलावदी साह सेख कौ बचन सुनाए[15]।

१ रक्खि। २ ज्यामन, जाँमन। ३ चऊ। ४ मैं, बिचि।
५ किज्जे। ६ भंग। ७ गवरू, गभरू। ८ इक्क। ९ परमाँन। १० जो।
११ रिस। १२ उप्पर। १३ अप्पनि। १४ बिहस्त। १५ सुभाए।

दिल्ली छाड़ि करि सीस बहुरि मुझको नहिं[1] नाए ॥
मिलो मुझे तजि रोस हुरम मैं तुमको दीनी।
अर गौरखपुर देस देहुँ तुम को सत चीन्हौ[2] ॥
मुसकाय सङ्गि महिमा कहै[3] बचन यादि वै किज्जिये।
जननी जनमे फिरि आनि भव जबै मिलन गन लिज्जिये ॥८३०॥

दोहरा छंद

जब[4] जननी जनमै बहुरि, धरूँ देह कहुँ आनि।
तऊ न तजों हमीर संग, सत्य बचन मम जानि ॥८३१॥
तब सु राव हम्मीर सुनि, कीनो[5] मदति सु सेख।
हजरति महिमा साह को, बात लगावत देखि ।८३२॥
कहै हमीर यह बचन पर, गही साह सों तेग[6]।
लोभ न करिये[7] जीव का, गहो[8] साह सो बेग ॥८३३॥

चौपाई छंद

कहै मीर गभरू ये बातैं।
गहे[9] सार नहिं करिये घातैं ॥
हुकम धनी कै को प्रतिपालो।
आइ अदल्लि सीस पर चालो[10] ॥८३४।
सुनि गभरू के बचन सुभाए।
महिमा फूलि खेत मैं आए ॥
सनमुख सार सम्हाय सु बढ़ै।
माया[11] मोह त्यागि खग कढ़ै ॥८३५॥

---

१ न नवाए। २ अरु गौरखपुर औधि देस दीनो (दिन्नो) सति चीहीं (चिन्हीं)। ३ कही। ४ अब। ५ कीन्ही। ६ तेक। ७ किजिय। ८ तो रहै हमारी टेक। ९ गहौ सार रन कौ रचि घातैं। १० प्रतिपालहु, भालहु अत्यानुप्रास। ११ महिमा।

दोहरा छंद

दोऊ बंधु रिसाइ कै, लई बाग[1] इमि संग ।
उतरि खेत मैं मिलि उभै, कीनौ हरष उमंग ॥८३६॥
मीर गाभरू पाँय परि, हुकम माँगि कर जोरि।
स्वामि काज तन खंडिये, लगै[2] न कबहूँ खोरि ॥८३७॥

हनूफाल छंद

मिलि बंधु दोऊ धयाय । बहु हरष कीन[3] सुभाय ।
अब स्वामि धर्म सुधारि । दोउ उठे बीर हँकारि ॥८३८॥
असमाँन[4] लग्गिय सीस । मनो उभै काल स दीस ॥
इत कोप महिमा कीन्ह । हम्मीर नौन सु चीन्ह ॥८३९॥
उत मीर गभरू आय । मिलि सेख कै परि पाँय ॥
कर तेग बेग समाहि । रहे दुहूँ सेन सचाहि ॥८४०॥
कम्माँन लीन सु हत्थ । जनु[5] सार कार सुपत्थ ॥
धरि स्वामि काज[6] समत्थ । दोउ[7] उभै जुद्ध सपत्थ । ८४१॥
दुहुँ द्वंद जुद्ध सुकीन । मनु जुटे मल्ल नवीन ॥
तरवारि बज्जिय ताय । मनु लगी ग्रीषम लाय ॥८४२॥
कटि चरण सीसरु हत्थ । परि लुत्थ जुत्थ सु तत्थ ॥
घमसाँन थाँन सु धीर । धर धरण(नि) खेलत बीर ॥८४३॥
गजराज लुट्टत भुम्मि । बहु तुरँग परत सु झुम्मि ॥
बिव बीर बज्जिय सार । तरवारि बरसहु[8] धार ॥८४४॥
दोउ भ्रात स्वामि सकाँम । जग मैं किये अति नाँम ॥
दोहुँ बीर देखत हूर । चढ़ि गए मुख अति नूर ॥

---

१ बग्ग । २ लपकत कबहूँ खोरि । ३ कियउ । ४ असमाँन सीस (मत्थ) सुलग्ग (लग्गि) । मनु उभै काल सुजग्ग । ५ बर सार धार सुपत्थ । ६ कज्ज धर्म्म । ७ मनु उब्यो । ८ फरसहु ।

दल दोय दिक्खत बीर। पहुँचे बिहस्त गहीर ॥८४५॥

दोहरा छंद

तिल तिल भे[1] अँग दोहुँन कै, हने बाजि गजराज।
हजरत राव हमीर कै, सबै सँवारे काज॥ ८४६ ॥
मुसलमाँन हिंदवाँन[2] कौ, चले सेख सिर नाय।
चढ़ि बिमाँन दोऊ तहाँ, बिहस्त पहुँचे जाय ॥८४७॥

छप्पय छंद

कहै साह मुख बचन[3] सुनो हम्मीर महाबल।
अब न गहो तुम सार फिरैं हम सकल दिली दल॥
तुम्हैं माफ तकसीर राज रणथंभ करो थिर।
हम तुम बीच कुराँन मुहिम नहिं करो दिलीसुर॥
परगनैं पाँच[4] दीनैं अवर रणतभँवर भुगतो सदा।
जब लग सुराज हमरो रहै तुम सु राज राजो तदा॥ ८४८॥

चौपाई छंद

कहै राव हम्मीर सु बानी।
सुनि दिल्लीस सत्य जिय जानी॥
जाकी अदलि होय किमि मिट्टै।
नर तैं होनहार किमि घट्टै॥ ८४९॥
तुम्हरो दयो राज किन पायौ।
तुम्ह कौ राज कहो किन द्यायौ॥
बेर बेर कहा मुखै[5] उचारो।
कोटि स्याँनपन क्यों न बिचारो ॥८५०॥
कीरति अमर, अमर नहिं कोई।

---

१ भए अंग । २ हितवाँन । ३ बच्च, बैन । ४ पंच दिन्निय । ५ मुक्ख ।

दुर्योधन दसकंध सु जोई[1] ॥
काको गढ़ काकी यह दिल्ली ।
हरि की दई हमैं तुम मिल्ली ॥८५१॥
हम तुम अंस एक उपजाए ॥
आदि पदम रिषि अंग उपाए ॥
देव दोष उर धर भए न्यारे ।
हम हिंदू तुम यवन हँकारे ॥८५२॥
तजिये भोग भूमि कै सबहीं ।
चलिये सुरपुर बसिये अबहीं ॥
सग हमारो पहुँच्यो जाई ।
हम तुम रहैं सबहिं पहुँचाई ॥८५३॥
गहो हथ्यार राज सब छंडो ।
राखो जस तन खंडि विहंडो ॥
अवै चालि सुरपुर सुख मंडो
मृत्युलोक[2] के भोग सु छंडो ॥८५४॥

छंद त्रोटक

यह बात[3] कही चहुवाँन तबै ।
सुनि साह सबै भर पेलि जबै ॥
करि साज सबै रण मंडि महा ।
तिन भारथ पारथ जुद्ध सुहा ॥८५५॥
दल संग चढ़े सब सूर असी ।
सब तोप सु बाँन कमाँन कसी ॥
गजराज अनेक बनाय घने ।
मनो पावस बद्दल मेघ तने ॥८५६॥
हय कंद अमंद सु पोन मनो ।

१ कोउ, जोउ अंत्यानुप्रास । २ मर्त्यलोक । ३ बत्त ।

बहु दाँमनि सार चमंकि भनो ॥
घन गौर[1] सदायन देखतयं ।
ध्वज बैरख मंडल लूरतयं ॥८५७॥
बिरदावत बृंद कविंद घने ।
मनो चात्रक मोर अनंद बने ॥
बगपंति सुदंति अनंत रजे ।
धुरवा करि सुंड छुटे भरजे ॥८५८॥
बहै[2] धार अपार जुधार वही ।
घन घोर सु नौबति नाद वही[3] ॥
कर सोर समोर नकीब चले ।
यह भाँति दोउ दिस[4] बीर[5] मिले ॥८५९॥
करिये हंकार सुबीर चले ।
... ... ॥
कह मीर सिकंदर नेम कियं ।
सिर नाय सुभाय हुकम्म लियं ॥८६०
पहलै पुर जाय सु बीर भगं ।
रणथंभ कहा हजरत्ति अगं ॥
तुम सेर कर्यौ वह आप जथा ।
अब देखहु मोर सुहाथ जथा ॥८६१॥
सु जमीति खधार लई सवही ।
अरु मीर सिकंदर आय[6] सही ।
करि कोप सिकदर मीर चढ़े ।
तब राव हमीर कै भील कढ़े ॥८६२॥
तब भोज कही अब मोहिं कहो ।

---

१ घन घोर । २ वह सार अपार सु धार हुई । ३ जुई । ४ दल । ५ बोर । ६ आ पठई ।

इतने अब हत्थ हमार लहो ॥
तब राव कही रणथम्भ अगै।
दुइ(रहु) जैत अगै सिर भील तगै ॥८६३॥
अर जैत सरन्नि सुराखि तवै।
सरि कौन करै तुम्हरी जु अवै ॥
तुम संग रतन्न चितोर गढ़ं।
चढ़ि जाहु हमार जु काज वढ़ं ॥८६४॥
सुनि भोज इसे कहि वैन तवै।
यह सीस तुम्हार निमित्त[1] अवै ॥
रणथंभहिं हेत जु सीस दिवै।
अब ओर कहा बिन राव जिवै ॥८६५॥
यह औसर फेर बनै कबहीं।
हजरत्ति हमीर मिलै जबहीं ॥
कहि बत्त इती जु सलाँम करी।
अपनी सब लीन जमीन[2] खरी ॥८६६॥
सब भील कसे हथियार जबै।
निकसे कढ़ि भोज अमाँन तवै ॥
कमठा[3] कर तीर सम्हार उठे।
उत मीर सिकंदर आय जुटे[4] ॥८६७॥
बजि घोर निसाँन प्रमाँन[5] मिले।
दल कोप करे वहु तोप चले ॥
घमसाँन जुबान कियौ तबहीं।
दुहु सैन सुऐन बने जबहीं ॥८६८॥
गजराज हरौल करे बलयं।

१ निमत्त, निमत्य। २ जमीति। ३ कमठार कुढार। ४ उठे, बुठे।
५ अमाँन।

उत सार अपार कढ़े दलयं ॥
सजि भील अनी सुघनी हलकौ ।
कसि गातिय[1] कोप कियौ बलकौ ॥८६९॥
कमठा कर धार अपार बलं ।
तब भोज मिल्यौ तहँ साह दलं ॥
नट कूदत[2] जानि सु ढोल सुरं ।
बहै[3] तीर अमीर सुजानि छुरं ॥८७०॥
करि कोप तबै गजदंत कढ़े ।
मुरि मूरिय धूरि उपारि बढ़े ॥
सब भीलन[4] मत्त सुकोप कियं ।
जनु भाल बली मुख लंक लियं ॥८७१॥
जनु मार अपार कटार चलैं ।
बहु मीर अमीर रु भील मिलैं ॥
हजरत्ति सराहत भोज बलं ।
जनु मानव रिच्छ भिरत्त दलं ॥८७२॥
दोउ भोज सिकंदर मीर जुटे ।
मुख बानिय मीर अमीर रटे ॥
जब भोज कहै करि वार तुहीं ।
कहै मीर सिकंदर बूढ़ तुहीं ॥८७३॥
अब तोपर वार कहा करिये ।
सब लोक अलोक महा भरिये ॥
तब भोज स कोप कियौ रण मैं ।
करि कोप कटार दियौ तन मैं ॥८७४॥
तन कंगल भेदि धरन्नि पर्‌यौ[5] ।
किरवाँन चलाय स मीर हर्‌यौ[6] ॥

---

१ कागति । २ कुद्दत । ३ बहु । ४ भिल्लन । ५ धस्यौ । ६ हँस्यौ ।

सिर भोज परयौ धरनी[1] तल मैं।
धर धावत रुंड लरै[2] बल मैं ॥८७५॥
उत मीर सिकंदर भूमि परे[3]।
बर हूर[4] सुदूर सुआनि बरें॥
परि खेत खधार अपार सबै।
बिन सीस पराक्रम भोज अबै ॥८७६॥
भजि साह अनी तजि खेत तबै।
परि भोज समाज सबीर सबै॥
कसमीर अमीर सहस्र पची।
सुमिले[5] धर धूर अली सु सची ॥८७७॥
तहाँ भोज स साथि हजार भले।
बरि बाल सबै सुर लोक चले ॥८७८॥

दोहरा छंद

परे भोज सँग भील भर, सहस दोइ इक ठौर।
सहस पचीस कसमीर कै, अरुपँधार भर मौर[6] ॥८७९॥
सहस तीस षंधार कै, ओर सिकंदर मीर।
अली सयद[7] कै संग भट, परे मीर[8] दस भीर ॥८८०॥
भजी फौज पतसाह की, विकल सकल उमराव।
दोय सहस भट भोज सँग, रहे खेत करि चाव ॥८८१॥

चौपाई छंद

राव हमीर भोज ढिँग आए।
देखि[9] सु भोज नैन जल छाए॥
तुम सब अमर भए कलि माहीं।

---

१ धरनित्थल। २ भुम्मि लरै चल मैं। ३ भुम्मि गिरे। ४ हूरन। ५ उलटी भइ सेन दिलीस बची। ६ और। ७ सैद। ८ पीर। ९ देखि भोज भरि द्रग जल छाए।

स्वामि काँम सब देह सराहीं ॥८८२॥
जो न सिकंदर साह जु आए ।
राव हमीर कै सनमुख धाए ॥
देखि साह आपन दल भज्जै ।
हजरति देखि हमीरह लज्जै ॥८८३॥
राव हमीर खेत महिं ठाढ़े ।
हजरति अंग कोप अति बाढ़े ॥
कहै साह तब कोप सु बैनं ।
फिरे सकल नीचे कर नैनं ॥८८४॥
सर्बसु भूमि[1] भोग कर नीके ।
जंग समय लालच कर जीके ॥
भगे जात जीवत महिं अबहीं ।
गई बात[2] बीरन की सबहीं ॥८८५॥
सुन ये बैन बीर खिसयाने ।
राव हमीर सु जुद्धहिं ठाने ॥
जैन सिकदर साह अमानो ।
अरु षंधार भीरु[3] सब जानो ॥८८६॥
यह हम्मीर राव चहुवाँन ।
जुरे जुद्ध मनु काल समाँनं ॥
तोप तुपक चद्दर सब दग्गिय[4] ।
कर कृपाँन चहुवाँन सु जग्गिय[5] ॥८८७॥

भुजगप्रयात छंद

परे दोय हज्जार भीलं[6] समत्थं ।
तहाँ च्यारि ओरं गिरे खेत सत्थं ॥

---

१ भुम्मि । २ बूड़ि । ३ मीर । ४ दागी, त्यागी । ५ जागी ।
६ मिल्लं ।

परे कासमीरं सहस्त्र पचीसं।
अली सेर मीरं परे संग दीसं ॥८८८॥
तबै साह कोपं किये बैन रीसं।
फिरे बीर लज्जा समेतं सुदीसं॥
तबै राव हम्मीर कोपे सुजाँनं।
चले[1] संग चहुवाँन बलवाँन राँनं॥८८९॥
लिये सेन षंधार दो लक्ख जामी।
जबै जैन साहं सिकंदर सु नामी॥
इतै राव हम्मीर कम्माँन लीनी।
मनो परथ भारत्थ सारत्थ कीनी॥८९०॥
लगैं तीर ऊगं हुवे पार गज्जैं।
परैं पील भुम्मी[2] सु घुम्मैं गरज्जैं॥
कहूँ पक्खरं[3] बाजि फूटैं[4] सरीरं।
छुटैं प्राण बाँन सु लागंत तीरं[5]॥८९१॥
जुरे जंग मीरं अमीरं सु चौजं।
इतै राव हम्मीर उत्त[6] साह फौजं॥
चढ़े[7] राव के रावतं जो अमानै।
बनै बंगलं अंग जंगं सु ठानैं॥८९२॥
करैं रंग के अंग बानै अनेकं।
घने केसरं साज लीने सु तेकं॥
किते बीर तोरा तबल्लं बनाए।
घने नेत बंधं गजं गाह लाए॥८९३॥
किते मौर बंधं सजे केसराँनं।
किते बीर बाँके चढ़े चाहुवाँनं॥

---

१ चढ़े। २ भूमैं सु चक्कार भब्बैं। ३ पाक्खरं। ४ फुट्टैं। ५ मनो मेघ पावस्स बूदंत नीरं। इसे राव के हत्थ लागंत तीरं। ६ तैं। ७ बढ़े।

पढ़ैं पाहि[1] बंदीजनं बृंद भारे।
मनो राति जोरंत टूटंत तारे ॥८९४॥
उठी उद्ध मोक्षं लगी नैन आई।
उठे रोम अंगं सुजंगं मचाई ॥
उतै साह कीने[2] घने गज्ज अग्गैं।
मनो पाय चल्लैं पहारं सु मग्गैं ॥
तिन्हैं उप्परैं साह[3] कैं बीर धाए।
गही तेग हत्थं उरं कोप छाए ॥८९५॥
इतै राव चहुवाँन कै बीर कोपे।
मनो आजही साह कै बीर लोपे ॥
गजैं सो हमीरं लखैं खेत राजैं।
सबै सूर बीरं निसाँनं सु बाजैं ॥८९६॥
किते चाहुवाँनं पिले डाल पीलं।
उठावंत मारंत पारंत डीलं ॥
कहूँ सुंडि पै तेग बाहंत ऐसा।
मनो रंभ षंभं कढ़ैं तेग जैसी ॥८९७॥
कटैं दंत मातंग भाजत[3] जंते।
गहैं पुच्छ सुड्डं पटक्कंत केते ॥
परैं पील पब्बय मनो खेत भारी।
बहैं रक्त[4] घावं मनो घाव कारी ॥८९८॥
तिहीं काल कबिराज उप्पम बिचारी।
बहैं स्याँम पब्बै सु गेरू पनारी ॥
किते बाजि राजं पटक्कंत भूमैं।
भए अंग भंगं खरे घाव घूमैं ॥८९९॥
कढ़ी तेग बेगं लपट्टं सु जानो।

१ ताहिं। २ कीनं। ३ भज्जंत। ४ रत्त।

मनो ग्रीषमं लाय लग्गी सुमानो ॥
जुटे बीस बीरं गहीरं सु गज्जैं ।
भजे कायरं[1] खेत छंडे सु लज्जैं ॥६००॥
कटे सीस बाहू कहूँ पाव ऐसे ।
बहैं सेग बेगं मनो डार जैसे ॥
लगैं कंध ग्रीवा तबै सीस टूटै[2] ।
परैं सीस धरनी तबै रुंड झूटैं[3] ॥६०१॥
घने सीस तर्बूज से भुम्मि डारैं ।
लरैं रुंड खेतं सिरं हक्क[4] मारैं ॥
बहैं बाँन किरवाँन[5] बज्जन्त[6] सारैं ।
मनो काठ काटंत[7] कट्ठे कुह्वारैं ॥६०२॥
बहैं सील अंगं परैं पार होई ।
मनो रुंड मैं नाग लपटंत सोई ॥
कटारी लगैं अंग दीसंत पारं ।
मनो नारि मुग्धा कढ्यौ पानि बारं ॥६०३॥
छुरी वार सूरं करैं जार ऐसे ।
मना सपनो पुच्छ दीखंत जैसे ॥
लगैं जोर सों यों विषाणं जवाँन ।
हुवे अंग पारं जुटैं जर बाँनं ॥६०४॥
भए लथ्थ वथ्थं दुहूँ तन ऐसे ।
मनो यों अषारे भिरे मल्ल जैसे ॥
पछारैं उखारैं भुजा सीस सूरं ।
उछारैं[8] हँकारैं उठैं[9] बीर नूरं ॥६०५॥
मची मांस मेदं धरा कीच भारी ।

---

१ कातरं । २ टुट्टैं । ३ झुट्टैं । ४ हाँक । ५ कम्माँन । ६ बाजंत । ७ कट्ट, कट्टंत । ८ उछल्लैं, हकल्लैं । ६ उडैं ।

चली क्रुट्ठि खेतं नदी मैं[1] अकारी ॥
बनैं कूल पीलं सुडीलं सु बज्जी ।
बहै बांच[2] लोहू जलं धार गज्जी ।९०६॥
रथं चक्र आवर्त्त सो भौंर मानो ।
घनं षंस वेला कुलं रूप मानो ॥
नरौ ग्राह पावं करं खर्प जैसे ।
बनी अंगुरी मीन झींगा सु तैसे ॥९०७॥
बहैं सीस इंदीवरं जानि फूले[3] ।
खुले नैन यों चंचरीकं सु भूले ॥
सिवालं सु केसं सुबेसं विराजैं ।
बने घाट बीसों खरे सूर गाजैं ॥९०८॥
भरैं जुग्गनी खप्परे सूर लोही ।
मनो ग्राँम बामा पनीहार सोही ॥
करैं केलि भैरव हरं संग काली ।
मनो न्हात वैसाष कात्तिक्रवाली ॥९०९॥
इसे घाट औघाट[4] किन्ने[5] हमीरं ।
डरैं कायरं[6] साह कै मीर पीरं ॥
भजी साह सेना सबै लाज डारी ।
भिरे खेत चहुवाँन गज्जंत[7] भारी ॥९१०॥
किते गिद्ध जंबू करालं सु चिल्ली ।
बगं[8] हंस केते बिहंगं सु मिल्ली ॥
परे खेत साहं सिकंदर सु नामी ।
सवा लक्ख खंधार कै मीर बामी ॥९११॥
गिरे खेत हथ्थी[9] सतं पौन ऐसे ।

---

१ बह । २ बिचि । ३ फुल्ले, भुल्ले अंत्यानुप्रास । ४ घट्ट औघट्ट । ५ कीने । ६ कातरं । ७ गाजंत । ८ बकं । ९ हाथी ।

मनो पर्वतं[1] अंग दीखंत जैसे ॥
कसे साठि[2] हौदा परे खेत माहीं ।
ज़रावं जरं कंचनं के सुमाहीं । ६१२॥
परे डंबरं सौ कई गज्जराजं ।
कई प्राणहीनं कई मो समाजं ॥
परे सत पचं निसानन्नवारे ।
किते फगज्जराजं परे खेत भारे ॥९१३॥
सवा लक्ख बाजी परे जे अमाँनं ।
परे खेत साहं सिकंदर सुजाँनं ॥
तिनै साह[3] लक्खं पँधारं सवायं ।
परे एक[4] लक्खं दिलीसं सुपायं ॥९१४॥
दुहूँ इक्क[5] मीरं परे खेत नामी ।
कहूँ नाँम ताकै परै खेत बामी ॥
परे दूसरे मीर सिर खाँन भारी ।
रहे खेत महरम्म खाँनं सुधारी ॥ ९१५॥
परे जौमजादेन से मीर नामी ।
मोहोबत्त मुदफ्फर परे इक्क ठामी ॥
परे नूर मीरं अफरस्स धोरं, ।
बली इक्क निज्जाँम दीनं सु पीरं ॥९१६॥
परे मीर एते दुहूँ खेत सूरं ।
वहै नोर ज्यों रत्त[6] बाहंत कूरं[7] ॥
नची जुग्गनी और भैरव सु नच्चैं ।
भखैं गिद्ध आमिष्ष जंबू सु रच्चैं ॥९१७॥
थके सूर रथ्थं सु जाँमं सवायं ।
महाबीर घायं स घूमंत तायं ॥

---
१ पव्वयं । २ सट्ठि । ३ सात । ४ इक्क । ५ एक । ६ रक्त । ७ सूरं, पूरं ।

बरैं अच्छरी सूर[1] बीरं सु अच्छे।
खुले मोच्छ[2] द्वारं प्रबेसंत गच्छे ॥९१८॥
भयौ मंडलं कुंडलं भाँन नद्दं।
कढ़े सूर बीरं सु धीर उपद्दं॥
महा रौद्र भौ खेत देखत जानो।
कियौ अद्भुतं देव सो जुद्ध मानो[3]।९१९॥
परे खेत खंधार मीरं सु राते।
इके लक्ख हज्जार पंचास[4] जाते॥
इतै सूर हम्मीर कै सहस च्यारं।
सु तो बीर धीरं खुले मोच्छ द्वारं॥९२०॥

दोहरा छंद

तब हमीर हर ध्याँन करि, हर हर हर उच्चारि।
गज निज सनमुख[5] पेलि कै, जुरे[6] साह सों रारि॥९२१॥

त्रोटक छंद

गजराज हमीर सु पेलि[7] बरं।
मुख तै उचरंत सु भाव हरं॥
किरवाँन[8] कढ़ी बलवाँन हथं।
सनमुक्ख सु साहि सु बोलि[9] जथं॥९२२॥
सुनिये सु अलावदि बैन अयं।
करि द्वंद सु उद्ध सु जुद्ध धयं॥
सब सेन कहा करिहैं सु सुधं।
हम आपन[10] इक्क[11] करैं सु जुधं॥९२३॥
दुहुँ ओर उछाह अथाह सजे।

१ आय। २ मोच्छि। ३ जानों। ४ पच्चीस। ५ सम्मुख पिलि कै। ६ जुरिग, जुरिउ। ७ पिल्लि। ८ कम्माँन चढ़ी। ९ बुल्लि गथं। १० अप्पन। ११ एक।

हजरत्ति सु कोप अकथ्थ[1] रजे ॥
सनमुक्ख हमीर सु आय[2] जुटे।
सब सथ्थ जथारथ बेग[3] हटे ॥९२४॥
तिहिं खेत[4] खरे[5] चहुवाँन नरं।
पतिसाह सबै दल भज्जि[6] भरं ॥
रहे मीर उजीर कछूक तबै।
चहुवाँनन कै दल देखि[7] जबै ॥९२५॥
पतिसाह कही यह कौन बनी।
सब सैन बड़ी[8] चहुवाँन तनी ॥
तब मंत्र वजीर सु एमि कह्यौ[9]।
तुम मित्र सदा गुन जानि लह्यौ ॥९२६॥
सुनिराव सु दूत पठाय दयौ।
चहुवाँनन सों हित जानि ठयौ ॥
अब[10] विग्रह छाड़ि[11] सु संधि करो।
चहुवाँनन सों हित जानि डरो[12] ॥
अपराध हमैं सब दूरि करो।
तुम होहु अभै हम कूच धरो ॥९२७॥
नृप सों चर जाय कही तबहीं[13]।
सुनि राव यहै मुख वत्त[14] कही ॥
अब खेत चढ़े कछु संधि नहीं।
यह वत्त हमारि सुजानि सही ॥९२८॥
रिपु तैं बिनती[15] सुइ कातरता।

---

१ अगत्थ। २ आनि। ३ देखि। ४ अत्त, अत्थ, अर्थ। ५ अरे। ६ भाजि। ७ दिक्खि, पिक्खि। ८ बढ़ी। ९ कियौ, लियौ अंत्यानुप्रास। १० व्यग्रह। ११ छंडि। १२ दुहुँ ओर महा सुख भूरि भरो। १३ जबही। १४ बात। १५ बिन्नति।

अब[1] बृत्त कहे छल चातुरता ॥
अब जाहु यहाँ हम सेन सजी ।
त्रिन साह को जुद्ध करंत लजी ॥९२९॥

वचनिका

अब राव हम्मीर दूत कौं नीति सहित[2] उत्तर दियौ अरु युद्ध को उच्छाह कियौ आपणां उमरावों सों कही आयुध[3] छत्तीस[4] सों च्यारि आवधां सूं युद्ध कीजे[5] अर जग मैं अमर जस लीजे ॥ तोप, बाण, चादरि, हथनालि, जंबूर, बंदूक, तमंचा, कमाँन, सेल इन[6] नै त्यागो । अरु आयुध च्यारि लीजे । तरवारि, छुरी, कटारी, बिषाण, मल्ल युद्ध करि हजरति नै हाथ दिखावो तौ सायुज्य मुक्ति पावो ॥ पातसाह की ज्यान बखसीस करो और अच्छरी[7] बरो यह हम्मीर की आज्ञा माथै धरि राव हम्मीर कै उमरावाँ केसरिया साज बणाया अरु सेहरा बाँधि पातसाह की फौज परि हाँको[8] कियौ ॥

त्रोटक छंद

कछु जंत्र न तोप न कंत[9] नहीं ।
तजि चापन चक्रन बाँन जिहीं ॥
किरवाँन[10] लई कर बाजि चढ़े ।
चहुवाँन अमाँन सुखेत बढ़े ॥९३०॥
उत मीर बजीर रु साहि निजं ।
करि कोप तबै पतिसाह सजं ॥
तरवारि दुधार अपार बहै ।
सब साहि सु सैन समूह दहै ॥९३१॥

---

१ अरु बृत्थ (व्यर्थ) । २ संजुक्त । ३ आवुध । ४ छः तीस मैं । ५ किजिये । ६ यन । ७ अप्छरा । ८ हल्लो । ९ रुकंत । १० कम्माँन ।

कटि ग्रीव भुजा धर यों विफरे[1]।
मनु काटि करे रस कुत्त हरे॥
उड़ि राथ्थ परे धर रुंड उठे।
[2]चहुवाँन धरासह धार उठे॥९३२॥
सिर मारत हाँक[3] परे धर मैं।
धर जुज्झत जुद्ध करै अरमैं॥
कर जोर कटार सु अंग वहैं।
बहु खंजर पंजर देह दहैं॥९३३॥
बहु रंचक[4] मुष्ट कबध्य परैं[5]।
मल जुद्ध समुद्ध सुबीर करैं॥
पचरंग अनग्गिय खेत बन्यौ।
वकसी[6] तव साह सों वैन भन्यौ॥९३४॥
भयभीत सु साह की फौज[7] भगी।
घमसाँन मसाँन सु ज्योति जगी॥
परियो वकसी लखि नैन तबै।
उलटो गज कीन[8] सु साह जबै॥९३५॥
इक संग उजोर[9] न और नरं।
फिरि रोकिय[10] साह अनंत भरं॥
चहुवाँन धरम्म सु जानि कहै।
यह मारत साहि सु पाप अहै॥९३६॥
अभिषेक लिलाट कियौ इन कै।
महि ईस कहावत है तिन कै[11]॥
धरि अग्र[12]सु साह को पील जबै।

---

१ बिहरे। २ बहु श्रोण धरा जु अपार उठे। ३ हक्क। ४ रंजक। ५ भरैं। ६ बकसी नृप साहि कौ आप हन्यौ। ७ सैन। ८ किन्न। ९ वजीर। १० रुक्किय। १२ विनके। १२ अग्ग।

जहँ राव हमीर सु लाय पगे ॥९३७॥
अब साहि सु राव कही तबहीं।
तुम जाहु दिली न डरो अबहीं॥
लखि साह कौ लोग मुरकि चल्यौ।
नृप आप हमीर सु खेत झिल्यौ ॥९३८॥

वचनिका

राव हम्मीर का उमरावाँ तरवारि कटारियाँ सों जुद्ध कियौ[1] पातसाह का अमीर उमरावाँ सूं मल्ल जुद्ध कर्‌यौ[2] तदि[3] पातसाह की फौज[4] विकल होकर पातस्याह तैं छोड़ छोड़ भागी हम्मीर की रावताँ पातस्याह ने हाथी सुद्धां घेरि ल्याया॥ हम्मीर कै आगे ल्या खड़ो कर्‌यौ। राव हम्मीर पातसाह ने देखि आपणाँ रावताँ सों कही यानै छोड़ देओ यह ने पृथ्वीस कहै छै या अदंड छै॥ यह सुनि पातसाह ने छोड़ दियौ[5]। पातसाह ने उह की फौज मैं पहुँचाय दियौ। पतसाह वहाँ से खेत छोड़ कूँच कियौ[6]॥

दोहरा छंद

छाड़ि खेत पतसाह तब, परे[7] कोस द्वै जाय।
इसम सकल चहुवाँन न, लीनौ[8] तबै छिनाय ॥९३९॥
लिये साह नीसाँन तब, बाना जिते बनाय।
और सम्हारि सु खेत कौ, घायल सोधि उठाय ॥९४०॥
सब कै जतन कराय कै, देस काल सम आय।
राव जीति गढ़ कौ चले, हर्ष न हृदय समाय ॥९४१॥
बिन जाने नृप हर्ष मैं, गए भूलि[9] यह बात।

---

१ कीधौ। २ बादसाह का अमीर उमरावाँ सूं मल्ल जुद्ध करि छुरी कटारी सों रंजका कौ प्रहार कर्‌यौ। ३ सजीभूत। ४ सेन। ५ दीधौ। ६ कीधौ। ७ परिय। ८ लिन्नौ। ९ भुल्लि।

साह निसाँन सु अग्र[1] करि, चले भवन हर्षांत ॥६४२॥

पद्धरी छंद

भगि साह सेन जुत उलट आय।
तजि विविध भाँति बाना[2] जु ताहिं ॥
सब साह हसम लीनी छिनाय।
नृप सकल खेत सोधो कराय ॥६४३॥
बजि दुंदुभि जय जय धुनि सु आय।
सब घायल नृप लीने उठाय[3] ॥
करि अग्ग[4] साह नीसाँन भुल्लि।
लखि भूप हसम हर कह्यौ फुल्लि ॥९४४॥
सब राज लोक तिय जिती जानि।
सब सार परस्पर हरी[5] आनि[6] ॥
चहुवाँन दुग्ग किन्नौ प्रवेस।
यह सुनिय राव तिय मरन सेस ॥९४५॥
चहुवाँन आनि देख्यौ सु गेह।
सिव बचन यादि कीनौ सु येह ॥
नृप सकल संग कौ सीख दीन।
रावत्त राण मंत्रो प्रवीन ॥६४६॥
तुम जाहु जहाँ रतनेस आय।
किज्जे न सोच नृपता बनाय ॥
चहुवाँन राय हम्मीर आय।
हर मँदिर महँ प्रविसंत जाय ॥९४७॥
करि पूजन भव[7] गणपति मनाय।
बहु धूप दीप आरति बनाय ॥
हो गिरजा गणपति सु मम देव।

---

१ अग्ग। २ नाना। ३ उचाय। ४ अग्र। ५ हनी। ६ पानि। ७ बहु।

तुम जाँनत हो मम सकल भेव ॥९४८॥
अपबर्ग देहु तुम नाथ सिद्धि।
तन छत्र धम्मं दीजे[1] प्रसिद्धि ॥
करि ध्याँन संभु निज सीस हथ्थ[2]।
नृप तोरि कमल ज्यों किय अकथ्थ ॥९४९॥
यह सुनिय साह निज स्त्रवण बात।
चलि हर मँदिर कौ साह आत ॥
जलधार नैन लखि राव कर्म्म।
कहि साहि मोहि दीनौ न मर्म ॥९५०॥
कछु दियौ हमें उपदेस नाहिं।
तुम चले आप बैकुंठ माहिं ॥
तुम अभय बाँह दीनी जु सेष।
जुग जुग नाँम राख्यो बिसेष ॥९५१॥
अरु महादानि तुम भए भूप।
इच्छा सदाँन दीने अनूप ॥
जगदेव मोरध्वज तैं बिसेष।
जस जयौ लोक तुम रक्खि लेख ॥९५२॥

वचनिका*

......आगै (अग्गै) साह कै नीसान देखि राणी आसमती आपणा परिवार समेति परस्पर प्रहार करि खंग (खग्ग) प्रहार कर्‌यौ। जोहर करि देह त्यागी। सो राव हम्मीर ब्यौरो सुन्यौ और सिव कै वचन यादि कर्‌यौ। और यह निस्चय

---

१ दिजिय। २ मत्थ।

* हस्तलेख में एक पन्ने के न होने के कारण पूरी वचनिका नहीं दी जा सकी।—संपादक

जानी कि बर्ष चौदह १४ पूरे भए गढ़ की अवधि पूर्ण हुई तातैं यह सरीर राखनो (रक्खनो) उपहास्य है और छिन भंग सरीर को राखनो आछयौ नहीं। यह बिचारि सिव कै मंदिर गए और आप एक सेवग कनै राखि सिव को षोड्स प्रकार पूजन कर्‌यौ और यह बर्दान माँग्यौ कि हे सिव तुम ईस्वर हो। सेवक हृदय कै जाननहारे हो और सबकै प्रेरक हो तातैं हम्मीर (हमरी) यह प्रार्थना है मुक्ति दीजे तो सायुज्ज्य दीजे। जन्म जन्म बिषैं छत्रीकुल मैं जन्म पाऊँ यह कहि कै खंग (खग्ग) आप हाथ ले कै सीस उतार्‌यौ सिव पिंडी पै चढ़ाय दियौ तब सदासिवजी प्रसन्न होय कै आसीर्बाद दियौ तिहारे कुल की जय होय॥

दोहरा छंद

साह कहत हम्मीर सौं, लेहु मोहि अब संग।
धर्म रीति जानो सु तुम, सूर उदार अभंग॥९५३॥

पद्धरी छंद

मुसकाय सीस बोल्यौ सु बानि।
तुम करो साह मम बचन कानि॥
हम तुम सु एक जानो न और।
तजि मोह देह त्यागो सु तौर॥९५४॥
लीजे[1] सुझाँफ सागर सु जाय।
तब मिलै आप[2] अप्पै सु आय॥
यह कहिस सीस सुख मूँदि होत।
तब साहि ग्याँन हृद भौ उदोत॥९५५॥
उठि साह सीस बदन सु कीन।
करि प्रणाम संभु को ध्यान लीन॥

---

१ लिज्जिय। २ अप्प।

हजरत्त[1] आय डेरै सु तब्ब।
उज्जीर मीर बोले[2] सु सब्ब ॥९५६॥
तुम जाहु सकल दिल्ली सथाँन।
अलबृतहिं राज दीजे सु आँन ॥
नहिं करो मोर अज्ञा सु भंग।
सेवक्क धर्म्म यह है अभंग।९५७॥

दोहरा छंद

आयसु पाय सु साह की, चढ़े सकल सजि सैन।
महरम खाँ उज्जीर तब, आए[3] दिली सु ऐन ॥९५८॥
दयौ राज सिर छत्र धरि, अलाबृत्त तिहिं काल।
घरि घरि अति आनंद जुत, यह बिधि प्रजा सुपाल ॥६५९॥
रणतभँवर कै खेत कौ, कीनौ सकल प्रमाँन।
प्रथम हने रणधीर ने, बहुरि सेन परिवाँन ॥६६०॥
दोय लक्ख रूमी परे, दोऊ कुँवर उदार।
सेन आरबी[4] की जिती, हनी जु असी हजार ॥९६१॥
हने मीर द्वै सत सतरि, और सिकंदर साह।
अट्ठ[3] लक्ख खंधार कै, हने मीर निज आह ॥९६२॥
सवा सहस गजराज[5] परे, दोय लख बाजि प्रसिद्ध।
द्वादस लख सेना प्रबल, हनी हमीर सुसिद्ध ॥९६३॥
मस्तक राव हमीर कौ, किय[6] सुमेर हर आप।
मुक्ति[7] द्वार सबई खुले, बिद्या बर्ष सुथाप ॥ ६४॥

छप्पय छंद

बिदा कीन[8] उज्जीर कूँच[9] दिल्ली कौ कीनौ[10]।

१ हजरत्ति। ४ कुल्ले। २ आयउ दिल्लिय ऐन। ३ अरब्बिय।
४ अट्ठ। ५ गजमत्त। ६ कियौ। ७ मोक्खि द्वार सब खुल्लिये।
८ कियउ। ९ कुच्च। १० किन्नव, लिन्नय अंत्यानुप्रास।

तब सुसाह तजि संग बचन हजरत को लीनौ ॥
सेतबंद पर जाय पूजि रामेस्वर नीकै ।
परे सिन्धु मैं जाय करे मन भाते जी कै ॥
उर्वसी साह हम्मीर नृप सेख मीर सब नाक गय ।
करि लोकपाल आदर अखिल जय जय जय हम्मीर कय ॥९६५॥
मिले स्वर्ग मैं जाय साह हम्मीर हरक्खे ।
महिमा मीररु बाल विविध मिलि सुमन बरक्खे ॥
जय जय जय हम्मीर सकल देवन मुख गाए ।
लोक अमर कीरत्ति मुक्ति परलोक सुपाए ॥
माणिक्क[1] राव चहुवाँन कुल दैन खड्ग[2] दोऊ[3] धरत ।
कहि जोधराज यह बंस मैं ननकारी नाहिंन करत ॥९६६॥

दोहरा छंद

सुनत राव हम्मीर जस, प्रीति सहित नृप चंद ।
मनसा बाचा कर्मना, हरे जोध कै द्वंद ॥९६७॥
चंद्र नाग बसु पंच गिनि, संबत माधव मास ।
सुक्क सु त्रतिया जीव जुत, ता दिन ग्रंथ प्रकास ॥९६८॥
भूपति नीवागढ प्रगट, चद्रभाँन चहुवाँन ।
साँम दाँम अरु भेद जुत, दंडहिं करत खलाँन ॥९६९॥

इति श्रीमन्महाराजाधिराज-राजराजेंद्र-श्रीमदखिल-चाहुवाँन-कुल-तिलक नीमराना-धिपति श्रीमहाराजा चद्र-भाँनजी-देवाज्ञया कवि जोधराज विर-चितं यवनेश अलावदीन प्रति हम्मीरजुद्धं समाप्तम्

१ माणिक्य । २ खग्ग । ३ उद्धरत ।